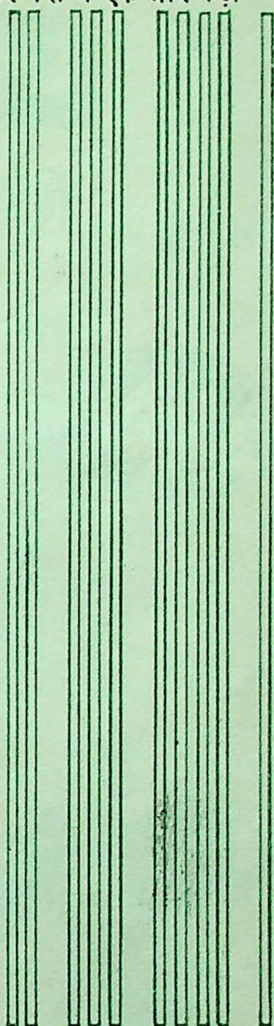
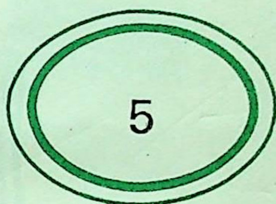
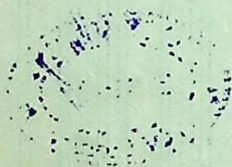
चन्द्रकान्ता व चन्द्रकान्ता-सन्तति की परम्परा में एक और कड़ी—





भूतनाथ

[इक्कीस भाग, सात खण्डों में]



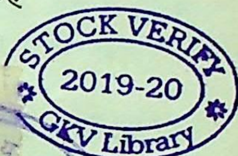


भूतनाथ

बाबू देवकीनन्दन खत्री

खण्ड पांच

भाग—तेरह से पंद्रह





शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली-110002

संस्करण

शारदा प्रकाशन से प्रथम : 1987

मूल्य

प्रत्येक खण्ड (तीन भाग) : 50.00 रु०
सम्पूर्ण सैट (सात खण्ड, इक्कीस भाग) : 350.00 रु०

ISBN—81-85023-56-5

मुद्रक

1. चौपड़ा प्रिंटर्स, दिल्ली-110032
2. सविता प्रिंटर्स, दिल्ली-110032
3. हरिकृष्ण प्रिंटर्स, दिल्ली-110032

प्रकाशक

शारदा प्रकाशन
16/एफ-3 अंसारी रोड,
दरिया गज, नई दिल्ली - 110002

विजयदेव झारी द्वारा शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित
आवरण सज्जा – श्री चेतन दास,
एवं आवरण मुद्रण – गणेश प्रेस, दिल्ली - 31, द्वारा

Bhootnath by Babu Devkinandan Khatri
A most famous Hindi Novel of 21 parts published in 7 vols.

तेरहवाँ भाग

1

सूर्योदय होने में यद्यपि अभी विलम्ब है फिर भी ठण्डी-ठण्डी दक्षिणी हवा का चलना प्रारम्भ हो गया है और वह पलंग पर पड़े रहने वालों को नींद में मस्त कर रही है.

खास बाग महल के अपने सोने वाले कमरे में गोपालसिंह सुन्दर पलंग पर लेटे हुए हैं. एक पतली चादर उनके बदन पर पड़ी है पर सिर्फ गर्दन तक, मुँह का हिस्सा खुला हुआ है. वे सोये हुए नहीं हैं बल्कि अभी-अभी उनकी आंख खुली है और वे पलंग पर लेटे ही लेटे खिड़की की राह नीचे के नजरबाग पर निगाहें डाल रहे हैं.

यह छोटा-सा नजरबाग महल से सटा हुआ और खास बाग के दूसरे दर्जे में है. हमारे पाठक चन्द्रकान्ता सन्तति में इस खास बाग और इसके चारों दर्जों का हाल अच्छी तरह पढ़ चुके हैं अस्तु यहाँ पर उसका हाल लिखने की कोई जरूरत नहीं है हाँ इतना कह देना आवश्यक है कि तीसरे दर्जे में बने हुए ऊंचे बुर्ज का एक भाग उस खिड़की में से दिखाई पड़ रहा है जिसके सामने गोपालसिंह का पलंग बिछा हुआ है.

इधर-उधर निगाहें दौड़ाते हुए यकायक गोपालसिंह कुछ चौंक से गये और तब तकिया के सहारे उठ कर गौर से नीचे की तरफ देखने लगे. थोड़ी देर बाद वे पलंग पर उठकर बैठ गए और जब इससे भी मन न माना तो पलंग छोड़ खिड़की के पास आकर खड़े हो नीचे की तरफ देखने लगे. अब हमें भी मालूम हुआ कि जिसने उन्हें ऐसा करने पर मजबूर किया है वह एक कमसिन औरत है जो नीचे बाग की रविशों पर इधर-उधर घूम रही है. गोपालसिंह कुछ देर तक खिड़की के पास खड़े सोचते रहे कि वह कौन औरत होगी या उसे यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ सकती है. पहिले तो उनका ख्याल महल की लौंडियों की तरफ गया पर थोड़ी देर में विश्वास हो गया कि यह उनके महल से सम्बन्ध रखने वाली कोई औरत

नहीं है क्योंकि घूमते ही फिरते वह चमेली की एक झाड़ी के पास पहुंची और उसकी आड़ में कहीं लोप हो गई. कुछ देर तक गोपालसिंह इस आशा में रहे कि वह झाड़ी के बाहर निकलेगी पर जब देर तक राह देखने पर भी उसकी सूरत दिखाई न पड़ी तो उन्होंने आपही आप धीरे से कहा, "उस झाड़ी में से तो तीसरे दर्जे में जाने का रास्ता है, कहीं वह वहीं तो नहीं गई है !" मगर इस ख्याल पर भी उनका मन न जमा क्योंकि वे विश्वास नहीं कर सकते थे कि कोई अनजान आदमी उस रास्ते का हाल जानता होगा. आखिर उनका जी न माना, वे जाँच करने के लिए कमरे के बाहर निकले.

कमरे के बाहर वाले दालान से नीचे की मंजिल में उतर जाने के लिए संगमर्मर की सीढ़ियाँ बनी हुई थीं जिनकी राह उतर कर गोपालसिंह बात की बात में उस नजरबाग में जा पहुँचे. रविशों पर घूमते और गौर से देखते हुए वे उस चमेली की झाड़ी के पास जा पहुंचे पर यहाँ भी उन्हें किसी की सूरत दिखाई न पड़ी जिससे ताज्जुब के साथ वे तरह-तरह की बातें सोचने लगे. इस समय बहुत थोड़े लोग जागे थे और इस बाग में तो किसी की भी सूरत दिखाई न पड़ी थी.

गोपालसिंह ने उस झाड़ी के कई चक्कर लगाए और इधर-उधर भी तलाश किया पर उस औरत का कहीं पता न लगा और अन्त में उन्हें विश्वास करना पड़ा कि वह चाहे जो भी रही हो मगर जरूर तिलिस्मी राह से बाग के तीसरे दर्जे में चली गई है. इस विचार ने गोपालसिंह के दिल में तरद्दुद और साथ ही कुछ डर भी पैदा कर दिया क्योंकि आजकल उनके चारों तरफ जिस तरह की साजिशें और चालबाजियाँ चल रही थीं उनसे वे बहुत ही परेशान और घबराये हुए से हो रहे थे. कुछ देर तक तो वे वहीं खड़े कुछ सोचते रहे और तब उसी झाड़ी के अंदर घुस गये जिसके अन्दर जाकर वह औरत गायब हो गई थी.

दूर तक फैली हुई झाड़ी गुन्जान और इस लायक थी कि कई आदमी इसके अन्दर बखूबी छिप सकते थे. इसके बीचोबीच में जमीन के साथ लगे एक पीतल के बड़े मुट्ठे को उन्होंने किसी क्रम के साथ घुमाना शुरू किया. देखते-देखते वहाँ एक रास्ता दिखाई पड़ने लगा. छोटी-छोटी घूमघुमौवा सीढ़ियाँ नीचे को गई हुई थीं जिन पर गोपालसिंह धीरे-धीरे उतरने लगे. सीढ़ियां तय होने पर एक अंधेरी सुरंग मिली जिसके अन्दर उन्होंने पैर रक्खा ही था कि ऊपर वाला रास्ता बन्द हो गया.

लगभग एक घड़ी तक इस सुरंग में चलने के बाद गोपालसिंह एक दालान में पहुँचे जिसको पार करने पर ऊपर चढ़ने की सीढ़ियाँ दिखाई दीं. सीढ़ियों पर चढ़ कर ऊपर पहुँचे और अपने को तिलिस्मी बाग के तीसरे दर्जे में पाया.

यह एक बड़ा बाग था जिसके बीच से एक नहर जारी थी और बहुत से मेवे तथा फलों के पेड़ मौजूद थे. गोपालसिंह चारों तरफ नजर दौड़ा ही रहे थे कि सामने थोड़ी दूर पर बने हुए संगमर्मर के एक चबूतरे पर उनकी नजर पड़ी और वे चौंक गए क्योंकि इस चबूतरे के ऊपर उन्होंने उसी औरत को बेहोश पड़े हुए देखा जिसकी खोज में यहाँ तक पहुँचे थे. तेजी के साथ चल कर वे उस जगह पहुँचे और एकटक उसको तरफ देखने लगे.

हम कह सकते हैं कि अब तक गोपालसिंह ने शायद कभी भी किसी ऐसी औरत को देखा न होगा जिसकी खूबसूरती इससे बढ़-चढ़ कर हो. इसका चेहरा, नखशिख, कद और ढांचा ऐसा था कि बड़े-बड़े योगियों और तपस्वियों को वश में कर ले और कुछ देर तक तो गोपालसिंह सकते की-सी हालत में एकटक खड़े उसकी तरफ देखते रह गए. कभी उसके सुडौल मुखड़े को देखते, कभी पतली गर्दन को, कभी मुलायम-मुलायम हाथों पर निगाह डालते और कभी नाजुक पैरों पर, लेकिन अन्त में किसी तरह उन्होंने अपने को सम्हाला और उसके पास बैठकर गौर से देखने लगे क्योंकि उसकी सांस बिल्कुल बन्द जान पड़ती थी, पर फिर बहुत ध्यान के साथ देखने पर धीरे-धीरे सांस चलने की आहट मिली और उनका डर दूर हुआ. यह सोच कर कि जरूर यह किसी कारण से बेहोश हो गई है और शायद पानी से चेहरा तर करके हवा करने से होश में आ जाय वे वहाँ से उठ कर उस नहर की तरफ चले जो थोड़ी ही दूर पर बह रही थी और जिसका साफ निर्मल जल मोती की तरह चमक रहा था. उसके ठण्डे पानी में अपना दुपट्टा तर किया और उसे लिए हुए पुन: उस चबूतरे की तरफ लौटे, पर यह क्या ? वह चबूतरा खाली था और उस बेहोश औरत का कहीं पता न था.

भौंचक-से होकर वे चारों तरफ देखने लगे. अभी-अभी तो वे उसे यहाँ छोड़ गये थे, तब इतनी ही देर में वह कहाँ गायब हो गई. क्या कोई आदमी आकर उसे उठा ले गया अथवा वह आप ही होश में आकर कहीं चली गई ? मगर उसकी बेहोशी तो ऐसी न थी कि वह इतनी जल्दी होश में आती या कहीं चली जाती ! खर देखना तो चाहिए ही कि वह कहाँ गई ? इत्यादि बातें सोचते हुए गोपालसिंह

ने हाथ का गीला दुपट्टा उसी जगह छोड़ दिया और चारों तरफ घूम-घूम कर खोज करने लगे.

उस बड़े बाग में देर तक राजा गोपालसिंह उस औरत को ढूंढते रहे परन्तु कहीं भी उसका पता न लगा और आखिर सब तरफ से निराश हो वे पुनः उसी नहर के किनारे आकर खड़े हो कुछ सोचने लगे.

यकायक नहर के साफ पानी में उन्हें कोई चीज बहती हुई दिखाई पड़ी. वह कपड़े का टुकड़ा था जिसके साथ एक कागज बंधा हुआ था. गोपालसिंह को ऐसा ख्याल हुआ कि यह टुकड़ा उस औरत की साड़ी का ही है. उन्होंने उत्कंठा के साथ उसे बाहर निकाला और कोने में बंधी हुई चीठी खोली. एक छोटी और बहुत ही हलकी लिखावट इस पर नजर आई जिसका पढ़ना अत्यन्त कठिन हो रहा था परन्तु बड़ी देर तक गौर करने के बाद राजा गोपालसिंह को उसका मतलब समझ में आ ही गया. वह मजमून यह था—

"मैं चक्रव्यूह में कैद हूँ."

परन्तु 'चक्रव्यूह' का नाम पढ़ते ही गोपालसिंह चौंक गए. अपने पिता और चाचा से वे सुन चुके थे कि 'चक्रव्यूह' यद्यपि उनके जमानिया तिलिस्म का ही एक हिस्सा है, मगर वह जगह इतनी भयानक है कि उसके आगे जमानिया बाग का चौथा दर्जा भी कुछ नहीं है तथा वे यह भी सुन चुके थे कि चक्रव्यूह में फंसा हुआ आदमी उस समय तक नहीं छूट सकता जब तक कि वहाँ का तिलिस्म तोड़ा न जाय, अस्तु इस चिट्ठी में 'चक्रव्यूह' का नाम पढ़कर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा. वे उसी चबूतरे के पास आ पहुँचे और उस पर बैठ कर तरह-तरह की बातें सोचने लगे.

'चक्रव्यूह' तो बड़ा भयानक तिलिस्म है, वहाँ यह औरत क्योंकर पहुँच गई ? आपसे आप गई या किसी ने उसे वहाँ ले जाकर बन्द कर दिया ? अगर कैद किया तो किसने ? फिर अभी-अभी तो वह मेरे सामने बेहोश पड़ी थी, मेरे दुपट्टा गीला करके लाने तक में चक्रव्यूह में क्योंकर जा पहुँची ? क्या इतनी ही देर में वह होश में भी आ गई और पत्र लिखकर भेजने योग्य हो गई ! नहीं-नहीं, यह जरूर कुछ धोखा है. मालूम होता है कि वह औरत अथवा उसकी आड़ में कुछ और लोग, मुझे किसी और धोखे में डालना चाहते हैं. इस भेद का अवश्य कुछ पता लगाना चाहिए इत्यादि बातें बहुत देर तक राजा गोपालसिंह सोचते रहे और अन्त में

यह कहते हुए उठ खड़े हुए, "बिना इन्द्रदेव से सलाह लिए यह मामला तय न होगा."

जिस तरह से गये थे उसी रास्ते से वे अपने महल में लौटे और पहुँचते ही इन्द्रदेव को बुलाने के लिए अपने खास खिदमतगार को भेजा. इन्द्रदेव उन दिनों जमानिया ही में थे और उनका डेरा भी महल से बहुत दूर न था, अस्तु खिदमतगार बहुत जल्दी ही उन्हें साथ लेकर वापस लौटा. गोपालसिंह का चेहरा देखते ही बुद्धिमान इन्द्रदेव समझ गये कि वे किसी गहरी चिन्ता में पड़ गए हैं अस्तु तखलिया होते ही उन्होंने पूछा, "क्या मामला है ?"

जवाब में गोपालसिंह ने शुरू से आखिर तक सब हाल कह सुनाया और अन्त में वह कपड़े का टुकड़ा और चीठी सामने रख दी. कपड़े के इस टुकड़े को देखते ही इन्द्रदेव चौंके पर तुरन्त ही अपने आश्चर्य को गम्भीरता के पर्दे में छिपा कर इस तरह वह चीठी देखने लगे कि गोपालसिंह पर कुछ भी प्रकट न हो पाया.

देर तक इन्द्रदेव न जाने किस सोच में पड़े रहे और इस बीच गोपालसिंह बेचैनी के साथ उनका मुँह देखते रहे. आखिर उनसे न रहा गया और उन्होंने इन्द्रदेव से पूछा, "आप किस गौर में पड़ गये ?"

इन्द्र० : इस 'चक्रव्यूह' शब्द ने मुझे फिक्र में डाल दिया है.

गोपाल० : यह शब्द जिस भयानक स्थान की ओर इशारा करता है उससे तो आप वाकिफ ही होंगे.

इन्द्र० : हाँ बहुत कुछ, मगर आप उसके विषय में क्या जानते हैं ?

गोपाल० : सिर्फ इतना ही कि वह एक बहुत ही भयानक तिलिस्म है और उसमें फँसा हुआ मनुष्य किसी तरह छूट नहीं सकता चाचाजी (भैयाराजा) की जुबानी मैंने कुछ हाल उसका सुना था पर वे पूरा हाल कह न सके और अन्तर्ध्यान हो गये.

गोपालसिंह की आंखें डबडबा आईं और उन्होंने कोशिश करके अपने को सम्भाला. इन्द्रदेव बोले, "मैं भी चक्रव्यूह के विषय में कुछ विशेष नहीं जानता मगर जो कुछ जानता हूँ आपसे कह देना पसन्द करूँगा.

गोपाल० : हाँ हाँ जरूर कहिए, मेरा मन बेचैन हो रहा है.

इन्द्रदेव ने यह सुन कुछ कहने के लिए मुँह खोला ही था उन्हें अपने सामने कुछ ऊँचाई पर कमरे की दीवार के साथ लटके शीशे में यह दिखाई पड़ा कि जहाँ

पर वे और राजा गोपालसिंह बैठे हुए थे उसके पीछे का दरवाजा जरा सा खुला और फिर बन्द सा हो गया. इन्द्रदेव की तेज निगाहों ने उस दरवाजे के दूसरी तरफ किसी औरत का होना भी बता दिया और वे बात कहते-कहते रुक गये मगर फिर उन्होंने तुरन्त ही कहा, "हाँ हाँ सुनिये, मैं कहता हूँ. (धीरे-से) पीकोछि बासु." सुनते ही गोपालसिंह समझ गये कि इन्द्रदेव का मतलब यह है कि उनके पीछे खड़ा हुआ कोई आदमी छिप कर उनकी बातें सुन रहा है. गोपालसिंह के महल तथा जमानिया राज्य में इस समय जैसा षड्यंत्र चारों तरफ मच रहा था उसके कारण तथा उन्हें बचाने की नीयत से इन्द्रदेव ने उनके लिए बहुत थोड़े से गुप्त इशारे ऐसे मुकर्रर कर रखे थे जिनके द्वारा बहुत थोड़े में वे अपना मतलब गुप्त रूप से उन्हें समझा सकते थे. उनका वह इशारा सुनते ही गोपालसिंह चौकन्ने हो गए और धीरे से उन्होंने पूछा, "काची ?" (तब क्या करना चाहिए) इन्द्रदेव ने जवाब दिया, "आवे मेदू !" (आप चुपचाप बैठिये मैं देखता हूँ.)

इसके साथ ही वे कुछ ऊँचे स्वर में बोले, "मैं अपना लबादा बाहर छोड़ आया हूँ जिसकी जेब में कुछ ऐसे कागज हैं जिनसे उस स्थान का पूरा भेद प्रकट होता है. ठहरिए मैं पहले उन कागजों को ले आऊँ."

इतना कहकर इन्द्रदेव उठ खड़े हुए और कमरे के बाहर चले मगर गोपालसिंह उसी जगह बैठे रहे. इन्द्रदेव का शक बहुत ही ठीक था. जिस जगह वे दोनों बैठे हुए थे उनके पीछे वाले दरवाजे के साथ कान लगा कर खड़ी एक लौंडी इन दोनों की बातें बड़े गौर के साथ सुन रही थी. जब इन्द्रदेव कागजात लाने का बहाना कर के उठ खड़े हुए तो उस धूर्त लौंडी को भी कुछ सन्देह हुआ और वह उस जगह से हट बगल वाले कमरे से होती भीतर महल की तरफ चल पड़ी मगर दो ही दरवाजे लाँघे थे कि लपकते हुए इन्द्रदेव उसके पीछे जा पहुँचे और डपट कर बोले, "खड़ी रह, कहाँ जाती है ?"

इन्द्रदेव की सूरत देखते ही उस लौंडी की एक दफे तो यह हालत हो गई कि काटो तो लहू न निकले पर तुरन्त ही उसने अपने को सम्हाला और अदब से इन्द्रदेव को सलाम कर खड़ी हो गई. इन्द्रदेव ने पूछा, "तू क्या कर रही थी ?"

लौंडी : जी, सरकार आज सुबह से अभी तक स्नान आदि से निवृत्त नहीं हुए हैं उसी विषय में आज्ञा लेने आई थी मगर बात में लगे हुए देख लौट चली हूँ."

इन्द्रदेव ने यह सुन गौर से एक बार सिर से पैर तक उस लौंडी को अच्छी

तरह देखा और तब कहा, "बिल्कुल झूठ, तू जरूर दगाबाज है. सच बता कि तू हम दोनों की बातें क्यों सुन रही थी ? जल्दी बता नहीं मैं अभी तुझे जहन्नुम में भेज दूँगा."

उस लौंडी पर इन्द्रदेव का डर और रौब इतना छा गया कि वह बिल्कुल घबड़ा गई और डर के मारे काँपने लगी. इन्द्रदेव को यह विश्वास तो था ही कि जरूर कुछ दाल में काला है अस्तु वे बोले, "अगर तू सच-सच हाल बता देगी तो तेरी जान छोड़ दी जायगी !"

इनकी बातचीत की आहट पा राजा गोपालसिंह भी उस जगह आ पहुँचे. अब तो उस लौंडी को अपनी जिन्दगी से पूरी नाउम्मीदी हो गई फिर भी उसने हिम्मत न हारी और गोपालसिंह को सामने देख अदब से उसने पूछा, "मैं यह जानने आई थी कि सरकार के गुसल में क्या देर है ?"

आँखों के ही इशारे से इन्द्रदेव ने अपना विचार गोपालसिंह पर प्रकट कर दिया जिसे समझ गोपालसिंह ने तालियों का एक गुच्छा उनकी तरफ बढ़ाया और कहा, "इस समय तो इस कम्बख्त को ठिकाने पहुँचाओ, फिर जाँच की जाएगी."

2

फोलादी पंजा जब उस कमसिन औरत को लेकर कूएँ के अन्दर चला गया तो भूतनाथ भी अपने को रोक न सका और उसी कूएँ में कूद पड़ा.

ताज्जुब की बात थी कि इस समय वह कुआँ बहुत गहरा नहीं मालूम हुआ और उसमें ज्यादा पानी भी न मिला. सैंकड़ों ही दफे भूतनाथ को इस कूएँ से काम लेने का मौका मिल चुका था और वह अच्छी तरह जानता था कि यह बहुत गहरा है और इसमें पानी भी अथाह है परन्तु इस समय उसे पानी की गहराई दो हाथ से ज्यादा न मालूम हुई फिर भी भूतनाथ को चोट कुछ भी न आई. किसी तरह की बहुत ही मुलायम चीज पर उसके पैर पड़े जो एक तरफ को ढालुआँ भी थी और इसी कारण इसके पहिले कि वह सम्हले या अपने को रोक सके, फिसल कर एक तरफ को ढुलक गया. कूएँ की एक तरफ की दीवार में एक छोटा रास्ता बना हुआ था जिसके अन्दर ढाल के कारण वह खुद-बखुद चला गया और उसके जाते ही वह दरवाजा आप से आप ही बन्द भी हो गया.

इस जगह पर घोर अन्धकार था. भूतनाथ कुछ देर तक तो चुपचाप रहा पर शीघ्र ही उसने होश सम्हाले और बटुए में से सामान निकालकर रोशनी की. उस समय उसे मालूम हुआ कि वह एक लम्बी-चौड़ी जगह के अन्दर है जिसके चारों तरफ कई दरवाजे जो सभी बन्द थे दिखाई पड़ रहे हैं. भूतनाथ सोचने लगा कि वह औरत जिसने उसके मन पर इस कदर काबू कर लिया था कहाँ होगी ? मगर इसी समय उसका सन्देह आप से आप दूर हो गया जब यकायक एक दरवाजे के अन्दर से किसी औरत के चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी. भूतनाथ फौरन उठ खड़ा हुआ और पूरब तरफ वाले दरवाजे के पास पहुँचा. हाथ से धक्का देते ही वह दरवाजा खुल गया और भूतनाथ ने उस औरत को अन्दर ही पाया मगर बड़ी ही विचित्र अवस्था में.

भूतनाथ ने देखा कि उस कोठरी की दीवार के साथ बहुत ही बड़ी लोहे की मूरत बनी हुई है जो इतनी बड़ी है कि बैठी होने पर भी उसका सर कोठरी की छत के पास तक पहुँच रहा है और इस मूरत ने एक हाथ से बेचारी उस औरत की कमर पकड़ी हुई है. भूतनाथ को देख उस औरत ने चिल्लाना और छटपटाना बन्द कर दिया और हाथ जोड़ कर कहा, "किसी तरह मेरी जान इस बेरहम से बचाओ."

भूतनाथ ने यह सुन कोठरी के अन्दर घुसना चाहा पर तुरन्त ही औरत ने चिल्ला कर कहा, "खबरदार, भीतर पैर न रखना नहीं तो मेरी तरह तुम भी कैद हो जाओगे."

भूतनाथ झिझक कर रुक गया. जो कुछ हालत यहाँ उसने देखी उससे इतना तो उसे विश्वास हो गया कि यह जरूर किसी न किसी तरह का तिलिस्म है जिसमें वह औरत फँसी हुई है, अस्तु इसमें खुद भी फँस कर लाचार हो जाना बुद्धिमानी नहीं थी. आखिर उसने पूछा, "तुम यहाँ क्योंकर फँस गई और कैसे छूट सकती हो ?"

औरत ने आँसुओं से तर आँखों को अपने आँचल से पोंछा और कहा, "क्यों-कर फँसी यह तो एक लम्बी कहानी है जिसे इस समय सुनने से कोई फायदा न होगा हाँ अगर आपको मेरी हालत पर कुछ तरस आता हो और आप मेरे छुड़ाने के लिए कुछ तकलीफ उठा सकें तो मैं अपने छूटने का उपाय बता सकती हूँ."

भूत०: हाँ हाँ, जल्दी बताओ, मैं दिलोजान से तुम्हें छुड़ाने की कोशिश करूँगा.

औरत : अच्छा तो सुनिये फिर. नौगढ़ के राजा बीरेन्द्रसिंह के पास एक तिलिस्मी किताब है जिसे लोग 'रिक्तगंथ' कहते हैं. वह किताब उन्हें चुनार के तिलिस्म से मिली थी. अगर आप वह किताब ले आ सकें तो उसकी मदद से मुझे सहज ही में छुड़ा सकते हैं.

औरत की बात सुन भूतनाथ गौर में पड़ गया. रिक्तगन्थ का नाम वह बखूबी सुन चुका था और उसके बारे में बहुत कुछ जानता भी था, परन्तु इस जगह इस औरत के मुंह से रिक्तगन्थ का नाम सुन उसे बहुत अचम्भा हुआ क्योंकि उसे मालूम था कि जिसे तिलिस्म और तिलिस्मी बातों से कुछ सरोकार है वही उस किताब का नाम जान सकता है. भूतनाथ गौर में पड़ गया कि क्या इस औरत का तिलिस्म से भी कोई सम्बन्ध हो सकता है. आखिर उसने पूछा, "तुम्हें उस खूनी किताब का हाल कैसे मालूम हुआ ?"

औरत : यह भी मैं आपको तभी बताऊँगी जब आप वह किताब लेकर मेरे सामने आवेंगे, अभी कुछ कहना-सुनना व्यर्थ है.

भूत० : जब तुम उस किताब का नाम जानती हो तब जरूर यह भी जानती होगी कि वह कैसी भयानक है और साथ ही यह भी मालूम होगा कि कैसे प्रतापी के कब्जे में वह है, इसलिए उसका लाना कितना कठिन है यह भी तुम समझ ही सकती होगी, क्या कोई और उपाय तुम्हारे छुड़ाने का नहीं हो सकता ?

औरत : (टेढ़ी निगाह से भूतनाथ की तरफ देख कर) मुझे सन्देह होता है कि आप मुझे धोखा दे रहे हैं ?

भूत० : (ताज्जुब से) धोखा कैसा !

औरत : यही कि आप वास्तव में भूतनाथ नहीं हैं, केवल मुझे भुलावा देने के लिए आप अपने को इस नाम से पुकार रहे हैं.

भूत० : (हँस कर) यह सन्देह तुम्हें क्योंकर हुआ ?

औरत : यह कभी सम्भव ही नहीं कि भूतनाथ ऐयार और किसी काम को असम्भव कहे ! जिस बहादुर ने अपने अद्भुत कामों से जमाने भर में हलचल मचा रक्खी है वह एक ऐसे साधारण काम से जी चुरावे यह हो नहीं सकता.

इतना कह उस औरत ने टेढ़ी निगाह से भूतनाथ को इस तरह देखा कि उसका मन एकदम हाथ से जाता रहा. वह कुछ देर तक न जाने क्या सोचता रहा तब उसने मतलब से भरी निगाह उस औरत पर डाली जिसे देख उसने अपना सिर

झुका लिया पर साथ ही उसके होठों पर हँसी की मुस्कुराहट भी दिखाई देने लगी. भूतनाथ ने कुछ सोच कर कहा, "खैर मैं उस किताब को लाने की कोशिश करूँगा पर कम से कम इतना तो बता ही दो कि अगर हम उसको लाने में सफल न हुए तो उस हालत में तुम्हें छुड़ाने का कोई और भी उपाय हो सकता है या नहीं ?"

वह औरत यह बात सुन गौर में पड़ गई और कुछ देर बाद बोली, "एक तरकीब और हो सकती है पर शायद आप उसे मंजूर न करें.

भूत० : वह क्या ?

औरत : जमानिया के दारोगा साहब के पास एक छोटी किताब है जिसमें इस जगह का हाल लिखा हुआ है. अगर आप उस किताब को उनसे माँग लें तब भी शायद मैं छूट सकूं.

भूत० : यह तो पहली बात से भी कठिन है.

औरत : (उदास होकर) हाँ कठिन तो जरूर ही है, और फिर एक वेकस गरीब औरत को छुड़ाने के लिए कोई इतनी तकलीफ उठावेगा भी क्यों ?

भूत० : नहीं-नहीं, सो बात नहीं है बल्कि बात यह है मुझसे और दारोगा साहब से गहरी दुश्मनी है, सो वे भला मेरे लिए कोई काम क्यों करने लगे ?

औरत : यह तो आप उसे समझाइये जो ऐयारों की खसलत से वाकिफ न हो, मैं खूब जानती हूँ कि वक्त पड़ने पर ऐयार लोग गधे को बाप बनाते हैं और काम निकल जाने पर दूध की मक्खी की तरह फेंक देते हैं.

औरत की बात सुन भूतनाथ हँस पड़ा और बोला, "तुम्हारा विचार है कि तुम्हारे लिए उन्हीं दारोगा साहब की खुशामद करूँ जिन्हें आजकल जूतों से ठुकरा रहा हूँ."

औरत : नहीं-नहीं, मैं ऐसा क्यों कहूँगी, मैं तो आपसे यह भी नहीं कहती कि मुझे यहाँ से छुड़ाइए. आप जाइये अपना काम देखिये, क्यों एक बदकिस्मत के फेर में पड़ अपना समय बरबाद करते हैं और झूठी आशाएं दिलाकर कटे पर नमक छिड़कते हैं. जाइए जाइए, जिस तरह इतने दिन मैंने काटे हैं जिन्दगी के बाकी दिन भी उसी तरह काट लूंगी और अन्त में सिसक कर किसी वेदर्द की याद करती हुई इस दुनिया को छोड़ दूंगी.

इतना कह औरत ने सिर लटका लिया और फूट-फूट कर रोने लगी. उसके आंसुओं ने भूतनाथ के दिल पर बेतरह घाव किया और वह उसे दिलासा देता हुआ

बोला, "तुम घबड़ाओ नहीं, मैं जैसे होगा वैसे तुम्हें इस भयानक जगह से छुड़ाऊँगा."

उस औरत ने धीरे-धीरे अपने को सम्हाला और रोना बन्द किया. देर तक भूतनाथ उससे बातें करता रहा और बहुत-सी बातें पूछ तथा तरह-तरह के वादे कर और कराके तभी वह उस जगह से हटा. जिस दरवाजे की राह उस जगह पहुँचा था उसको पार कर वह पुन: कूएँ की उस ढालुई सतह पर पहुँचा और वहाँ से कमन्द द्वारा बाहर हो गया. आश्चर्य की बात थी कि जैसे ही वह कूएँ के बाहर हुआ, वैसे ही कूएं के अन्दर से एक शंख के बजने की आवाज हुई और उसके साथ ही एक भारी आवाज सुनाई पड़ी. भूतनाथ ने झाँक कर देखा तो मालूम हुआ कि जो चीज कूएँ के बीचोबीच में आ गई थी या जिस पर गिर कर छिछले पानी में लुढ़कता हुआ वह उस औरत के पास तक पहुँचा था उसका अब कहीं नाम-निशान भी नहीं है और कूएं की तह में पुन: अथाह पानी नजर आ रहा है. भूतनाथ ने यह देख धीरे से कहा, "बड़ा विचित्र कूआं है" और तब अपना सब सामान जिसे जगत ही पर छोड़ वह कूएं में कूदा था बटोर कर वहाँ से रवाना होने की फिक्र करने लगा.

परन्तु भूतनाथ ऐसा कर न सका. उसके कान में एक सीटी की आवाज आई जो कहीं बहुत दूर पर बजती हुई मालूम होती थी जिससे उसका दिल खटका और वह वहीं ठिठक कर सुनने लगा. आवाज पुन: आई और इस बार पहिले से कुछ नजदीक मालूम हुई. साथ ही यह भी मालूम हुआ कि सीटी द्वारा कुछ इशारा किया जा रहा है. भूतनाथ चौंका, तब उसने अपने बटुए में से एक जफील निकाली और खास ढंग से बजाई. तेज आवाज जंगल के कोने-कोने में फैल गई और साथ ही कई तरफ से सीटी बजने की आवाजें सुनाई पड़ने लगीं. आधी ही घड़ी बाद पैरों की आहट ने बता दिया कि कई आदमी उसी तरफ चले आ रहे हैं.

बेचैनी के साथ भूतनाथ उन लोगों के आने की राह देख रहा था क्योंकि इशारे ने उसे बता दिया था कि ये उसके ही शागिर्द हैं और किसी जरूरी काम के लिए उसे खोज रहे हैं. देखते ही देखते पाँच आदमी जंगल में से निकल कर कूएं के पास आ पहुँचे जहाँ भूतनाथ खड़ा था और उनमें से एक ने आगे बढ़ कर बेचैनी के साथ कहा, "गुरुजी, बड़ी बुरी खबर है!!"

भूत० : सो क्या ?

शागिर्द : इन्द्रदेवजी दुश्मनों के फन्दे में पड़ गये.

भूत० : इन्द्रदेव और दुश्मनों के फन्दे में ! सो कैसे ?

शागिर्द : (अपने एक साथी की तरफ देखकर) गोपीनाथ, तुम्हारे ही सामने वह घटना हुई है अस्तु तुम्हीं बयान कर जाओ कि क्या हुआ.

गोपी० : (आगे बढ़कर) गुरुजी, लगभग तीन घंटे के हुआ होगा कि आपकी आज्ञानुसार मैं उन खण्डहरों का चक्कर लगाता घूमता-फिरता गंगा के किनारे वहाँ पर जा पहुँचा जहाँ से गोपालसिंह गिरफ्तार हुए थे. यकायक मैंने इन्द्रदेवजी को उधर आते देखा. मेरा कलेजा दहल गया क्योंकि मैं जानता था कि वह कैसी भयानक जगह है और मैं सोच ही रहा था कि उन्हें किसी तरह से होशियार कर दूँ कि अचानक उस कमेटी के कई आदमी वहाँ आ पहुँचे. मेरे देखते ही देखते उन लोगों ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया और डोंगी पर बैठा कर ले गये.[1]. अब जरूर ही वे उस कमेटी में पहुँचाये जायंगे और वह उन्हें बिना जान से मारे कदापि न छोड़ेगी क्योंकि वे बहुत बुरी तरह उस कमेटी के पीछे पड़ गये थे. मैं यह हाल देखते ही आपकी खोज में दौड़ा कि सब हाल सुनाऊँ, रास्ते में ये लोग भी मिल गये.

दूसरा शागिर्द : और एक बात है, मुझे ठीक मालूम हुआ है कि आजकल सर्यू और इन्दिरा (इन्द्रदेव की स्त्री और लड़की) दारोगा साहब के जमानिया वाले मकान में कैद हैं.

भूत० : ऐसा ! तब तो इन्द्रदेव के साथ ही साथ उन दोनों को भी छुड़ाना चाहिए.

शागिर्द : बेशक.

भूत० : (गोपीनाथ से) तुम्हें उन लोगों का साथ छोड़े कितनी देर हुई ?

गोपी० : यही कोई तीन घन्टे के लगभग हुए होंगे.

भूत० : तब तो जो कुछ करना हो फुर्ती से करना चाहिये. मैंने सोचा था कि इस कम्बख्त कमेटी को इस खूबसूरती के साथ तहस-नहस करूँ कि एक भी सभासद बचने न पावे पर अब मौका न रहा. अच्छा सुनो.

भूतनाथ ने अपने शागिर्दों से धीरे-धीरे कुछ बातें कीं और तब उन्हें लिये हुए

---

1. देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति पन्द्रहवाँ भाग, पहिला बयान.

घने जंगल में घुस गया.

आधी घड़ी के बाद उस जंगल में से पाँच भयानक सूरतों वाले आदमी बाहर निकले. इन सभी की सूरतें सिंदूर से रंगी हुई थीं तथा बदन पर फौलादी कवच चढ़ा हुआ था. हाथों में लम्बी तलवारें और पीठ पर तीर-कमान के साथ-साथ ये लोग और भी तरह-तरह के हथियारों से सजे हुए थे और पाँचों बहादुर बड़े भयानक मालूम होते थे. पाठक तो समझ ही गए होंगे कि ये भूतनाथ और उसके शेरदिल शागिर्द हैं.

जंगल ही जंगल ये लोग जमानिया की तरफ रवाना हुए. थोड़ी दूर गये होंगे कि इनका एक साथी पाँच घोड़ों की लगामें थामे खड़ा दिखाई पड़ा हम नहीं कह सकते कि इतनी फुर्ती से घोड़े कहां से आ गये पर भूतनाथ के लिए कोई बात कठिन न थी. वह फौरन कूद कर एक घोड़े की पीठ पर सवार हो गया और उसके चारों साथी भी घोड़ों पर दिखाई पड़ने लगे. भूतनाथ ने उस आदमी से जो घोड़े के साथ था कहा, "तुम दारोगा के मकान का पहरा दो, इन्द्रदेव को छुड़ा कर इन्दिरा और सर्यू के वास्ते मैं सीधा यहीं आऊँगा. खबरदार, वे दोनों कहीं गायब न होने पावें" और तब घोड़े को एड़ लगा तेजी के साथ जमानिया की तरफ चल पड़ा. उसके बहादुर शागिर्दों ने भी उसके पीछे अपने घोड़े छोड़ दिये.[1]

इसके बाद किस तरह भूतनाथ ने उस गुप्त कमेटी की मिट्टी पलीद की और इन्द्रदेव तथा सर्यू को छुड़ा तथा चार आदमियों की जान और इन्दिरा वाला कलमदान ले सही-सलामत निकल गया यह सब हाल पाठक चन्द्रकान्ता सन्तति में पढ़ चुके हैं अस्तु यहाँ दुबारा लिखने की कोई आवश्यकता मालूम नहीं होती. अब हम उसके आगे का हाल लिखते हैं.

3

पौ फटने के पहिले ही भूतनाथ कमेटी वाले उस स्थान से बहुत दूर निकल गया. यद्यपि उसके साथियों के भी बदन पर हलके-हलके कई जख्म लग चुके थे पर उसे

1. इन्दिरा और सूर्य के दारोगा की कैद में जाने का पूरा हाल हमारे पाठक चन्द्रकान्ता सन्तति में इन्दिरा के किस्से में पढ़ चुके हैं.

इनकी परवाह न थी और वह इन्दिरा को छुड़ाने की फिक्र में था जिसके दारोगा साहब के घर में होने की खबर उसके शागिर्द ने उसे दी थी.

एक हिफाजत की जगह में पहुँच भूतनाथ रुका और अपना जिर्र: और फौलादी कवच आदि उतार अपने हाथ-मुँह धोए तथा कपड़े बदले. इसके बाद वह कलमदान और अन्य कागजात जो उस सभा से लूट लाया था अपने शागिर्दों के सुपुर्द कर बहुत हिफाजत के साथ सम्हाल कर रखने की ताकीद कर पुन: घोड़े पर सवार हुआ और जमानिया की तरफ रवाना हुआ. जिस समय वह दारोगा के शैतान की आँत की तरह पेचीले और आलीशान मकान के पास पहुँचा उस समय सुबह हो चुकी थी और आदमियों की आवाज भी शुरू हो गई थी जिसपर खयाल कर भूतनाथ ने बेचैनी के साथ कहा, "सूर्यदेव मेरे काम में बाधा डालना चाहते हैं."

भूतनाथ को देखते ही उसका वह साथी जिसे उसने इस मकान पर निगाह रखने के लिए सफर के शुरू में भेज दिया था और जो अब तक न जाने कहाँ छिपा था उस जगह पहुँचा. गुप्त इशारे से उसने अपने को भूतनाथ पर प्रकट किया और तब पूछा, "गुरुजी, वह काम हो गया ?" जवाब में भूतनाथ ने थोड़े में सब हाल और सभा को लूटने का किस्सा बयान किया और तब कहा, "सर्यू को लेकर इन्द्रदेव तो निकल गये, अब इन्दिरा को छुड़ाना बाकी रह गया है." यह सुन उसके शागिर्द ने कहा, "उसका उपाय भी मैं ठीक कर चुका हूँ. इन्दिरा जिस जगह कैद की गई है सो मुझे मालूम है और किस तरह वहाँ पहुँचेंगे सो भी प्रबन्ध हो चुका है, आप मेरे साथ आइये."

इसके घड़ी भर के बाद हम एक पालकी को दारोगा साहब के मकान की तरफ आते देखते हैं. यह पालकी दरवाजे पर पहुँच कर रुकी और उसके अन्दर से सफेद मुडासे और अचकन आदि पहने एक आदमी उतरा जिसकी आकृति बता रही थी कि वह वैद्य है. उसके आते ही दरवाजे पर के नौकरों में से एक ने आगे बढ़ कर उसकी अगवानी की और कहा, "आइये-आइये हरीजी, दारोगा साहब बड़ी बेचैनी के साथ आपकी राह देख रहे हैं."

हरीजी (वैद्य) ने पूछा, "क्यों क्या बात है जो इतनी सुबह-सुबह की बुलाहट हुई ?" जिसके जवाब में उस आदमी ने कहा, "वे छत से नीचे गिर कर बहुत चुटीले हो गये हैं" और फिर इस तरह घूम कर मकान के भीतर की तरफ चल

पड़ा कि वैद्यराज को और कुछ पूछने का मौका ही न मिला. वे उसके पीछे-पीछे चल पड़े और उनकी दवाओं की पेटी उठाये एक कहार उनके साथ हो लिया.

एक छोटी कोठरी में मसहरी के ऊपर पड़े हुए दारोगा साहब कराह रहे थे. उनके सिर और बदन में जगह-जगह पट्टियाँ बंधी थीं जो खून से तर हो रही थीं और वे बहुत ही कमजोर और बदहवास हो रहे थे. जिस समय वैद्यजी को लिए उनका नौकर पहुँचा उस समय केवल एक लौंडी धीरे-धीरे पंखा झल रही थी जो इन लोगों को आते देख कोठरी के बाहर निकल गई. वैद्यजी के लिए एक चौकी रख दी गई और दारोगा ने रोनी आवाज में अपना हाल सुनाना शुरू किया. वह कहार जो वैद्यजी की दवा की पेटी उठा लाया था बक्स वहाँ रख बाहर निकल गया और नौकर ने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया. मरीज और वैद्य का साथ छोड़ हम इस कहार के साथ चलते और देखते हैं कि वह अब कहाँ जाता या क्या करता है.

दारोगा साहब की कोठरी के बाहर आ उस कहार ने एक दालान पार किया और तब रुक कर खड़ा हो गया. यहाँ पर सन्नाटा था और कहीं कोई आदमी दिखाई नहीं पड़ता था अस्तु अपने चारों तरफ किसी को न देख वह फुर्ती के साथ बगल की एक कोठरी में जा घुसा और वहाँ से बढ़ एक लम्बी दालान पार कर तथा कुछ सीढ़ियाँ चढ़ मकान के एक दूसरे ही हिस्से में जा पहुँचा. इस जगह बिल्कुल सन्नाटा था और ऐसा मालूम होता था मानों इधर कोई रहता ही नहीं पर वास्तव में यह बात नहीं थी और यह दारोगा के विचित्र मकान का वही हिस्सा था जो गुप्त रूप से कैदियों को रखने के काम में आता था और जिसमें हमारे पाठक पहिले भी कई बार आ चुके हैं.

यहाँ पहुँच उस आदमी ने अपने बटुए से कुछ सामान निकाला और एक रूमाल किसी अर्क से तर कर अपने चेहरे पर फेरा जिसके साथ ही बनावटी रंग छूट गया और भूतनाथ की सूरत दिखाई पड़ने लगी. भूतनाथ ने एक नकाब अपने चेहरे पर लगाई और कुछ औजार निकाल पास ही के एक दरवाजे में लगे ताले को खोला. दरवाजा खुलने पर नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ नजर आईं. भूतनाथ बेधड़क नीचे उतर गया. पुनः एक कोठरी मिली जहाँ से फिर सीढ़ियों का सिलसिला नीचे को गया हुआ था. भूतनाथ ने इसे भी तय किया और तब एक दालान में पहुँचा जिसमें चिराग की रोशनी हो रही थी. बगल में एक कोठरी थी जिसमें

लोहे का छड़दार जंगला और दरवाजा लगा हुआ था. अपने औजारों की मदद से भूतनाथ ने इसके ताले को भी खोला और तब सामने ही जमीन पर बेचारी कम-सिन इन्दिरा को पड़े सिसक-सिसक कर रोते हुए पाया. एकाएक एक नकाबपोश को सामने आते देख इन्दिरा डर गई पर भूतनाथ ने उसे दिलासा दिया और अपना परिचय देकर ढाढ़स बंधाया. ज्यादा बातचीत का समय न था अस्तु भूतनाथ ने इन्दिरा को गोद में उठा लिया और उस जगह से बाहर ले आया. सीढ़ियों का सिलसिला तय किया और ऊपरी मंजिल में आ पहुँचा जहाँ से उसने मकान के बाहर का रास्ता लिया, सदर दरवाजे का नहीं बल्कि एक दूसरे ही चोर दरवाजे का जिसका हाल उसे मालूम था. दारोगा ने अपने सुभीते के लिए इस मकान में आने-जाने के लिए कई गुप्त रास्ते बनवा रक्खे थे जिनमें से एक की राह भूतनाथ इन्दिरा को लिए सहज ही में बाहर हो गया और तब मैदान की तरफ बढ़ा.

एकान्त स्थान में भूतनाथ का वह शागिर्द तथा एक दूसरा आदमी घोड़ा लिए मौजूद था. भूतनाथ ने संक्षेप में इन्दिरा को पाने का हाल सुनाया और तब यह कह कर कि 'उस कहार को होश में लाकर छोड़ देना जिसकी सूरत बन मैंने काम निकाला है' घोड़े पर जा बैठा. इन्दिरा को गोद में बिठा लिया और उन आदमियों से और भी कुछ बातें कर एक तरफ घोड़ा छोड़ दिया.

कई कोस चले जाने के बाद भूतनाथ एक ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ एक छोटी-सी नदी थी जिसके किनारे ही पर भूतनाथ का अड्डा भी था और उसके कई शागिर्द बराबर मौजूद रहा करते थे. यहाँ इन्दिरा को उतार कर उसे कुछ जलपान कराया और खुद भी आराम किया. इसी जगह उसके वे पहिले आदमी भी मौजूद थे जिनसे लेकर भूतनाथ ने वे चीजें जो सभा से लूटी थीं पुनः अपने कब्जे में कर लीं और उनकी गठरी बना अपने साथ रख ली. दो घण्टे बाद पुनः सफर शुरू हुआ और अबकी कई घण्टे चल पुनः एक दूसरे अड्डे पर पहुँच कर भूतनाथ ने दम लिया. यहाँ पर भी उसके कई शागिर्द मौजूद थे जिन्होंने बात की बात में सब तरह का प्रबन्ध कर दिया. स्नान-ध्यान और भोजन इत्यादि से छुट्टी पा भूतनाथ ने इन्दिरा को तो आराम करने के लिए एक तरफ लिटा दिया और स्वयं उन चीजों की जाँच में लगा जिन्हें वह सभा से लूट लाया था.

जो कलमदान सब आफतों की जड़ था और जिसे दामोदरसिंह ने इन्दिरा की माँ सर्यू को दिया था उसे तो सभापति के सामने से ही भूतनाथ ने उठा लिया था

पर उसके अलावे और भी बहुत से कागज-पत्र वह उठा लाया था जिन्हें उसने इस समय जांचना-पढ़ना और नकल करना शुरू किया. हम नहीं कह सकते कि उन कागजों से भूतनाथ को क्या-क्या बातें मालूम हुईं या किन गुप्त भेदों का उसे पता लगा पर समय-समय पर उसकी भावभंगी देखने से यह अवश्य मालूम होता था कि कुछ बहुत ही विचित्र और आश्चर्यजनक बातें उन कागजों से प्रकट हो रही थीं जो भूतनाथ को और ताज्जुब में डाल रही थीं.

कई घंटे तक भूतनाथ उन कागजों को देखता-पढ़ता और नकल करता रहा. कलमदान के अन्दर से जितने कागजात निकले उनमें से हर एक की भूतनाथ ने नकल कर डाली और इसके अलावा भी जो कुछ कागजात थे उनमें से जिसे जरूरी समझा उसकी नकल की, कुछ जला कर खाक कर दिए और कुछ को केवल पढ़ कर ही छोड़ दिया. इस काम में कई घण्टे लग गये और सूर्य डूब गया था जब यह काम खतम हुआ. उस समय भूतनाथ ने उस कलमदान के कागजों को पुन: उसी में बन्द किया और बाकी कागजों के साथ एक गठरी में बाँध एक शागिर्द के हवाले कर कहा, "इसे लामा घाटी में ले जाकर खूब हिफाजत के साथ रक्खो. तीन-चार दिन में मैं स्वयं आऊँगा और जो कुछ आगे करना है उसका निश्चय करूँगा." इसके बाद उन कागजों की जो नकल तैयार की थी उसे अपनी कमर में बांधा और सफर की तैयारी की. घण्टे भर रात जाते-जाते पुन: उसी तरह इन्दिरा को लेकर सफर शुरू हुआ. इस बार भूतनाथ रात भर चला गया यहाँ तक कि सुबह होते-होते बलभद्रसिंह के मिर्जापुर वाले उस मकान पर जा पहुँचा जहाँ वे आजकल रहा करते थे.

बलभद्रसिंह के पास भूतनाथ ने अपने आने की इत्तिला कराई. इस तरह बेमौके भूतनाथ का आना सुन उन्हें हद्द से ज्यादा ताज्जुब हुआ और वे तुरन्त भूतनाथ के पास पहुँचे. तखलिया करा के भूतनाथ ने बहुत ही संक्षेप में इन्दिरा को दारोगा के कब्जे से छुड़ाने का कुछ हाल कहा मगर सभा को लूटने या कलमदान छीनने वगैरह का हाल कुछ भी न बताया. इसके बाद बातचीत होने लगी.

भूत० : कदाचित आप ताज्जुब करेंगे कि इस लड़की (इन्दिरा) को सीधा इन्द्रदेव के पास न ले जाकर मैं आपके पास क्यों लाया हूँ. इसके दो सबब हैं. एक तो कई नाजुक बातों की खबर देने के लिए मुझे आपके पास आना जरूरी था और दूसरे यह भी मुझे मालूम हुआ कि इन्द्रदेव का मकान अब दुश्मनों की पहुँच से

बाहर नहीं रह गया है. इन्दिरा से जब आप उसका हाल सुनेंगे तो यह जान आपको ताज्जुब होगा कि खास इसके मकान ही से इसे और इसकी माँ को दुश्मनों ने फँसा लिया अस्तु यदि यह वहाँ जायगी तो पुनः फँसेगी परन्तु यदि आपके पास रहेगी तो दुश्मनों को कभी शक भी न होगा कि वह यहाँ है और वे इधर आने का ध्यान भी मन में न लायेंगे.

बल० : बेशक वे इसे मेरे मकान में न ढूंढ़ेंगे, परन्तु फिर भी इन्द्रदेवजी को यह खबर हो जानी चाहिए कि इन्दिरा मेरे मकान पर है.

भूत० : यहाँ से लौट कर मैं सीधा उन्हीं के पास जाऊँगा और सब हाल सुनाऊँगा, आप इसकी चिन्ता न करें.

बल० : बहुत ठीक, हाँ अब यह बताइये कि वे बातें कौन सी हैं जिनके लिये आपको मेरे पास आने की जरूरत पड़ी ?

भूत० : जी हाँ, सुनिये और बहुत गौर से सुनिये. आपकी बड़ी लड़की लक्ष्मी देवी की शादी राजा गोपालसिंह से ठीक हुई है.

बल० : हाँ.

भूत० : और इस काम में कुछ आदमी आपके बखिलाफ कोशिश कर रहे हैं.

बल० : हाँ.

भूत० : अब यह भी सुन लीजिए कि उन्होंने निश्चय कर लिया है कि चाहे कुछ भी हो जाय पर यह शादी न होने पावे. इसके लिए उन्हें जो कुछ करना पड़े और आपको, आपकी लड़की को, राजा गोपालसिंह तक को भी चाहे कितना कष्ट पहुँचाना पड़े, पर वे लोग अपनी बात से न टलेंगे, मैंने तो यहाँ तक सुना है कि वे लोग अगर जरूरत पड़े तो आपकी जान तक लेने पर तुल गये हैं.

बल० : (घबड़ाकर) क्या सचमुच !

भूत० : जी हाँ, अस्तु मेरी प्रार्थना है कि आप बहुत ही होशियारी के साथ रहें.

बल० : मगर ऐसा करने वाले आखिर हैं कौन लोग ? अभी तक तो मैं यह समझ रहा था कि केवल दारोगा साहब ही मेरे बखिलाफ कार्रवाई कर रहे हैं मगर आपकी बातों से जान पड़ता है कि वे लोग कई आदमी हैं.

भूत० : मैं इस बात को जानने की कोशिश कर रहा हूँ कि कौन-कौन से लोग इस काम में लगे हुए हैं. पर अभी तक ठीक-ठीक कुछ पता नहीं लगा है, फिर भी

मैं आपको होशियार किये देता हूँ कि खूब ही चौकन्ने रहें और किसी अनजान आदमी का कभी जरा भी विश्वास न करें. मैं खुद इस मौके पर आपकी मदद करता पर क्या बताऊँ ऐसी झंझट में फँसा हुआ हूँ कि दम मारने की फुर्सत नहीं मिलती. अच्छा यह तो बताइए कि क्या राजा गोपालसिंह ने अपना कोई ऐयार आपकी निगहबानी के लिए भेजा है ?

बल० : हाँ आजकल उनके हरनामसिंह और बिहारीसिंह नामक ऐयार मेरे घर की चौकसी करते हैं.

भूत० : बिहारी और हरनाम ! आप उन पर जरा भी भरोसा न करियेगा. ऐयारी का नाम बदनाम करने और मालिक के साथ दगा करने वाले वे दोनों दगा-बाज आपके दुश्मनों से मिले हुए हैं इसकी मुझे पक्की खबर लग चुकी है.

बलभद्रसिंह यह बात सुनकर भूतनाथ का मुँह देखने लगे. भूतनाथ उनके आश्चर्य को देख बोला, "आप चाहें तो मैं इस बात का सबूत भी दे सकता हूँ."

इतना कह भूतनाथ ने बलभद्रसिंह के कान के पास मुँह ले जाकर न जाने क्या कहा कि वे एक दम चौंक कर उछल पड़े और उनके चेहरे पर हवाई उड़ने लगी.

भूतनाथ और भी कुछ देर तक बलभद्रसिंह से बातें करता रहा, इसके बाद इन्दिरा को बिहारी और हरनाम की निगाहों से भी बचा रखने की बहुत ताकीद कर सुबह होने के पहिले ही वहाँ से रवाना हो गया.

4

रात लगभग पहर भर के जा चुकी होगी जमानिया में दामोदरसिंह के आलीशान मकान के एक कमरे में प्रभाकरसिंह और इन्दुमति फर्श पर बैठे हुए धीरे-धीरे कुछ बातें कर रहे हैं.

इन्दु० : देखिए किस्मत ने कैसा पलटा खाया है ! चारों तरफ मुसीबत ही मुसीबत नजर आती है. दयाराम, जमना और सरस्वती लोहगढ़ी में जा फँसे हैं, दामोदरसिंहजी दारोगा की बदौलत चक्रव्यूह का कष्ट भोग रहे हैं जहाँ से उनका निकलना असम्भव है, बेचारी मालती न जाने किस जगह जा फँसी है कि कई रोज से उसका कुछ भी पता नहीं लग रहा है, उधर सर्यू चाची और इन्दिरा एक बार मिल कर भी पुनः गायब हो गई हैं, इन्द्रदेवजी पर अलग मुसीबत आ पड़ी है और

राजा गोपालसिंह को अपनी ही जान के लाले पड़ गये हैं. कुछ समझ में नहीं आता कि क्या होने वाला है !

प्रभा० : कुछ पूछो मत, न जाने परमात्मा क्या करना चाहते हैं !

इन्दु० : हम लोग भी कैसे बदकिस्मत हैं ! मैं तो जब से ब्याह हुआ बराबर दुःख उठा रही हूँ पर मेरी बदौलत आप भी···

प्रभा० : यह खयाल तुम्हारा गलत है, कोई किसी की बदौलत दुःख या सुख नहीं उठाता, जो कुछ जिसे भोगना रहता है उसका बाँधनूं आप से आप ही बँध जाता है और किसी के सोचने-समझने या करने-कराने से कोई अन्तर नहीं पड़ता. मगर आदमी को ऐसे दुःखों में घबराना न चाहिए, दुःख तो मानों एक तरह की परीक्षा है जिसके जरिये आदमी की जाँच की जाती है. अगर आदमी हमेशा सुखी और प्रसन्न ही रहे तो मामूली सा कष्ट भी उसके लिए असाध्य हो जाय और वह कुछ भी करने योग्य न रह जाय.

इन्दु० : सो ठीक है पर आखिर दुःखों का कुछ अन्त भी तो हो, ऐसी परीक्षा किस काम की जो परीक्षार्थी की जान ही लेकर छोड़े !

प्रभा० : नहीं यह बात भी नहीं है, हद हर एक चीज की होती है. परमात्मा भी मनुष्य को उसकी हद के बाहर कष्ट में पड़ने नहीं देता, अगर वह ऐसा करे तो उसका दीनबन्धु नाम ही व्यर्थ हो जाय.

इन्दु० : मेरी समझ में तो उसका यह नाम व्यर्थ ही लोगों ने रख दिया है ! परमात्मा तो न किसी का शत्रु है न मित्र, वह तो एक कठोर शासक और निष्पक्ष न्यायी है जो हर एक को उसके कर्मों का फल देने के सिवाय और कुछ करता नहीं या कर सकता नहीं ! जब हम साफ देखते हैं कि इस संसार में भले आदमी तो लगातार दुःख पर दुःख उठा रहे हैं और दुष्ट तथा पापी आनन्द भोग रहे हैं तो सिवाय इसके और क्या कह सकते हैं कि दोनों अपनी-अपनी करनी अथवा भाग्य का फल भोग रहे हैं. भले की भलाई उसका कुछ उपकार नहीं करती और बुरे की बुराई उसका कुछ बिगाड़ती नहीं, तब ऐसी अवस्था में सिवाय इसके और क्या कहा जाय कि परमात्मा केवल करनी का फल देना जानता है और कुछ नहीं.

प्रभा० : आज तुम्हारी बातें कुछ अजब बेसिर-पैर की हो रही हैं. अगर मान लिया जाय कि मनुष्य केवल अपनी करनी का फल भोगता है तो अवश्य ही इ

जन्म के दुःख और सुख उसके पिछले किसी जन्म के पुण्य-पाप के कारण ही आते होंगे ?

इन्दु० : अवश्य.

प्रभा० : ऐसी हालत में इस जन्म की बुराई और भलाई अगले किसी जन्म के सुख और दुःख का कारण बनेगी.

इन्दु० : हाँ जरूर बनेगी.

प्रभा० : तो वैसी अवस्था में तो यह जीवन-मरण का सिलसिला कभी मिटेगा ही नहीं और न सुख-दुःख का रगड़ा ही दूर होगा. फिर वैसा मान लेने से परमात्मा की आवश्यकता भी कुछ रह नहीं जाती. जब सुख-दुःख हमारी ही करनी का फल है तो उसके कर्ताधर्ता भी हम ही हैं, परमात्मा को फिर क्यों दोष दिया जाय ?

इन्दु० : परमात्मा को न कहें तो फिर आखिर किसे कहा जाय ?

प्रभा० : यह भी ठीक रही ! किसी के सिर दोष मढ़ने से मतलब, भेड़ ने पानी नहीं गन्दा किया तो उसके बाप ने किया होगा ! पर वास्तव में बात ऐसी नहीं है. अगर तुम कर्म को सर्वस्व मानती हो तो परमात्मा को निराकार और निर्लेप मानना पड़ेगा और अगर परमात्मा को ही सब कुछ करने वाला मानती हो तो अपने कर्म भी उसे ही सौंपने पड़ेंगे. अपना सुख-दुःख, हानि लाभ, जीवन मरण सब उस एक ईश्वर के हाथ में सौंप देने पर ही तुम यह कह सकती हो कि जो कुछ करता है परमेश्वर करता है, मैं नहीं.

इन्दु० : अगर आपकी बात मैं मान लूं तो क्या बुरा आदमी जो कुछ पाप करता है उसे परमात्मा ही उससे कराता है ?

प्रभा० : यह उस मनुष्य की अवस्था पर निर्भर है. अगर वह अपने को कर्ता समझ कर 'मैं' को महत्व देता हुआ पाप कृत्य कर रहा है तो उन कर्मों का वही कर्ता है, और यदि वह अपने को केवल परब्रह्म के हाथ की कठपुतली समझता हुआ जैसा कुछ भला या बुरा उससे बन पड़ता है निर्लिप्त भाव से करता चला जाता है और उसके लिए न अफसोस ही करता है और न सुखी या दुःखी ही होता है तो अवश्य ही उसके फल का भागी भी वह नहीं होगा.

इन्दु० : वाह, यह तो आप खूब कहते हैं ! पाप का भागी वह नहीं तो क्या दूसरा कोई होगा ? और वह दूसरा भी क्या परमात्मा ? परमात्मा जानबूझ कर किसी से पाप करावेगा ही क्यों ?

प्रभा० : क्यों नहीं, क्या तुम समझती हो कि उसका खजाना ऐसा अपूर्ण है कि उस में केवल मीठा ही मीठा है नमक नहीं, मधु ही मधु है जहर नहीं, सोना ही सोना है लोहा नहीं, सुख ही सुख है दु:ख नहीं, पुण्य ही पुण्य है पाप नहीं ! क्या वैद्य को अपने पास हड्डी जोड़ने की ही दवा रखनी पड़ती है, काटने का औजार नहीं ?

इन्दु० : भला परमात्मा पाप, अत्याचार और दुःख से अपना खजाना भर के उससे क्या काम लेता है ?

प्रभा० : लोहे की तलवार का वार बचाती समय लोहे की ही ढाल सामने करनी पड़ती है. इसी तरह जगत के पाप दूर करने के लिए पाप ही सहायक होता है, दु:ख दूर करने के लिए दु:ख ही का आश्रय लेना पड़ता है. यद्यपि उसमें यह शक्ति है फिर भी परमात्मा इस धरती पर स्वयम् तो आता नहीं, उसे यहां ही के जीवों से यहाँ का सब काम कराना पड़ता है.

इन्दु० : तो आपका मतलब यह है कि इस जगह दारोगा, जैपाल, शिवदत्त आदि जो दुष्ट हम लोंगों को कष्ट दे रहे हैं वे परमात्मा का ही कार्य सिद्ध कर रहे हैं ?

प्रभा० : बेशक !

इन्दु० : सो कैसे ?

प्रभा० : दो तरह से.

इन्दु० : सो क्या-क्या ?

प्रभा० : एक तो इन दुष्टों की बदौलत जमानिया, चुनार और आसपास की सभी जगहों के सब शैतान इकट्ठे हो गये कोई छिपा न रह गया, दूसरे आपस ही में एक-दूसरे से लड़-झगड़ कर ये अपनी शक्ति नष्ट कर रहे हैं और करेंगे. तुम देखती रहना, जल्द ही वह समय आने वाला है कि ये सब शैतान कुत्तों की मौत मारे जायेंगे और इनकी हालत पर मक्खियों को भी तरस आएगा.

इतने ही में कमरे के बाहर से आवाज आई, "बेशक !" और इन्द्रदेव ने अन्दर पैर रक्खा. इन्द्रदेव को देख इन्दु हट कर एक बगल हो गई और प्रभाकर सिंह ने कुछ सकुचा कर गर्दन नीचे कर ली. इन्द्रदेव ने यह देख कर कहा, "प्रभाकर, मैं कुछ देर से बाहर खड़ा तुम्हारी बातें सुन रहा था. तुम्हारे विचार बहुत गम्भीर हैं और तुम्हारी विचारशक्ति उत्तम, पर तुम एक बात की भूल क

रहे हो.

प्रभाकरसिंह ने सवाल की निगाह इन्द्रदेव पर डाली. इन्द्रदेव बोले, "तुमने जो यह कहा कि परमात्मा ही आवश्यकता पड़ने पर किसी से पाप कराता है और किसी से पुण्य, सो यह बात सही नहीं. कर्म स्वयमेव न तो अच्छे होते हैं न बुरे, पापमय होते हैं न पुण्यमय, उनका प्रयोग, उनकी स्थिति, समय या मौका, उन्हें भला-बुरा, पापमय या पुण्यमय बना देता है. किसी का हाथ काट देना एक कर्म है. वैद्य किसी रोगी का काट दे तो वही अच्छा है, राजा किसी चोर का काट दे तो वही न्याय है और वीर सम्मुख युद्ध में किसी शत्रु का हाथ काट दे तो वही कर्तव्य है, पर वही कर्म अगर कोई दुष्ट किसी भले आदमी के साथ अकारण ही करे तो अन्याय, अत्याचार, पाप, दुष्कृत्य या जो कुछ भी कहो, सो हो जाएगा. तब क्या यह कहना उचित है कि हाथ काट देना बड़ा खराब काम है ?

"फिर एक दूसरी बात और भी है. मनुष्य को हाथ कमाने और मुँह खाने के लिए दिया गया है, पर कोई आदमी यह सोच कर जंगल में जा बैठे कि सब कुछ करने वाला तो परमेश्वर है, उसे अगर इच्छा होगी तो आप से आप मेरे मुँह में खाना पहुँचा देगा, तो क्या यह कहना ठीक होगा ? क्या उस व्यक्ति ने अपने हाथ और शरीर से मेहनत न कर सब बोझ परमात्मा ही के ऊपर डाल उसी परमात्मा की दी हुई शक्ति का अपमान नहीं किया ? परमात्मा को सब शक्ति है और संभव है कि उसे जंगल में बैठे-बैठे भोजन मिल जाय, पर फिर भी उसे स्वयं कमाना और खाना चाहिए था."

प्रभा० : बेशक.

इन्द्र० : इससे सिद्ध होता है कि ईश्वर ने हमें जो शक्ति दी है उसका पूरा उपयोग करना और उससे काम लेना भी हमारा एक आवश्यक कर्तव्य है.

प्रभा० : जरूर.

इन्द्र० : परमात्मा की दी हुई एक शक्ति है बुद्धि, उससे पूरा काम लेना भी हमारा एक मुख्य कर्तव्य है. यदि हम सब कुछ ईश्वर ही पर छोड़ बैठें और बुद्धि का सहारा न लें तो यह केवल परमात्मा पर भार डालना ही नहीं वरन् उसका अपमान करना भी होगा.

प्रभा० : इसके क्या माने ?

इन्द्र० : यही कि परमात्मा ने हमें बुद्धि इसीलिए दी है कि हम उससे पूरी

तरह काम लें और अपना तथा दूसरों का हित करें. अगर आवश्यकता पड़े तो अपने शत्रुओं का सामना करने और उन्हें दूर करने में भी उसी बुद्धि से हमें काम लेना चाहिए न कि यह सोच कर चुप बैठे रहना कि परमात्मा आप ही दुष्टों को दण्ड देगा. परमात्मा तो करेगा ही, पर हमारा भी तो कुछ कर्तव्य है, हमारा भी तो कुछ अधिकार है, हमारा भी तो कुछ अंश है, अस्तु सब कुछ परमात्मा के भरोसे छोड़ रखना एक प्रकार की कायरता है जिसे मैं पसन्द नहीं करता और सच तो यह है कि ऐसा करने से दुनिया का काम भी नहीं चल सकता.

प्रभा० : जी हाँ, यह तो आपका कहना ठीक है.

इन्द्र० : तुम्हीं सोचो कि अगर परमात्मा यह न चाहता कि हम बुद्धि से काम लें तो वह हमें बुद्धि देता ही क्यों ? हमें आँखें देखने को मिली हैं, कान सुनने को मिले हैं, हाथ काम करने को मिले हैं, तब क्या एक बुद्धि ही व्यर्थ मिली है ? हमें तो यह जन्म ही कुछ कर जाने के लिए मिला है, चुपचाप परमात्मा पर भरोसा किए बैठे रहने को नहीं. मेरा मतलब यह नहीं कि उस पर भरोसा करना उचित नहीं, बल्कि यह है कि स्वयं भी कुछ करने का साहस रखना उचित है. मुझे तो बड़ा ही आनन्द आता है यदि मैं अपने किसी शत्रु को अपनी चाल से मात कर सकता हूँ. यद्यपि मैं जानता हूँ कि वास्तव में सब का कर्ताधर्ता ईश्वर है पर उसने मुझे अपना जरिया बनाया केवल इतनी-सी बात ही मुझे बहुत बड़ा सन्तोष देती है. (इन्दु की तरफ देख कर) तुमने कुछ कहना चाहा था पर चुप हो रहीं.

इन्दु० : धृष्टता क्षमा हो तो कुछ कहूँ.

इन्द्र० : हाँ हाँ, खुशी से कहो, मैं खूब जानता हूँ कि तुम्हारी बात व्यर्थ कभी न होगी.

इन्दु० : अपने विचारों के कारण ही आपने अपने दुश्मन बहुत ज्यादा बना रक्खे हैं.

इन्द्र० : (हँस कर) सो कैसे ?

इन्दु० : क्या ये दारोगा, जैपाल, हेलासिंह वगैरह आपके सामने एक पल भी ठहर सकते हैं ! आपके बराबर तरह देते चले जाने से ही इनकी तरक्की हो रही है.

इन्द्र० : मैं यही देखना चाहता हूं कि ये सब कहाँ तक करने की कुदरत रखते हैं, मैं अपनी और इनकी हिम्मतों का मुकाबिला किया चाहता हूँ.

प्रभा० : मगर ऐसा करके क्या आप साँपों से खेल नहीं कर रहे हैं! आप उन्हें पकड़ लेंगे तो उनका कुछ न बिगड़ेगा और अगर वे काट लेंगे तो काम तमाम कर देंगे.

इन्द्र० : (हँस कर) मुमकिन है, पर तुम देखोगे कि इस बार मैं इन साँपों के दाँत तोड़ कर ही दम लूँगा, हाँ अगर तुम लोग···

प्रभा० : हम लोग पूरी तरह से आपके साथ तैयार हैं, आप जो भी हुक्म दीजिए उससे पीछे हटने वाले पर मैं लानत भेजता हूँ. सच पूछिये तो मेरा दिल भी कुछ आप ही के ऐसा है. अगर कोई दूसरा मेरे दुश्मन को जान से भी मार डाले तो मुझे प्रसन्नता न होगी पर अपने हाथ से यदि मैं उसे जरा-सा घायल भी कर सकूँगा तो मुझे अत्यन्त सन्तोष होगा.

इन्द्र० : (खुश होकर) बस ऐसी ही हिम्मत रखनी चाहिए, ऐसा ही दिल रखना चाहिए ! खैर यह सब अब जाने दो, यह बेकारी के समय करने की बातें हैं.

प्रभा० : आज दिन भर आप बाहर ही रहे, क्या कुछ काम हुआ ?

इन्द्र० : सिर्फ तीन बातों का पता लगा.

प्रभा० : क्या-क्या ?

इन्द्र० : पहिली यह कि मेरी स्त्री दारोगा के कब्जे में है, दूसरी यह कि इन्दिरा भी वहीं कैद थी परन्तु भूतनाथ ने उसे छुड़ा कर बलभद्रसिंह के पास पहुँचा दिया है, और तीसरी यह कि इस शहर के ये इतने आदमी उस कमेटी में शामिल हैं जिसने जमानिया में तहलका मचा रक्खा है.

इतना कह इन्द्रदेव ने एक लम्बा कागज प्रभाकरसिंह के सामने फेंक दिया जिसमें बहुत-से नाम लिखे हुए थे. प्रभाकरसिंह एक बार गौर के साथ शुरू से आखीर तक उस कागज को पढ़ गये और तब ताज्जुब के साथ इन्द्रदेव का मुँह देखने लगे.

प्रभा० : मुझे स्वप्न में भी गुमान नहीं हो सकता था कि ये इतने नजदीकी और आपुस के आदमी इस कमेटी में शामिल होंगे !

इन्द्र० : इसी से तो यह कमेटी इतनी मजबूत पड़ती थी और बराबर हमारा भण्डा फूटता था. जो हमारे विश्वासी थे और जिनसे हम सलाह लेते थे वे ही उस कमेटी में जाकर हमारा भेद खोलते थे. अब सबसे पहिले इन आदमियों को रास्ते

से दूर करूँगा तब कोई और काम देखा जायगा.

प्रभा० : जरूर ही इनके अलावे और भी लोग कमेटी में होंगे !

इन्द्र० : और नहीं तो क्या ? फिर ये सब तो मामूली लोग हैं, मुख्य-मुख्य कार्यकर्ताओं का तो अभी पता ही नहीं लगा है, उनके लिए बहुत कोशिश दरकार होगी.

प्रभा० : बेशक, मगर इन आदमियों ही के जरिए उनका भी नाम मालूम हो जाना कुछ कठिन नहीं है. अच्छा चाचीजी (सर्यू) और इन्दिरा का पता कैसे लगा ?

इन्द्र० : उनका हाल मेरे एक शागिर्द ने अभी मुझे बताया है. उसने भूतनाथ को इन्दिरा को लिए दारोगा के मकान के बाहर निकलते देखा इसी से उसे शक हुआ और ऐयारी करके उसने पता लगाया कि इन्दिरा की माँ दारोगा ही के कब्जे में है मगर कहाँ या किस हालत में है यह मालूम नहीं हो सका.

प्रभा० : खैर इसका पता लगाना कोई कठिन बात नहीं है, यदि आप आज्ञा दें तो मैं इस खोज में जाऊँ और चाचीजी को छुड़ाऊँ !

इन्द्र० : अगर मुझे यह डर न होता कि तुम्हारे दुश्मन तुम्हें अपने जाल में फँसा लेंगे तो मैं खुशी से तुम्हें जाने की इजाजत देता पर···

प्रभा० : अभी आप ही ने उपदेश किया है कि दुश्मनों के मुकाबिले से कभी डरना न चाहिए और इसके लिए बुद्धि से काम लेना चाहिए, फिर यह सब सोचना क्या ! फँस जाने के डर से क्या घर में चूड़ी पहिन कर बैठे रहना उचित होगा ?

इन्द्र० : तुम्हारी हिम्मत देख मुझे बड़ा आनन्द होता है, अच्छा कोई हर्ज नहीं, तुम अगर यही चाहते हो तो जाओ, अपनी हिम्मत से काम लो और हौसला निकालो. तुम्हारे काम में मदद देने के लिए मैं दो-एक अनमोल चीजें दूंगा जिनसे तुम्हें बहुत सहायता मिलेगी. तुम कब जाना चाहते हो ?

प्रभा० : अभी इसी समय. यह रात का वक्त मेरी बहुत कुछ सहायता करेगा.

इन्द्र० : अच्छी बात है, तो उठो, मैं वे चीजें तुम्हारे हवाले कर दूँ और कई जरूरी बातें भी समझा दूँ.

लगभग आध घण्टे बाद हम प्रभाकरसिंह को सूरत बदले हुए एक चोर दरवाजे की राह मकान के बाहर निकलते देखते हैं. इस समय उनका वेष कुछ अजीब-सा हो रहा है. उनकी छाती तक लहराती हुई सुफेद दाढ़ी, सुफेद ही सिर-मोंछ के

बाल, और चेहरे पर पड़ी हुई सैंकड़ों सिकुड़नें जो देखेगा वह अस्सी बरस से कम का मानने को तैयार न होगा, क्योंकि कमर भी उनकी इस समय बुढ़ापे के बोझ से झुकी-सी मालूम हो रही है और वह हाथ जिसमें काले रंग का एक विचित्र और टेढ़ा मगर मजबूत डण्डा है कमजोरी के कारण काँप रहा है. बदन में गेरुआ रंग का एड़ी तक पहुँचता हुआ ढीला-ढाला कुरता जिसमें समूचा बदन इस तरह ढका हुआ है कि बिल्कुल पता नहीं लगता कि भीतर किस तरह की पोशाक या सामान से उन्होंने अपने को लैस किया हुआ है. बाएं हाथ में एक कमंडल है जिस पर मोटे-मोटे रुद्राक्ष के दानों की माला लपेटी हुई है और गले में भी वैसी ही लम्बी माला पड़ी हुई है तथा माथे पर सुफेद त्रिपुण्ड लगा हुआ है, गरज कि सब तरह से पूरे सिद्ध वृद्ध तपस्वी बाबा बने हुए हैं.

मकान से निकल कर प्रभाकरसिंह ने सीधे दारोगा साहब के घर का रास्ता लिया और धीरे-धीरे मस्तानी चाल से चलते हुए कुछ समय में वहाँ जा पहुँचे. मामूल के मुताबिक फाटक पर कई सिपाही पहरा दे रहे थे जिनमें से एक की तरफ देख नकली बाबाजी (प्रभाकरसिंह) ने कुछ हुकूमत भरे स्वर में कहा, "जाओ अपने मालिक से कहो, मस्तनाथ बाबा आये हैं और फाटक पर खड़े हैं."

सिपाही ने एक निगाह सिर से पैर तक हमारे बाबाजी पर डाली और कोई मामूली साधु समझ कर कहा, "हमारे मालिक की तबीयत आजकल ठीक नहीं है, इतनी रात गये अब उनसे मुलाकात नहीं हो सकती."

बाबाजी : तुम जाकर खबर तो करो, वह मेरा नाम सुनते ही मेरे दर्शन करने को व्याकुल हो जाएगा.

सिपाही : दारोगाजी का हुक्म है कि संध्या के बाद कोई बाहरी आदमी उनके पास न आने पाए !

बाबाजी : (बिगड़ कर) अबे तू जाकर कहता है कि नहीं !!

सिपाही : अबे-तबे क्या करते हो जी ! एक दफे कह तो दिया कि इस वक्त मुलाकात नहीं हो सकती, कल दिन में आना!!

यह बात सुनते ही बाबाजी ने एक कड़ी निगाह उस सिपाही पर डाली और डपट कर कहा, "तू नहीं जायगा !" घमण्ड में भरे सिपाही ने भी तन कर जवाब दिया—"नहीं !!" इतना सुनना था कि बाबाजी ने हाथ वाला डण्डा उस सिपाही के बदन से छुला दिया और मुँह से मानो कोई मंत्र पढ़ा. डंडे का छूना था कि

सिपाही को ऐसा मालूम हुआ मानो उसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो. वह जमीन पर गिर पड़ा और बेतहाशा चिल्लाने लगा. बाबाजी ने उसकी तरफ देखकर कहा, "क्यों, नहीं जायगा ! अब बोल ! !" और दूसरे सिपाही की तरफ मुखातिब होकर बोले, "तुम जाकर खबर करते हो या तुम्हारी भी यही गत करूँ ?"

एक डरती हुई निगाह उस सिपाही ने अपने साथी पर डाली और तब हाथ जोड़कर कहा, "महाराज मैं अभी जाकर इत्तिला करता हूँ. तब तक आप इस चौकी पर विराजें." इतना कह वह तुरन्त भीतर चला गया. बाबाजी ने बैठना मंजूर न किया बल्कि वहीं पर इधर से उधर टहलने लगे. अचानक उन्होंने देखा कि एक रथ जिसमें दो मजबूत बैल जुते हुए थे और जिसके पहियों पर पड़ी धूल बता रही थी कि कहीं बहुत दूर से चला आ रहा है सामने की सड़क से आया और दारोगा साहब के मकान के बगल वाली गली में घूम गया. टहलते हुए ये भी उस गली के मोड़ तक जा पहुँचे और वहाँ से उन्होंने देखा कि मकान का एक दरवाजा खुला और दो व्यक्ति रथ से उतर अन्दर चले गये. अंधेरे के कारण यद्यपि यह पता न लगा कि ये दोनों मर्द थे या औरत पर रथ दरवाजे ही पर खड़े रहने से यह प्रकट होता था कि ये दोनों (चाहे जो भी हों) शीघ्र ही वापस भी लौटेंगे अस्तु प्रभाकरसिंह ने सोचा कि उस समय पता लगाना चाहिये कि ये दोनों सवार कौन हैं और कहाँ से आ रहे हैं.

एक ही निगाह में यह सब देख नकली बाबाजी लौट पड़े ताकि किसी को किसी तरह का शक होने न पावे. उसी समय वह सिपाही भी जो इत्तिला करने को भीतर गया था लौट आया और बाबाजी से बोला, "चलिये आपकी बुलाहट है." नकली बाबाजी भीतर चलने को तैयार हुए मगर उसी समय दरवाजे के और सिपाहियों ने गिड़गिड़ा कर कहा, "बाबाजी, दया करके इस हमारे साथी पर से अपना मन्त्र हटा लीजिये, देखिये यह मछली की तरह तड़प रहा है !" बाबाजी ने उस तरफ देखा जिधर वह सिपाही अभी तक जमीन पर पड़ा-पड़ा हाय-हाय कर चिल्ला और छटपटा रहा था, और तब बोले, "यह दुष्ट इसी लायक है !" मगर सिपाहियों ने बेतरह गिड़गिड़ाना शुरू किया जिससे उन्होंने कहा, "अच्छा उसे मेरे पास लाओ."

दो सिपाही पकड़-धकड़ कर उसे बाबाजी के पास लाये. बाबाजी ने मुँह से कुछ मंत्र पढ़ा और कई बार पुनः उसी डण्डे से छूआ. ताज्जुब की बात थी कि

उस आदमी की तकलीफ जिस तरह शुरू हुई थी वैसे ही दूर भी हो गई. दर्द बिल्कुल जाता रहा और यह भला-चंगा हो बाबाजी के पैरों पर गिर पड़ा. बाबाजी ने उससे कहा, "खबरदार, आगे फिर कभी किसी सिद्धबाबा की अवज्ञा न करना ! !" और भीतर चलने को तैयार हुए. एक सिपाही अदब के साथ आगे हो लिया और मस्तानी चाल से चलते और धीरे-धीरे न जाने क्या बुदबुदाते हुए बाबाजी उसके पीछे चल पड़े.

अदब और इज्जत के साथ अनोखे सिद्ध बाबाजी दारोगा साहब के सामने पहुँचाए गये जो उस समय बीमार और सुस्त एक मसहरी पर पड़े हुए थे और नौकर सिरहाने बैठा किसी दवा से तर एक कपड़े से उनके सिर को ठण्डक पहुँचा रहा था. उस बड़े कमरे में सिवाय दारोगा साहब या उस नौकर के और कोई न था, परन्तु बगल के दरवाजे पर पड़ी चिक के हिलने से बाबाजी को मालूम हो गया कि इसके अन्दर कोई औरत अवश्य है जिसने पर्दे की आड़ से बखूबी उन्हें देखा है. एक ही निगाह चिक पर डाल बाबाजी ने दारोगा साहब की ओर नजर फेरी और सहानुभूति के साथ कहा, "हैं बेटा जद्दू ! यह तेरा क्या हाल है ?"

बाबाजी की सूरत-शक्ल और स्वर से दारोगा साहब कुछ चौंके और कुछ देर तक बड़े गौर से उनकी तरफ देखने के बाद यकायक प्रसन्न होकर बोल उठे, "अहा हा ! आइये सिद्धजी ! !"

दारोगा साहब कोशिश कर उठ बैठे और बाबा मस्तनाथ के दोनों पैर छूकर उन्होंने आँखों से लगाया. मस्तनाथ बाबाजी ने पीठ पर हाथ फेर बहुत कुछ आशीर्वाद दिया और पुन: पूछा, "बेटा, यह तेरा क्या हाल है ? इस तरह बदन में जगह-जगह पट्टियाँ क्यों बंधी हुई हैं, तेरा चेहरा क्यों उतरा हुआ है, आवाज क्यों कमजोर हो रही है ?"

दारोगा : गुरुजी, अब आप आ गये हैं तो सब हाल सुनियेगा ही. पर इस समय तो मैं सिर के दर्द से मरा जा रहा हूँ, मालूम होता है सर फट जायेगा, बोलना कठिन हो रहा है.

मस्तनाथ : हैं, यह बात है ! ले अभी यह कष्ट दूर करता हूँ ! !

इतना कह मस्तनाथ ने अपना डण्डा दारोगा साहब के माथे से छुला दिया और मुँह से कुछ मन्त्र पढ़ा. डण्डे का छूना था कि दारोगा साहब के सर का दर्द काफूर हो गया और बेचैनी तथा घबड़ाहट बिल्कुल दूर हो गई. दारोगा साहब ने

ताज्जुब में भर कर मस्तनाथ के पैरों पर सिर रख दिया और कहा, "गुरुजी, आप धन्य हैं. अब मुझे आशा होती है कि बाकी के कष्टों को भी आप इसी तरह दूर कर देंगे."

मस्त० : हाँ हाँ, जो कुछ तकलीफ हो मुझसे कह, गुरु की कृपा से बात की बात में दूर हो जायेगी.

दारोगा : जी हाँ, सब बयान करता हूँ, परन्तु पहिले यह सुन लेना चाहता हूँ कि आज मेरे कौन से पुण्य उदय हो गये जो अचानक आपके चरणों का दर्शन हुआ ?

मस्त० : कुछ नहीं, आज सुबह गिरनार के जंगलों में ध्यान लगा रहा था कि अचानक आचार्य श्री के चरणों का दर्शन हुआ, उन्होंने कुछ उपदेश किया और आज्ञा दी कि तुरन्त जमानिया जाओ, वहाँ मेरा शिष्य कष्ट में है उसे देखो और सहायता दो. कुछ और भी सेवा की आज्ञा हुई. तुरन्त तैयार हो गया और श्री जी की कृपा से इस समय अपने को यहाँ पा रहा हूँ.

दारोगा : (हाथ जोड़कर) अचार्य श्री जी की मुझ पर बड़ी दया रहती है. आज सुबह ही कष्ट से अत्यन्त व्याकुल होकर मैंने उनका ध्यान किया था और तुरन्त उन्होंने दास की विनती सुनी, वाह ! धन्य हैं ! !

मस्त० : सभी पर उनकी ऐसी ही दया रहती है अभी उस दिन...पर जाने दो, उन सबसे कोई मतलब नहीं. तुम अपने कष्ट कहो ताकि जो कुछ मुझसे हो सके करूँ और जाऊँ, क्योंकि अभी आचार्य चरण की और भी कई आज्ञाएँ पूरी करनी हैं.

दारोगा : यह तो होगा नहीं, अभी तो मैं आपको जाने नहीं दूँगा. इतने वर्षों के बाद दर्शन हुआ है अब इतना शीघ्र क्या छोड़ने वाला हूँ !

मस्त० : (हँस कर) तेरी भक्ति का हाल तो मुझे मालूम है पर गुरु का काम देखना भी तो आवश्यक है.

दारोगा : अब गुरुजी से आप इजाजत ले लें, मेरी तरफ से हाथ जोड़ कर कह दें कि जल्दी न करें, कुछ मेरी सेवा भी तो स्वीकार करें.

मस्त० : अच्छा-अच्छा कोई हर्ज नहीं, वे मुझ पर जितना प्रेम रखते हैं उससे अवश्य तेरी प्रार्थना स्वीकार करेंगे इसमें संदेह नहीं. मैं आज ध्यान में उनसे निवेदन कर दूँगा, मगर अब तू अपने कष्टों को मुझसे बयान कर जा क्योंकि

आचार्य चरण की आज्ञा है कि जाते ही पहले जद्दू के दुःख दूर करके तब कोई दूसरा काम करना. अस्तु तू बिना एक क्षण का विलम्ब किए मुझसे सब हाल कह जा. ये चोटें तेरे शरीर पर कैसी लगी हैं ?

दारोगा : (सिद्धजी के पास खसक कर और धीरे से) गुरुजी, क्या बताऊँ, एक गदाधरसिंह नाम का ऐयार मेरी जान का ग्राहक बना हुआ है, उसी ने तीन-चार दिन हुए मुझे सख्त जख्मी किया और मेरी बहुत सी जरूरी चीजें भी चुरा ले गया, उस पर अब...

मस्त० : गदाधरसिंह ! कौन गदाधरसिंह ? यह नाम तो मेरा सुना हुआ है, वही लड़का तो नहीं जिसे मेरे गुरुभाई देवदत्त ब्रह्मचारी ने पाल कर ऐयारी सिखाई थी ?

दारोगा : जी हाँ, जी हाँ वही !

मस्त० : अच्छा, उसने तुझसे दुश्मनी पर कमर बाँधी है ! मगर वह तो बड़ा सीधा लड़का था !

दारोगा : जी सीधा है ! अरे वह तो ऐसा आफत का परकाला है कि मेरे नाक में दम कर रक्खा है ! उसे आप बिल्कुल काला नाग समझिए, उसने तो मुझे इतनी तकलीफें दी हैं कि मेरा ही जी जानता है.

मस्त० : हैं ऐसी बात ! (क्रोध का भाव कर और डण्डा उठा कर) मैं उसे अभी भस्म कर देता हूँ ! उसकी मजाल कि वह मेरे भक्त को कष्ट दे ! !
(आँख मूंद और ध्यान लगा कर कुछ मन्त्र पढ़ते हैं.)

यह देख दारोगा का कलेजा उछल पड़ा कि सिद्धजी की देह में से आग की चिनगारियां निकल रही हैं मानो उनका क्रोध अग्निस्वरूप होकर निकल रहा है और अभी संसार को भस्म कर देगा. दारोगा का दिल यह सोच नाच उठा कि अब मेरा यह सबसे भारी दुश्मन और बगली कांटा दूर हुआ चाहता है !

सिद्ध० : (आँखें खोल कर और मस्ती के साथ झूम कर) क्या हर्ज है, जा इस बार छोड़ देता हूँ, मगर फिर कभी ऐसा करने की हिम्मत न करना. (दारोगा की तरफ देख और मानो चौंक कर) क्या बताऊँ मैं तो उसे अभी भस्म कर रहा था पर ब्रह्मचारीजी के प्रेम ने रोक दिया. खैर कोई हर्ज नहीं, तीन दिन के भीतर तू देखेगा वह तेरे पैरों पर लोटेगा.

दारोगा : (प्रसन्न होकर) गुरुजी, कुछ ऐसा उपाय कर दीजिए कि वह

सदा के लिए मेरे अधीन हो जाय.

सिद्ध० : ऐसा ही होगा. मेरा वचन कभी मिथ्या न होगा. तू देखियो, मेरी मन्त्र-शक्ति के प्रभाव से वह तेरा दास हो जायगा. और बता क्या है ? बता जल्दी बता !

दारोगा : आपकी इस एक ही दया ने मेरे समूचे कष्ट दूर कर दिए. फिर भी आज्ञा हो तो एक प्रार्थना करूँ.

सिद्ध० : कह जल्दी कह.

दारोगा : बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि लोहगढ़ी का अद्‌भुत खजाना मेरे कब्जे में आ जाय. आप दया कर कोई ऐसा उपाय कर दें कि मेरी यह इच्छा पूरी हो जाय·

सिद्ध० : लोहगढ़ी ! लोहगढ़ी ! ! (आँख मूँद और ध्यान लगा कर) हाँ अब समझा. तिलिस्म का वह हिस्सा जिसकी उम्र समाप्त हो चुकी, जिसकी अद्‌भुत चीजें देख सिद्धों का मन भी लालच में आ जाय, वह तिलिस्म जिसका भेद इस समय दुनिया में सिर्फ तीन ही आदमी जानते हैं, यह मेरा शिष्य भी कैसी-कैसी जगह हाथ बढ़ाता है. (आँखें खोल और मुस्कुरा कर) अच्छा तो तू लोहगढ़ी का खजाना चाहता है ?

दारोगा : अगर आपकी दया हो जाय.

सिद्ध० : कार्य तो बड़ा कठिन है पर क्या किया जाय, तेरा प्रेम मुझे बाध्य करता है ! अच्छा कोई हर्ज नहीं, गुरु की कृपा से तेरी इच्छा पूरी हो जायेगी.

दारोगा : (प्रसन्न होकर) हाँ ?

सिद्ध० : अवश्य, पर मुझे इसमें तीन कण्टक दिखाई पड़ते हैं.

दारोगा : सो क्या ?

सिद्ध० : खैर कोई बात नहीं, तुझे कहने से लाभ क्या ? मैं सभी कण्टक दूर कर लूँगा और परमात्मा की इच्छा हुई तो एक सप्ताह के अन्दर वह तिलिस्म तेरे हाथों से तुड़वा भी दूँगा. तू कल आधी रात को तैयार रहियो, उस समय उसके तोड़ने में हाथ लगाना होगा.

दारोगा : (खुशी से फूल कर) बहुत अच्छा, मैं तैयार रहूँगा.

सिद्ध० : अच्छा और कोई बात हो तो कह ?

दारोगा : बातें तो बहुत सी थीं पर आपके दर्शन होते ही मेरे कष्ट ऐसे भाग

गए मानो कभी थे ही नहीं.

सिद्ध० : (हँस कर) सब गुरु चरणों की कृपा है, मैं क्या चीज हूँ. अच्छा अब मैं चलता हूँ. कल आधी रात को तैयार रहियो.

दारोगा : मगर आप चले कहाँ, कुछ आराम तो कर लें !

सिद्ध० : मुझे अपने भक्त इन्द्रदेव को भी देखना है, उस पर भी सुना है, बड़े कष्ट आ पड़े हैं, उन्हें दूर करना आवश्यक है.

दारोगा : (कुछ चिन्तित होकर) अच्छा कल सुबह चले जाइएगा. इस समय रात के वक्त कहाँ कष्ट कीजिएगा.

सिद्ध० : मेरे लिए रात-दिन सब बराबर हैं. अच्छा वह इस समय है कहाँ ? (आँख मूँद कर) अरे, वह तो इसी शहर में है ! मगर हैं, यह क्या ? (आँख खोल कर) अरे जद्दू, यह तैंने क्या किया ! !

दारोगा : (काँप कर) मैंने क्या किया गुरुजी !

सिद्ध० : (क्रोध के मारे लाल आँखें करके)क्या किया ! फिर पूछता है क्या किया ! ! शैतान कहीं का ! क्या मुझसे कोई बात छिपी रह सकती है ! बता उसकी स्त्री और लड़की को क्यों पकड़ा ? (उठ कर) बोल जल्दी !!

दारोगा : (सिद्धजी का क्रोध देख काँपकर) जी गुरुजी, ई, ई, ई, मैं...

दारोगा की घबराहट देख सिद्धजी का क्रोध और भी भभका. उन्होंने लाल आँखें कर लीं और बार-बार अपने डण्डे को जमीन पर पटकने लगे. पटकते ही उस डण्डे में से आग की लपटें निकलने लगीं. उन्होंने डण्डे को ऊपर उठाया और गरज कर कहा, "दुष्ट, अभी बता कि मेरे शिष्य इन्द्रदेव की स्त्री और बेटी कहाँ हैं, नहीं तो मैं तुझे भस्म करता हूँ !"

सिद्धजी का क्रोध देख दारोगा के तो हवास गुम हो गए. वह मन ही मन कहने लगा, "ऐसे आने से तो इनका नहीं आना ही अच्छा था ! कहाँ की मुसीबत में जान पड़ गई, इनका खूनी डंडा तो मुझे भस्म ही किया चाहता है!" सिद्धजी फिर बोले, "नालायक, तुझे शर्म नहीं आती ! अपने गुरुभाई के साथ यह व्यवहार ! क्या तू वह दिन भूल गया जब तू और वह एक साथ पढ़ा करते थे ! क्या तू भूल गया कि किस तरह अपनी जान पर खेल कर इन्द्रदेव ने तुझे पागल हाथी के पैरों के नीचे से खींचा था ! क्या तू भूल गया कि मैंने चलती समय कह दिया था कि तू सब कुछ कीजियो पर इन्द्रदेव की तरफ टेढ़ी निगाह से कभी न देखियो !

कम्बख्त, तू एकदम नालायक है ! तू मेरी कृपा का पात्र नहीं. अब मुझसे किसी बात की आशा न रख, और न यही समझ कि लोहगढ़ी का अनमोल खजाना मैं तुझे दिलवाऊँगा. पापी, तू इसके योग्य नहीं है !"

अब दारोगा की घबराहट का ठिकाना न रहा. उसने सोचा कि यह हाथ आई रकम निकली जाती है. अगर लोहगढ़ी की अद्भुत चीजें उसे मिल गईं तो न जाने कितने इन्द्रदेव उसके तलुए चाटा करेंगे. इस समय एक मामूली सी बात के लिए सिद्धजी को नाराज करना बुद्धिमानी नहीं, इन्हें ठंडा करना चाहिए.

दारोगा : (हाथ जोड़ कर और सिद्धजी के पैरों पर सिर रख कर) गुरुजी, आप तो व्यर्थ ही दास पर रुष्ट होते हैं. भला मेरी मजाल है जो आपकी आज्ञा का उल्लंघन करूँ ? मैंने इन्द्रदेव के साथ कोई बुराई नहीं की बल्कि भलाई की है जो उसकी स्त्री को अपने यहाँ रख छोड़ा है नहीं तो दुश्मन उसे जान से मार डालते.

सिद्ध० : (कुछ शान्त होकर) स्त्री को ! केवल स्त्री को ! और उसकी बेटी कहाँ है ?

दारोगा : गुरुजी, उस लड़की को तो वही दुष्ट गदाधरसिंह चुरा ले गया. न जाने जीता भी रक्खा है या मार डाला है.

सिद्ध० : (दाँत पीस कर) अच्छा कोई हर्ज नहीं. अगर उस पापी ने उस बेचारी लड़की को जरा भी कष्ट पहुंचाया होगा तो मैं उसके कुटुम्ब भर का सत्यानाश कर दूंगा, वह जा कहाँ सकता है ? अच्छा तू उसकी स्त्री को ही ला, अभी ला ! इसी समय ला ! ! तुरत ला ! !

दारोगा : जी अभी उसे बुलवा देता हूँ. उसे दुश्मनों ने मार डालना चाहा था पर मैंने अपनी जान पर खेल कर उसे बचाया और अभी तक जीता रख छोड़ा है. भला मैं कभी इन्द्रदेव की कोई बुराई कर सकता हूँ ? मैं तो सोच ही रहा था कि कोई मौक़ा मिले और उसे इन्द्रदेव के पास पहुँचाऊँ.

सिद्ध० : (शान्त होकर) अच्छा तो उसे बुला ! मैं अभी उसे लेकर इन्द्रदेव के पास जाऊँगा.

दारोगा ने अपने पास से तालियों का गुच्छा निकाला और उस नौकर के हाथ में देकर, जो वहाँ बैठा ताज्जुब से यह हाल देख रहा था, कान में कुछ समझाया. नौकर गुच्छा लेकर चला गया और दारोगा सिद्धजी की तरफ घूमा.

सिद्ध० : तैंने अच्छा किया जो मेरा क्रोध बढ़ने न दिया, नहीं तो आज तुझमें

और मृत्यु में बाल भर ही का अन्तर रह गया था. पर अब मेरे इस योगदण्ड को जो क्रोध आ गया है वह मैं किस पर निकालूं ? इसका क्रोध तो व्यर्थ नहीं जा सकता ! अच्छा ! !

इतना कह सिद्धजी ने अपना विचित्र डंडा जिसमें से अभी तक आग की लपटें निकल रही थीं, उस पर्दे से लगा दिया जो पास वाले दरवाजे पर पड़ा था. डंडा छूते ही वह भक से जल गया और सिद्धजी ने उसकी आड़ में से भागती हुई मनोरमा और नागर की एक झलक देखकर पहिचान लिया, मगर अपने भाव से कुछ भी प्रकट होने न दिया. दारोगा डर से काँपता हुआ चुपचाप उनके इस भयानक डंडे की अद्‌भुत करामात देखने लगा.

थोड़ी ही देर बाद वह नौकर अपने साथ एक औरत को लिए वापस लौटा. सिद्धजी ने पहिली ही निगाह में पहिचान लिया कि यह इन्द्रदेव की स्त्री सर्यू है. इस समय सर्यू की यह हालत हो रही थी मानो वर्षों की बीमार हो. बदन में खून का तो नाम-निशान नहीं था,चेहरा पीला हो गया था, बदन सूख कर काँटा हो गया था और कमजोरी इतनी अधिक थी कि एक-एक कदम उठाना मुश्किल हो रहा था. प्रभाकरसिंह की आँखों में उसकी हालत देख आँसू आ गये पर बड़ी कोशिश से उन्होंने अपने भावों को छिपाया और दारोगा से कहा, "क्या यही इन्द्रदेव की स्त्री है ?"

दारोगा : जी हाँ.

सिद्ध० : (सर्यू से) बेटी सर्यू, आ मेरे पास आ ! तू तो शायद मुझे न जानती होगी पर यह यदुनाथ और तेरा पति इन्द्रदेव मुझे अच्छी तरह जानते हैं क्योंकि दोनों ने लड़कपन में कुछ समय तक मुझसे विद्याध्ययन किया है. मैं तुझे अभी तेरे पति के पास ले चलता हूँ. (दारोगा से) मैं इस लड़की को ले चलता हूँ, इस समय सीधा इन्द्रदेव के पास जाऊँगा और उसकी बातें सुनूंगा.

दारोगा : बहुत अच्छा, मैं सवारी मँगा देता हूँ.

सिद्ध० : नहीं इसकी कोई आवश्यकता नहीं.

दारोगा : आपकी शक्ति को तो मैं जानता हूँ, आप पल भर में जहाँ चाहें वहाँ जाने की सामर्थ्य रखते हैं. पर बेचारी यह सर्यू बीमारी के कारण बहुत ही दुखी हो रही है, इसे वहाँ तक जाने में अवश्य कष्ट होगा (नौकर की तरफ देख कर) जाओ जल्दी सवारी का बन्दोबस्त करो.

नौकर चला गया और दारोगा ने पुनः कहा, "तो गुरुजी, कल रात को पुनः दर्शन होंगे !"

सिद्ध० : हाँ—यद्यपि तेरी करतूत देख इच्छा तो नहीं होती पर फिर भी वचन दे चुका हूँ इससे आऊँगा और तुझे साथ ले चल कर लोहगढ़ी का भेद समझा दूंगा, तू आप ही उसका तिलिस्म तोड़ लीजियो.

दारोगा : पर गुरुजी, मैंने तो सुना है कि उसका हाल किसी किताब में लिखा है और जिसके पास वह किताब नहीं होगी वह उसे तोड़ नहीं सकता.

सिद्ध० : ऐसी-ऐसी किताबें मेरे नाखूनों में रहती हैं ! क्या किताबों के भरोसे मैं सिद्ध हुआ हूँ ? कह तो यहाँ बैठे-बैठे केवल इस डंडे के जोर से वहाँ का सारा माल तेरे सामने ला रक्खूं, तैंने मुझे समझा क्या है !

सिद्धजी की बातें सुन दारोगा की तबीयत खिल गई. उसने समझ लिया कि अब लोहगढ़ी का अद्भुत खजाना उसका हो गया. वह अपने भाग्य की सराहना करता हुआ कल की रात आने की राह देखने लगा.

नौकर ने आकर सवारी तैयार होने की खबर दी और सिद्धजी महाराज सबों को लिए उठ खड़े हुए. कमजोर होने पर भी दारोगा इज्जत के साथ उन्हें पहुँचाने दरवाजे तक आया और जब वे रथ पर चढ़ गये और रथ रवाना हो गया तो मन ही मन प्रसन्न होता हुआ भीतर लौटा.

5

बाबाजी (दारोगा साहब) की कृपा से नागर अब ऊँचे दर्जे की रंडियों में गिनी जाने लगी है. बाजार का बैठना एक तरह पर उसने बिल्कुल ही छोड़ दिया है उस पुराने मकान को भी उसने छोड़ दिया है और एक दूसरे आलीशान मकान में डेरा जमाये हुए है, जिसमें आने-जाने के कई दरवाजे हैं जो तरह-तरह के काम में आते हैं क्योंकि चाहे दारोगा साहब को यही विश्वास हो कि नागर उनके सिवाय और किसी की शक्ल नहीं देखती पर नागर के पुराने प्रेमी लोग इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं हैं और इसी से मौके-बेमौके कोई-न-कोई उसके सुन्दर सजे हुए कमरे में नजर आता ही रहता है. धूर्ता नागर भी अपनी आमदनी बन्द करना पसन्द न करके खास प्रेमियों और उभरते हुए नौजवानों पर अपनी कृपा

बनाये ही रखती है और दिल्लगी तो यह कि उनमें से हर एक यही समझता है कि नागर उसी की है, उसी की रहेगी, और जो कुछ उससे पाती है उसी से अपना खर्चा चलाती हुई किसी दूसरे की तरफ झाँकती भी नहीं. यह सोच कर वे लोग और भी उल्लू बनते हैं और उसकी तरह-तरह की बेढब फरमाइशों को खुशी से पूरा करते हैं.

रात पहर भर के लगभग जा चुकी होगी. अपने मकान की छत पर नागर एक ऊँची गद्दी पर मसनद के सहारे अधलेटी-सी पड़ी हुई है. उसके सामने एक छोटा सितार है जिसकी तारों को वह कभी-कभी छेड़ देती है. सुन्दर चाँदनी चारों ओर छिटकी हुई है, ठण्डी हवा के झोंके नीचे बाग में से नाजुक फूलों की खुशबू लिए ऊपर पहुंचते हैं और नागर के दिमाग को मुअत्तर करते हैं पर उसकी आकृति से मालूम होता है कि वह इस समय किसी चिन्ता में डूबी हुई है और उसका मन किसी दूसरी ही दुनिया में चक्कर लगा रहा है.

कुछ देर बाद एक लम्बी साँस लेकर उसने मानों चिन्ता के बोझ को कुछ देर के लिए दूर किया और सितार उठा कर कुछ गुनगुनाना शुरू किया. नागर गाती बहुत ही अच्छा थी और उसका गला भी बड़ा ही सुरीला था. अस्तु इस चाँदनी रात के सन्नाटे में सितार के मधुर स्वर के साथ उसके मनोहर गाने ने अजीब ही असर पैदा करना शुरू किया.

सड़क पर जाते हुए एक नौजवान सवार के कानों में दर्द भरे गले की एक तान पड़ी जिसने उसे बेचैन कर दिया. उसने घोड़े की लगाम खींची और कुछ देर के लिए रुककर सुनने लगा, पर नागर का गाना सुनने के लिये कुछ देर के लिए भी ठिठकना गजब था. उस नौजवान के दिल ने उसे इजाजत न दी कि घोड़े को तेज करे और अपने रास्ते पर बढ़ जाय. वह घोड़े से उतर पड़ा और नागर के मकान के फाटक पर पहुँच उसके नौकरों से कुछ कहा. एक लौंडी दौड़ी हुई गई और नागर के पास पहुँच उसके कान में कुछ बोली. लौंडी की बात सुनते ही नागर चौंक पड़ी, सितार उसके हाथ से छूट गया और उसके चेहरे से उत्कंठा के साथ-साथ एक तरह की प्रसन्नता प्रकट होने लगी, जिसने थोड़ी देर के लिए उसके गालों को गुलाबी कर दिया. उसने लौंडी से कुछ पूछा और अनुकूल उत्तर पा मुस्कुरा उठी. लौंडी चली गई और नागर एक आलमारी के पास पहुँची जिसमें बहुत से चित्र रक्खे हुए थे. उनमें से खोज कर एक तस्वीर उसने उठा ली और उसे

लिए अपनी जगह पर आ बैठी. तस्वीर सामने रख ली और सितार उठा पुन: गाना शुरू कर दिया.

थोड़ी देर बाद लौंडी उस नौजवान को लिये हुए वहीं आ पहुँची जहाँ नागर बैठी हुई थी. नौजवान की सूरत देखते ही नागर मानों चिहुँक-सी उठी, सितार हाथ से छोड़ दिया और बदहवास की सी तरह बन आँखें मलती हुई उस नौजवान की सूरत देखने लगी. मगर यह हालत भी उसकी देर तक न रही, शीघ्र ही मानो उसने अपने इस दोस्त को पहिचान लिया और एक चीख मार कर अपनी जगह से उठ उसके गले से जा चिपटी.

नागर की लौंडी यह अवस्था देख विचित्र तरह से मुस्कुराती हुई छत के नीचे उतर गई और वह नौजवान नागर को दम-दिलासा देता हुआ उसकी गद्दी पर ले आया जहाँ दोनों बैठ गये. नागर की आँखों से आँसू गिर कर उसके आँचल को तर कर रहे थे. नौजवान ने अपने दुपट्टे से उन्हें पोंछा और उसे अपने कलेजे से लगा मीठी-मीठी और मन लुभाने वाली बातें करने लगा जो ऐसे मौके पर अक्सर वफादार आशिक अपनी बेवफा रंडियों से किया करते हैं.

कुछ देर बाद नागर ने अपने को चैतन्य किया और दोनों हाथों से नौजवान का चेहरा चन्द्रमा की तरफ घुमा बड़े प्यार की निगाहों से उसे देखती हुई बोली, "आज मेरी किस आह ने तुम्हारे दिल पर असर किया जो यह भोली सूरत देखने को मिली !"

नौज० : (हँस कर) शुक्र है कि तुम्हें अपने आशिकों से इतनी फुरसत तो मिली कि तुम्हारे दिल ने इस दिलजले को याद किया !

नागर : (बिगड़ कर और नौजवान से दूर हट कर) जाओ जाओ ! महीनों बाद तो सूरत दिखलाई है और आते ही जली-कटी बातें सुनाने लगे ! सच कहा है कि मर्दों को दर्द नहीं होता !

नौज० : (नागर को पास खींच कर और उसके गले में हाथ डाल कर) यह तुम साफ झूठ बोल रही हो. भला कहो तो सही इस बीच में कितनी बार इस गरीब की याद तुम्हें आई थी ?

नागर : जी एक दफे नहीं. बस अब तो खुश हो !

इतने ही में नागर की निगाह उस तस्वीर पर पड़ी जो कुछ ही देर पहिले उसने आलमारी से निकाल सामने रक्खी थी. उसने उसे हटा कर गद्दी के नीचे

छिपाने के लिए हाथ बढ़ाया पर उसी समय नौजवान ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "यह किस भाग्यवान की तस्वीर सामने रख छोड़ी है, जरा मैं भी तो देखूँ."

नागर : (हाथ झटक कर और तस्वीर गद्दी के नीचे दबा कर) होगी किसी की, तुम्हें मतलब !

नौज० : तो भी, अगर बतला दोगी तो क्या कोई हर्ज होगा !

नागर : हाँ बहुत बड़ा.

नौज० : क्या ?

नागर : तस्वीर देख कर तुम उस बेवफा का नाम पूछोगे और नाम लेने से मेरे कलेजे की आग बाहर निकल पड़ेगी जिससे तुम जल जाओगे.

नौज० : वाह ! तब तो यह अद्भुत तस्वीर किसी अजायबघर में रखने लायक है, मैं इसे जरूर देखूँगा.

इतना कह कर नागर के रोकने पर भी नौजवान ने हाथ बढ़ा कर वह तस्वीर निकाल ली और चन्द्रमा की रोशनी में उसे देखा. एक खूबसूरत नौजवान की तस्वीर थी जिसके नीचे लिखा था 'श्यामलाल'.

तस्वीर देखते ही और यह जानते ही कि यह उसी की तस्वीर है नौजवान मुस्कुरा उठा और तस्वीर दूर फेंक नागर को अपनी तरफ खेंच कलेजे से लगाता हुआ बोला, "भला यह तो बताओ इस समय मेरी तस्वीर सामने रख तुम क्या कर रही थीं !"

नागर : (श्यामलाल के गले में हाथ डाल कर) तुम्हारी कसम सच कहती हूँ आज तुम्हारी याद ने मुझे बेतरह सता रक्खा था. लाख दिल को समझाती थी पर वह कम्बख्त मानता ही न था. लाचार जब कुछ बस न चला तो तुम्हारी तस्वीर सामने रख अपने मचले हुए दिल को फुसलाने की कोशिश कर रही थी, जब तुम नजर आये.

इतना कह कर नागर ने शर्मा कर श्यामलाल की गोद में मुँह छिपा लिया और श्यामलाल ने उसके इस प्रेम का बदला भरपूर चुका दिया. कुछ देर इसी तरह की चुहल में गुजर गई और तब फिर यों बातें होने लगीं—

श्याम० : क्यों नागर ! अब तुमने काशी एकदम ही छोड़ दी ?

नागर : इधर बहुत दिनों से तो वहाँ जाना नहीं हुआ पर अब···

श्याम० : अब क्या ?

नागर : अब पुनः जाने का विचार कर रही हूँ.

श्याम० : जरूर जाना चाहिए क्योंकि 'मोतीजान'[1] की अब भी वहाँ कदर और खोज है.

'मोतीजान' नाम सुन नागर ने शर्मा कर सिर झुका लिया और कहा, "बस इसी से तो मैं और भी वहाँ जाते हिचकती हूँ क्योंकि जब मेरे पुराने दोस्त ही इस तरह मेरी खिल्ली उड़ाते हैं तो......"

कहते-कहते नागर रुक गई क्योंकि उसी समय सीढ़ी पर से धमधमाहट की आवाज मालूम हुई जिससे पता लगा कि कोई ऊपर को आ रहा है. नागर श्यामलाल के पास से कुछ हट गई और उसी समय उसकी लौंडी ने वहाँ पहुँच कर एक लिफाफा उसके हाथ में दिया तथा कान में धीरे से कुछ कहा. बात सुन नागर एक बार कुछ चिहुँक-सी गई पर तुरन्त ही उसने अपने को सम्हाला और कुछ टेढ़ी निगाह से लौंडी की तरफ देख कर बोली, "मैंने उसी समय कह दिया था कि चाहे कोई रईस हो इस समय इत्तिला न की जाय !"

लौंडी : जी बहुत बड़ा रईस बल्कि राजा है...

नागर : बस चुप रह, कह दे आज मुलाकात नहीं हो सकती, तबीयत ठीक नहीं है.

लौंडी : जो हुक्म, खैर यह चीठी तो पढ़ ली जाय जो उन्होंने दी है.

नागर : कम्बख्तों के चीठी-पुर्जों से तो मैं और भी परेशान हूँ, खैर ला रोशनी.

लौंडी कुछ दूर पर रक्खा हुआ शमादान उठा लाई और नागर ने वह लिफाफा खोला. श्यामलाल ने देखा कि चीठी पढ़ते समय नागर के चेहरे से डर और तरद्दुद जाहिर होने लगा और वह कुछ काँप सी गई, पर बड़ी कोशिश से उसने अपना भाव बदला और चीठी बन्द कर बनावटी क्रोध के साथ बोली, "मूर्ख को अपने इश्क-मुहब्बत से ही छुट्टी नहीं मिलती. जा, उसे बिदा कर दे."

नागर ने चीठी दूर फेंक दी और लौंडी शमादान पुनः दूर रख नीचे उतर गई

---

1. काशी के बाजार में नागर बहुत दिनों तक मोतीजान के नाम से मशहूर थी और वा इसने बहुत से अमीरों को अपने जाल में फंसा कर चौपट किया था.

नागर ने आलस्य के साथ अँगड़ाई लेते हुए श्यामलाल के गले में हाथ डाल दिया और कहा, "इन कम्बख्तों के मारे तो मैं बेतरह परेशान हूँ."

श्याम० : क्यों कौन था ? यह चीठी किसकी है ?

नागर : था एक कम्बख्त, पर इस समय क्या तुम्हें छोड़ सकती हूँ ! इतने दिनों के बाद तो न जाने कौन-सा पुण्य उदय हुआ कि तुम्हारी शक्ल दिखाई दी और सो भी कुछ यह उम्मीद नहीं कि फिर कब···

श्याम० : नहीं अब मैं बराबर आया करूँगा.

नागर : धन्य भाग्य ! क्या कहूँ अगर मुझे खर्च की तकलीफ न होती तो मैं तुम्हारे सिवाय और किसी का मुँह भी न देखती पर लाचारी के सबब सब कुछ करना ही पड़ता है.

श्याम० : तुम्हें और खर्च की तकलीफ !

नागर : हाँ, यह कम्बख्त शहर बड़ा ही कंजूस है. जब से यहाँ आई अपना ही खा रही हूँ, इसी से तो पुनः काशी जाने का विचार कर रही हूँ.

श्याम० : (अपने गले से सिकरी निकाल कर देता हुआ) लो इसे रक्खो.

नागर : क्यों सो क्यों ?

श्याम० : मैं देता हूँ.

नागर : वाह जी, क्या तुमने मुझे ऐसा कंगाल समझ रक्खा है कि इतने दिनों के बाद मुलाकात होने पर भी···

श्याम० : नहीं नहीं, सो बात नहीं है, यह तो मैं तुम्हें खर्च के लिए देता हूँ.

नागर के बहुत कुछ इनकार करने पर भी श्यामलाल ने सिकरी जबर्दस्ती उसके गले में डाल दी और बहुत बड़ी कसम देकर मुँह बन्द कर दिया. कुछ देर तक पुनः चुहल होती रही और तब श्यामलाल ने जाने की इच्छा प्रकट की.

नागर : अजी बैठो, अभी कहाँ जाओगे !

श्याम० : जाने का दिल तो नहीं करता पर क्या करूँ आज सुबह का ही निकला हुआ हूँ, अभी तक भोजन क्या एक घूंट जल तक नहीं पिया है, अब घर जाऊँगा तब···

नागर : क्यों क्या यहां सब इन्तजाम नहीं हो सकता, मैं अभी भोजन मंग-वाती हूँ. स्नान इत्यादि हुआ है या नहीं ?

श्याम० : नहीं, अभी कुछ नहीं हुआ, रुकने से तकलीफ होगी, तुम बस केवल

एक गिलास जल मँगवा दो और मुझे इजाजत दो.

लाचारी की मुद्रा दिखाती हुई नागर "खैर जैसी तुम्हारी इच्छा" कहती हुई जल मँगवाने के लिए उठ खड़ी हुई, बल्कि स्वयं ही लेने के लिए नीचे उतर गई. उसके जाते ही श्यामलाल झपट कर उठा और वह लिफाफा जिसे नागर ने दूर फेंक दिया था उठा कर शमादान के पास पहुँचा, चीठी निकाल ली और जल्दी-जल्दी पढ़ा. यह लिखा हुआ था :—

"वह काम हो गया. तुम इसी समय रवाना हो जाओ और 'रामदेई' बन कर भूतनाथ के पास पहुँचो. सिवाय उसके और कोई वह काम नहीं कर सकता. सवारी जाती है, साधोराम तुम्हारी मदद पर रहेगा."

बस इतना ही उस कागज का मजमून था जिसे श्यामलाल फुर्ती से पढ़ गया और तब लिफाफा जहाँ पड़ा था वहाँ वैसे ही रख कर पुनः अपनी जगह पर आ बैठा, साथ ही साथ सोचने लगा—

"नागर ने तो कहा था कि यह उसके किसी आशिक की चीठी है पर यह तो कोई दूसरा ही मामला है! रंडियाँ भी कैसी दगाबाज होती हैं! यह चीठी लिखी किसकी है? नीचे किसी का नाम नहीं है पर अक्षर पहिचाने हुए-से मालूम होते हैं. मुझे तो यह दारोगा साहब की लिखावट मालूम होती है. हां ठीक है, बेशक उन्हीं की लिखावट है. मगर नागर रामदेई की सूरत क्यों बनेगी और भूतनाथ से क्या काम निकलने की आशा है? इसका पता लगाना चाहिए, इसमें अवश्य कोई गूढ़ भेद है."

इसी समय नागर अपने नाजुक हाथों में जल से भरा गिलास और कुछ मीठा लिए वहाँ आ पहुँची. श्यामलाल ने देखा कि आते ही उसकी पहिली निगाह उसी चीठी की तरफ गई मगर उसे अपनी जगह पर ज्यों-का-त्यों पड़ा पा उसे संतोष हुआ और वह श्यामलाल के पास पहुँची. श्यामलाल ने केवल जल पी लिया और बाकी चीजों को छोड़ उठ खड़ा हुआ.

बनावटी मुहब्बत की बातें करती हुई नागर उसके साथ-साथ नीचे तक आई और सब तरह-तरह के वादे करा और कर उसने श्यामलाल को बिदा किया. फाटक पर पहुँच कर श्यामलाल ने देखा कि एक रथ और आठ सवार वहाँ मौजूद हैं जो पहिले दिखाई नहीं पड़े थे. वह समझ गया कि यही वह सवारी है जिसका जिक्र चीठी में किया गया है. एक निगाह उस तरफ डाल श्यामलाल अपने घोड़े

पर सवार हुआ और पूरब की सड़क पर रवाना हो गया.

थोड़ी दूर जाने के बाद एक चौराहे पर पहुँच श्यामलाल ने घोड़ा रोका. उसको देखते ही उसके दो साथी जो कहीं छिपे हुए थे निकल आए जिन्हें देख श्यामलाल घोड़े से उतर पड़ा और किनारे जा कुछ बातें करने लगा. कुछ समय के बाद बातचीत खत्म हुई, श्यामलाल पुन: घोड़े पर सवार हो पूरब की ओर रवाना हो गया, तथा उसके दोनों साथी नागर के मकान की तरफ लौट आए.

इसके लगभग घड़ी ही भर के बाद नागर अपनी एक लौंडी को साथ लिए मकान के बाहर निकली और उसी रथ पर सवार हो गई. हुक्म पाते ही रथ तेजी से काशी की ओर रवाना हुआ और वे सवार पीछे-पीछे जाने लगे. श्यामलाल के दोनों साथियों ने भी रथ का पीछा किया और छिपे-छिपे साथ जाने लगे.

6

अब हम कुछ थोड़ा सा हाल मालती का लिखना चाहते हैं. पाठकों को याद होगा कि महाराज गिरधरसिंह को खोजते हुए जाकर उसे इन्द्रदेव ने लोहगढ़ी में पाया था और वहाँ से किसी हिफाजत की जगह में भेज स्वयं दूसरे फेर में पड़ गये थे.[1]

इन्द्रदेव ने मालती को एक काले पत्थर की एक चौकी पर बैठा दिया और कोई खटका दबाया जिसके साथ ही वह चौकी तेजी के साथ जमीन में धंस गई. झटके के कारण मालती की आँखें बन्द हो गईं और उसने मजबूती से उस की चौकी को थाम लिया. कुछ देर तक वह चौकी उसी तरफ नीचे धँसती रही पर इसके बाद एक झटके के साथ रुकी और तब आगे की तरफ बढ़ने लगी. अब मालती ने आँखें खोलीं मगर उसे कुछ दिखाई नहीं पड़ा क्योंकि चारों तरफ इतना घना अन्धकार था कि हाथ को हाथ दिखाई न पड़ता था. धीरे-धीरे चौकी की तेजी बढ़ने लगी और साथ ही ठंडी हवा के कड़े झोंके बदन में लग कर उसे कंपाने लगे पर उसी समय उसे मालूम हुआ, चौकी की सतह गर्म हो रही है. वास्तव में यही बात थी और कुछ ही देर बाद चौकी इतनी गर्म हो गई कि हवा के ठण्डे झोंकों से लगने वाली सर्दी का असर बहुत कुछ दूर हो गया.

---

1. देखिए बारहवां भाग, चौथा बयान.

एक घड़ी से ऊपर समय तक वह चौकी उसी तेजी से चलती रही. इसके बाद धीरे-धीरे उसकी चाल कम होने लगी और ऐसा मालूम हुआ मानों वह ऊपर की तरफ ढालुई जमीन पर चढ़ रही है. साथ ही मालती को सामने की तरफ कुछ ऊँचाई पर मगर कुछ दूर चाँदनी भी मालूम पड़ी जिससे उसे गुमान हुआ कि अब उसका सफर पूरा हुआ चाहता है. हुआ भी ऐसा ही और थोड़ी देर और चलने के बाद वह चौकी एक दालान में पहुँच कर रुक गई जिसके तीन तरफ तो कोई इमारत थी और सामने की तरफ एक खुशनुमा बाग नजर आ रहा था. मालती चौकी पर से उतर पड़ी और उसके उतरते ही वह चौकी जिधर से आई थी उधर ही तेजी के साथ लौट गई.

कुछ देर तक मालती वहीं खड़ी रही. इसके बाद वह इस दालान से बाहर निकली और चारों तरफ घूम-फिर कर देखने लगी कि वह किस स्थान में है. ऊँची-ऊँची पहाड़ियों से घिरा हुआ एक खुशनुमा मैदान नजर आया जो लगभग चार सौ गज के लम्बा और इससे कुछ कम चौड़ा होगा. चारों तरफ की पहाड़ियों पर स्थान-स्थान में सुन्दर बंगले और मकान बने हुए थे जिनमें एक वक्त पर सैंकड़ों आदमियों का गुजर हो सकता था. एक तरफ से एक नाला भी गिर रहा था जिसका साफ निर्मल जल छोटी-छोटी बहुत-सी नालियों के जरिये उस समूचे मैदान में फैल कर जमीन को तर बनाये हुए था और बचा हुआ पानी एक गड्ढे में गिर कर न मालूम कहाँ गायब हो जाता था.

इस मनोहर स्थान को हमारे पाठक बखूबी जानते हैं क्योंकि यह वही तिलिस्मी घाटी है जिसमें प्रभाकरसिंह, दयाराम, इन्दुमति, जमना, सरस्वती, दिवाकर सिंह आदि रहते थे तथा यहीं आकर भूतनाथ ने (नकली) जमना और सरस्वती का खून किया था.[1]

बहुत देर तक मालती इस अनूठे स्थान को गौर और ताज्जुब से देखती रही और तब अपने स्थान से हटकर इधर-उधर घूमने-फिरने और यह जानने की चेष्टा में पड़ी कि इस अद्‌भुत स्थान में कोई रहता भी है या नहीं. चारों तरफ की इमारतों, कमरों और बंगलों में घूमते हुए मालती ने घंटों बिता दिये पर उसे किसी भी आदमी की सूरत दिखाई न पड़ी. बहुत-सी जगहें तो बन्द थीं मगर

1. देखिये भूतनाथ आठवाँ भाग, अन्तिम बयान.

कुछ जो खुली थीं वहाँ अच्छी तरह घूम-फिर कर जब मालती ने निश्चय कर लिया कि यहाँ कोई भी नहीं है तब वह इस फिक्र में पड़ी कि अपने रहने और रात काटने के लिए कोई जगह निश्चय कर ले. चारों तरफ देख-भाल कर उसने एक छोटा बंगला, जो सबसे अलग एक कोने में कुछ ऊँचाई पर बना हुआ था, अपने रहने के लिए पसन्द किया और उसी में अपना डेरा जमाया क्योंकि यहाँ मालती को अपने जरूरत की सभी चीजें—पलंग, बिछावन, कपड़े, बरतन आदि मिल गये तथा एक कोठरी में कुछ अन्न आदि भी पाया जिसकी सहायता से वह कुछ दिन बिना तरद्दुद और तकलीफ के काट सकती थी.

मालती को विश्वास था कि इन्द्रदेव शीघ्र ही उससे मिलने के लिए यहाँ आवेंगे पर जब कई दिन बीत गये और कोई उसकी खबर लेने न आया तो उसे ताज्जुब और कुछ डर भी मालूम हुआ. वह समझ गई कि इन्द्रदेव किसी-न-किसी तरद्दुद में पड़ गये नहीं तो अवश्य मेरी सुध लेने आते. इस खयाल ने उसे चिन्ता में डाल दिया मगर फिर भी उसने उस स्थान के बाहर जाने का विचार न किया और वहीं कुछ समय और काटने का निश्चय किया. मालती बड़े ही कड़े कलेजे की और हिम्मतवर औरत थी क्योंकि तरह-तरह की तकलीफों और मुसीबतों ने उसे मजबूत कर दिया था, इसीसे वह इतने बड़े स्थान पर अकेली रह सकी नहीं तो इसमें कोई शक नहीं कि यदि किसी दूसरी औरत को इस प्रकार वहाँ रहना पड़ता तो जरूर घबरा जाती और वहाँ से निकल भागने की चेष्टा करती.

कई दिन तक वहाँ रह कर मालती ने उस जगह की अच्छी तरह से सैर कर ली और सब जगह घूम-फिर कर एक-एक मकान को अच्छी तरह देख डाला. मगर दो बातों का पता वह कुछ भी न लगा सकी. एक तो वहाँ से बाहर निकलने का रास्ता उसे मालूम न हो सका दूसरे पूरब और उत्तर के कोने में बने हुए उस चौकोर और सुन्दर बंगले में वह न जा सकी जो सबसे ऊँचे स्थान पर बना हुआ था और जिस पर दो ओर मालती की घनी लता चढ़ी हुई थी. इस बंगले के ऊपर सामने की तरफ शायद किसी धातु के आठ बन्दर बने हुए थे जो प्रायः कभी-कभी इधर-उधर हिलते और तरह-तरह की भाव-भंगी किया करते थे जिसे देख उसका ताज्जुब बढ़ गया था और वह इस बात के जानने की फिक्र में पड़ी हुई थी कि इन नकली जानवरों में हरकत क्यों और कैसे आती है. पर बहुत कोशिश करने पर भी वह न तो उस बंगले के अंदर जा सकी थी और न इस भेद का पता लगा सकी थी.

हाँ, इतना जरूर जान गई थी कि इस बात का कोई कारण जरूर है और वह बंगला कुछ गूढ़ भेदों का खजाना अवश्य है.

रात पहर भर से कुछ अधिक जा चुकी है, अभी-अभी निकलने वाले चन्द्रदेव की किरणें पेड़ों की चोटियों पर ही विराज रही हैं. अपने मकान की छत पर बैठी हुई मालती तरह-तरह की बातें सोच रही है. आज उसे इस स्थान में आये तीन हफ्ते से ऊपर हो चुके हैं. इस बीच में उससे न तो इन्द्रदेव ही से मुलाकात हुई और न किसी और ही आदमी की सूरत दिखलाई पड़ती है और वह इस समय यही सोच रही है कि अब क्या करना और किस तरह इस जगह के बाहर निकलना चाहिए. वह यह सोच कर डरती भी है कि शायद इस जगह के बाहर होना उसके हक में अच्छा न हो, वह दुश्मनों के फंदे में पड़ न जाय, या इन्द्रदेव ही उसके इस काम पर खफा न हों, और इन्हीं बातों को सोच वह बाहर निकलने का खयाल छोड़ देती है, पर जब उसे यह खयाल आता है कि शायद इन्द्रदेव ही किसी मुसीबत में न पड़ गये हों, तो वह बाहर निकलने और बन पड़े तो इस बात का पता लगाने अथवा इन्द्रदेव की मदद करने को भी बेचैन हो जाती है.

इस तरह की उधेड़बुन में पड़ी तरह-तरह की बातें सोचती हुई वह एकदम बेचैन हो गई और तबियत बहलाने की नीयत से उठ कर छत पर इधर से उधर टहलने लगी. चन्द्रदेव कुछ ऊँचे उठ चुके थे और उस स्थान के चारों तरफ की पहाड़ियों पर बने हुए बंगलों को उनकी सफेद किरणों ने रौशन करना शुरू कर दिया था. मालती की निगाह उस पूरब तरफ वाले बंगले के ऊपर पड़ी जिसके विषय में बहुत दफे आश्चर्य कर चुकी थी और जिसके ऊपर वाले बन्दरों की बदौलत उसका नाम उसने बन्दरों वाला बंगला रख दिया था. इस समय वह बंगला उससे बहुत दूर पड़ता था, दूसरे चन्द्रमा की रोशनी भी इतनी तेज न थी कि वहाँ की सब चीजें दिखाई पड़ सकें, फिर भी उसे कुछ ऐसी बात नजर आई जिसने उसे चौंका दिया. उसने देखा कि उन बन्दरों की चाल-ढाल में जो रात को प्रायः हिलते-डोलते न थे कुछ विशेषता आ गई है. सब के सब बन्दर एक ही स्थान पर आकर इकट्ठे हो गये हैं और उनकी आँखों से बहुत ही तेज चमक निकल रही है. मालती ने उन बन्दरों को उछलते-कूदते और हरकत करते हुए तो बहुत दफे देखा था और वह इसे एक मामूली बात समझने लगी थी पर इस तरह उनकी आँखों से रोशनी निकलते उसने आज तक कभी नहीं देखा था, अस्तु यह एक नई बात देख

उसे ताज्जुब मालूम हुआ और वह कौतूहल के साथ उस तरफ देखने लगी.

धीरे-धीरे उन बन्दरों के आँखों की रोशनी बढ़ने लगी और आखिर इतनी बढ़ी कि इतनी दूर से भी उन पर आँखें ठहराना कठिन हो गया. इसके साथ ही मालती ने देखा कि उस छत पर न जाने कहाँ से एक औरत आ पहुँची है और इधर-उधर घूम रही है. अब मालती का कलेजा धड़का. इस निर्जन स्थान में किसी बाहरी आदमी, विशेष कर औरत के आने का उसे स्वप्न में भी गुमान नहीं हो सकता था. अस्तु उसे कुछ रंग-कुरंग मालूम हुआ और यह जानने की नीयत से कि यह कौन औरत है वह बंगले से सटी हुई एक दूसरी छत पर चली गई जो कुछ ज्यादा ऊँची थी तथा जिसके चारों तरफ वाली ऊँची कनाती दीवार में इस ढंग के मोखे बने हुए थे कि भीतर का आदमी सब तरफ देख सकता था, परन्तु उस पर किसी की निगाह नहीं पड़ सकती थी. यहाँ से छिप कर मालती उस औरत की तरफ देखने लगी.

वह औरत कुछ देर तक तो इधर-उधर घूम-फिर कर कुछ देखती रही और तब बन्दरों के पास पहुँच उनके सिरों पर हाथ रख कर कुछ करने लगी. उसने क्या किया यह तो मालती इतनी दूर से देख-समझ न सकी पर यह उसने अवश्य देखा कि उन बन्दरों की आँखों से निकलने वाली रोशनी सब इकट्ठी होकर सामने के एक दूसरे बंगले पर पड़ने लगी है जो पहाड़ी पर से गिरते हुए नाले के ऊपर पुल की तरह पर बना हुआ था. यह रोशनी इतनी तेज और साफ थी कि उस बंगले की हर एक चीज; जो चन्द्रमा के पहाड़ों की आड़ में रहने के कारण अब तक अन्धकार में था, अब साफ दिखाई पड़ने लगी और एक-एक कोना निगाहों के सामने आ गया. इतना काम कर वह औरत वहाँ से हट कर दूसरी तरफ चली गई और घूमती हुई निगाहों की ओट हो गई.

इसी समय नहर के ऊपर वाले बंगले की तरफ से दो-तीन बार बहुत जोर से धम्माके की आवाज आई. मालती का ध्यान उधर ही को चला गया और उस तेज रोशनी की सहायता से जो उन बन्दरों की आँखों से निकलती हुई सीधी उधर ही को पड़ रही थी उसने देखा कि बंगले के बीचोंबीच वाले कमरे का दरवाजा खुला और दो आदमी जो एक भारी गठरी उठाये हुए थे निकल कर बाहर के दालान में आये. इसी समय बगल की एक कोठरी में से निकल कर वह औरत भी उनके पास जा पहुँची जिसे कुछ देर पहिले सामने वाले बंगले की छत पर मालती ने देखा था.

तीनों बाहर के बरामदे में आ गए और वहीं जमीन पर बैठ कुछ करने लगे. मालती बड़े गौर के साथ देखने लगी कि वे क्या करते हैं परन्तु दूरी के कारण कुछ समझ में न आया. आखिर उसका जी न माना और वह अपनी जगह से उठ उस कमरे के नीचे उतरी, एक काली चादर से अपना बदन अच्छी तरह ढक कर पेड़ों की आड़ देती हुई वह बड़ी होशियारी के साथ उस बंगले की तरफ बढ़ी.

आधे से ज्यादा रास्ता मालती ने तय न किया होगा कि उसने उन दो आदमियों को उस बंगले के बाहर निकल कर पहाड़ी के नीचे उतरते और अपनी ही तरफ आते देखा. वह बड़ी गठरी उन दोनों के हाथों में थी और पीछे-पीछे वह औरत फावड़ा आदि जमीन खोदने के कुछ औजार लिए चली आ रही थी. यह देख मालती डर कर घने पेड़ों की आड़ में हो गई और वहीं से देखने लगी कि ये सब क्या करते हैं.

गठरी लिये वे दोनों आदमी सीधे उसी बन्दरों वाले बंगले की तरफ बढ़े और मालती को गुमान हुआ कि ये उसी में जायेंगे, पर ऐसा न हुआ. मकान की सीढ़ियों के पास पहुँच उन्होंने गठरी जमीन पर रख दी और बात करने लगे. पेड़ों की आड़ लेती हुई मालती पाँव दबाये धीरे-धीरे उधर ही को बढ़ी और उन लोगों से इतनी दूर जा पहुँची कि जहाँ बातचीत तो स्पष्ट नहीं सुन सकती थी पर जो कुछ वे करते उसे बखूबी देख सकती थी. बंगले की सीढ़ी के दोनों तरफ संगमर्मर के कमर बराबर ऊँचे चबूतरों पर काले पत्थर की दो पुतलियाँ बनी हुई थीं जिनके हाथों में रोशनी रखने की जगहें बनी हुई थीं. वे दोनों आदमी इन्हीं में से बाईं तरफ वाले चबूतरे के पास पहुँचे और उस औरत के हाथ से फरसा आदि ले उन्होंने वहाँ की जमीन खोदना शुरू किया. लगभग आधे घण्टे की मेहनत में वहाँ कमर से गहरा गड्ढा हो गया. अब खोदना बन्द किया गया और एक आदमी उस गड्ढे में उतर गया. उसने क्या किया यह तो मालती देख न सकी पर थोड़ी देर बाद एक हल्की आवाज के साथ उस चबूतरे का एक तरफ का पत्थर हट गया और वहाँ एक अलमारी की तरह की जगह दिखाई पड़ने लगी. उन लोगों ने वह गठरी उठाकर उसी चबूतरे के अन्दर डाल दी, वह पत्थर पुनः ज्यों-का-त्यों अपने ठिकाने आ गया, और वह आदमी भी गड्ढे के बाहर निकल आये. सभी ने मिल कर गड्ढे को पाट कर बराबर कर दिया और तब वह औरत एक तरफ तथा वे दोनों आदमी दूसरी तरफ चले गये. थोड़ी देर बाद मालती ने इन दोनों आदमियों को पुनः उस

नाले के ऊपर वाले बंगले में पाया और उस औरत को बन्दरों वाले बंगले की छत पर देखा. इसी समय उन बन्दरों की आँखों से निकलने वाली चमक बन्द हो गई और वह औरत तथा दोनों आदमी भी गायब हो गये.

बहुत देर तक मालती उन लोगों के लौटने की राह देखती रही पर जब उसे विश्वास हो गया कि वे चले गये तो वह अपनी छिपने वाली जगह के बाहर निकली और चारों तरफ अच्छी तरह घूम-फिर कर देखने के बाद उसने निश्चय कर लिया कि वे लोग जो इस विचित्र प्रकार से वहाँ मौजूद हुए थे अब नहीं हैं. उसे यह जानने का बड़ा कौतूहल लगा हुआ था कि उन लोगों की उस गठरी में क्या था जिसे वे उस चबूतरे के अन्दर छिपा गये हैं और वह कोशिश करके उस गठरी का हाल जानना चाहती थी—पर साथ ही यह सोच कर डरती भी थी कि अगर उनमें से कोई आ गया तो वह बड़ी मुसीबत में पड़ेगी. अस्तु बहुत कुछ सोच-विचार कर उसने रात बिता देना ही मुनासिब समझा और अपने रहने वाले बंगले में चली गई. वह रात उसने जागने और टोह लेने में ही बिता दी और सवेरा होते ही जरूरी काम से निपट जमीन खोदने का सामान लिए उस स्थान पर पहुँची.

जिस जगह रात को उन दोनों आदमियों ने खोदा था वहीं मालती ने भी खोदना शुरू किया. वहाँ की मिट्टी एक दफे खोदी जा चुकने के कारण बहुत कड़ी न थी अस्तु मालती को ज्यादा तकलीफ न हुई और वह सहज ही में कमर तक खोद गई. उस समय उसे मालूम हुआ कि आगे खोदना असम्भव है क्योंकि नीचे पत्थर का फर्श निकल आया. मालती ने खोदना बन्द कर दिया और जमीन की मिट्टी हाथ से साफ कर देखने लगी कि चबूतरे को खोलने की क्या तरकीब हो सकती है. यकायक उसका हाथ एक छोटे से मुट्ठे पर पड़ा जो किसी धातु का बना हुआ नीचे के फर्श में जड़ा हुआ था. उसने उस मुट्ठे को ऐंठना और घुमाना शुरू किया. घूमा तो वह नहीं मगर ऊपर की तरफ कुछ उठता हुआ-सा नजर आया. अस्तु मालती ने जोर लगाकर उसे अपनी तरफ खेंचा. लगभग एक बालिश्त के वह खिच आया और इसके साथ ही चबूतरे की दीवार वाला पत्थर किवाड़ के पल्ले की तरह खुल कर जमीन के साथ लग गया. खुशी-खुशी मालती गड्ढे के बाहर निकल आई और उस चबूतरे के पास पहुँच कर देखने लगी कि उसमें क्या है.

अन्दर एक गठरी नजर आई जिसे मालती ने बाहर निकाला और खोला.

कुछ कपड़े और बहुत से कागज-पत्रों को हटाने पर चांदी का हाथ भर लम्बा औ एक बालिश्त चौड़ा तथा उतना ही ऊँचा एक डिब्बा निकला जिस पर जगह-जग मुहर की हुई थी. और तलाश करने पर एक कागज का मुट्ठा जो जन्मपत्री कं तरह लपेटा हुआ था, निकला और तीन-चार छोटी-छोटी किताबें भी दिखाई पड़ जो रोजनामचे की तरह पर थीं. सबसे नीचे से एक भुजाली और दो खंजर निकर जिन पर जंग चढ़ा हुआ था और जो बहुत पुराने मालूम होते थे. बस इसके अला उस गठरी में और कुछ न था.

मालती ने यह सब सामान पुनः गठरी में बाँधा और उस चबूतरे को ज्यं का त्यों बन्द कर तथा गड्ढा पाट कर वह गठरी उठाए अपने रहने वाले बँगले प आ गई. यहाँ भी उसने ठहरना पसन्द न किया और दरवाजा बन्द करती हुई व सीधी छत पर चली गई जहाँ बैठ कर वह पुनः उन चीजों की जाँच-पड़ताल कर लगी. उन कपड़ों तथा कागजों को तो उसने अलग रख दिया और वह मुट्ठा खो कर देखने लगी जो सिलसिलेवार कई चीठियों को जोड़ कर बना हुआ मालू होता था. इन्हें मालती सरसरी निगाह से पढ़ गई. न मालूम उसमें क्या लिख हुआ था जिस पर वह कुछ देर के लिए गौर में पड़ गई. इसके बाद उसने उ रोजनामचे में से एक को उठा लिया और देखने लगी. पहिला पृष्ठ देखते ही चौंक पड़ी और बड़े गौर के साथ उसने पढ़ना शुरू किया.

एक-एक करके मालती सभी रोजनामचों को पढ़ गई. पढ़ते समय उसवे चेहरे से तरह-तरह के भाव प्रकट होते थे. कभी आश्चर्य, कभी क्रोध, कभी घृणा कभी दुःख, कभी प्रसन्नता, उसके चेहरे पर दिखाई पड़ती थी. कभी-कभी उसवे मुँह से बेतहाशा कई शब्द निकल कर उसके दिल के भाव को भी प्रकट कर दे थे. आखिर एक-एक करके वह सभी किताबें पढ़ गई और तब सिर पर हाथ रख किसी गम्भीर चिन्ता में डूब गई. कई घड़ी के बाद जब उसके होश ठिकाने हुए उसने आप ही आप कहा, "यह तो बड़े काम की चीज मिल गई पर मालूम नहीं वह इन्हें यहाँ क्यों रख गया! क्या सम्भव है कि···" कुछ देर के लिए वह पुन चिन्ता में डूब गई और बोली, "यदि इन चीजों को चाचाजी एक बार देख पाते तो बड़ा ही काम निकलता." मालती के मुँह से यह बात निकली ही थी, कि सीढ़ियों पर से कुछ धमधमाहट की आवाज आई और यकायक इन्द्रदेव ने वहाँ पहुँच कर पूछा, "क्यों बेटी, मुझे क्यों याद कर रही है?"

इन्द्रदेव की सूरत देखते ही मालती चीख मार कर दौड़ी और उनके पैरों पर गिर पड़ी. उसकी आँखों से बेतहाशा निकलते हुए आँसुओं ने इन्द्रदेव का पैर धोना शुरू किया. उन्होंने बड़े प्यार से उठा कर उसका सिर सूँघा और आशीर्वाद देकर कहा, "बेटी, तुझे देख मुझे बड़ी ही प्रसन्नता हुई—खास कर इसलिए कि मैं तुझे मरा हुआ समझता था. तिस पर भी मैं जब यह सोचता था कि तेरे हाथ से एक बहुत बड़ा काम होने वाला है तो ताज्जुब करता था कि वह कैसे होगा, पर उस दिन तुझे जीता-जागता अपने सामने पा मेरा सन्देह दूर हो गया. फिर भी यह देख कर कि दुश्मनों के जाल चारों तरफ फैले हुए हैं मैं यह निश्चय करने के लिए कि तू वास्तव में मालती ही है तेरे मुँह से कोई गुप्त बात सुनना चाहता हूँ जिसे तेरे सिवाय और कोई न जानता हो और जिसे सुन कर मुझे विश्वास हो जाय कि तू वास्तव में मालती ही है."

मालती : चाचाजी, (क्योंकि वह इन्द्रदेव को चाचा ही कह कर पुकारती थी) यह विश्वास दिलाने के लिए कि मैं मालती ही हूँ मैं आपको यह बात कह सकती हूँ जो कई बरस हुए खास बाग वाले गुम्बज पर आपने भुवनमोहिनी से कही थी और जिसे सुन चाचा……

इन्द्रदेव : बस-बस, मुझे मालूम हो गया कि तू मालती ही है. और यह विश्वास दिलाने के लिए मैं भी वास्तव में इन्द्रदेव ही हूँ तुझे लाल बाबा की समाधि वाला हाल बता सकता हूँ. अच्छा अब तू यह बता कि ये कई दिन तूने किस तरह काटे और यह कागजात और कपड़े वगैरह कैसे हैं जिन्हें तू इस समय इतने गौर से देख रही थी कि मेरे कई बार आवाज देने पर तूने बंगले का दरवाजा न खोला और लाचार मुझे दूसरी ही राह से यहाँ आना पड़ा !

मालती : (कुछ शर्मा कर) ये बड़े ही काम की चीजें मुझे यकायक मिल गईं जो इतनी कीमती हैं कि मैं कुछ कह नहीं सकती. इन्हीं को मैं देख रही थी और चाहती थी कि इस समय आपके दर्शन हो जाते तो आपको दिखाती और मतलब पूछती. मैं अभी आपको इनके पाने का किस्सा बताती हूँ.

यद्यपि यहाँ की छत मालती की बदौलत बहुत ही साफ थी फिर भी इज्जत के ख्याल से मालती नीचे से एक कम्बल ले आई जिस पर इन्द्रदेव बैठ गये. मालती सामने बैठ गई और बहुत ही संक्षेप में रात का हाल कह उसने उन सब चीजों को इन्द्रदेव के आगे बढ़ा दिया. सबसे पहिले इन्द्रदेव ने वह चाँदी का डिब्बा उठा

लिया और उसे गौर से देखते हुए कहा, "अगर मेरी याददाश्त मुझे धोखा नहीं रही है तो इस डिब्बे में एक ऐसी नायाब चीज है जिसके लिए मैं बहुत परेशान रहा और हर तरह की तर्कीब करके भी जिसके पाने में मैं असफल हुआ था."

कुछ देर तक इन्द्रदेव गौर से उस डिब्बे को देखते रहे तब धीरे से "बेश वही है" कह कर उन्होंने उसे उठाया और जोर से जमीन पर पटक दिया, पटक के साथ ही उसका ऊपरी हिस्सा दो टुकड़े होकर दोनों तरफ को खुल गया औ भीतर भोजपत्र पर लिखी हुई एक छोटी पुस्तक जिसकी जिल्द चाँदी की थी- तथा सोने की एक चाभी दिखाई देने लगी. खुशी की एक चीख मार इन्द्रदेव दोनों चीजों को उठा लिया और अपनी छाती से लगा खुशी भरी आवाज में बो "बेटी मालती, इस चीज को पाने पर मैं अपने को और तुझे भी मुबारकबाद दे हूँ. इसी पुस्तक और चाभी के बिना मैं परेशान था और सोचता था कि सिद्धों औ विद्वानों की लिखी बातें क्योंकर पूरी होंगी जिनके होने का वक्त आ ही नहीं ग बल्कि बीता जा रहा है."

मालती : (ताज्जुब से) आखिर यह अनमोल चीज है क्या ?

इन्द्र० : यह चाभी तो लोहगढ़ी के खजाने की है और यह उसके तिलिस्म हाल बताने वाली पुस्तक है.

मालती : (खुश होकर) क्या इन्हीं चीजों की मदद से लोहगढ़ी का तिलि टूटेगा ?

इन्द्र० : हाँ.

मालती : और इन्हीं की मदद से मैं अपनी प्यारी जमना, सरस्वती तथा अ कई रिश्तेदारों को देख सकूँगी.

इन्द्र० : हाँ.

मालती : वाह वाह — तब तो यह वह अनमोल चीज है जिसके लिए मैं महीनों कोशिश की और अपनी जान जोखिम में डाली. इसका आप से आप ह में आ जाना सूचित करता है कि अब हम लोगों की मुसीबत की घड़ी बीत चुकी

इन्द्र० : यद्यपि मैं यह बिल्कुल नहीं जानता कि तुझे जमना, सरस्वती आ के हाल का पता क्योंकर लगा अथवा तूने इन चीजों के पाने की क्या-क्या कोशि की फिर भी मैं इतना कह सकता हूँ कि ये ही चीजें उस लोहगढ़ी के तिलिस्म खोलने और तोड़ने का जरिया है और इन्हीं के बिना मैं अपने कई प्रेमियों

बिछुड़ा हुआ था.

मालती : मैं अपना सब हाल आपसे अभी बयान करूँगी मगर इसके पहिले मैं ये कुछ कागजात और किताब आपको और भी दिखाऊँगी जो इसी गठरी में से निकले हैं और जिनसे बहुत से भेद प्रकट होते हैं.

इतना कह मालती ने वे सब कागज और रोजनामचे भी इन्द्रदेव के आगे बढ़ा दिये और उन्होंने गौर के साथ उन्हें देखना शुरू किया. उन्हें पढ़ते हुए इन्द्रदेव की भी वही हालत हो गई जो मालती की हुई थी अर्थात् कभी क्रोध, कभी दुःख, कभी घृणा और कभी प्रसन्नता ने उनके चेहरे पर प्रकट होकर उनके दिल का प्रभाव जाहिर कर दिया. वे बहुत देर तक उन कागजों को देखते रहे और जब हर एक कागज को पढ़ डाला तो एक लम्बी साँस लेकर बोले, "ये सब कागज मेरे लिये जवाहिरात से भी बढ़ कर कीमती हैं और इनसे दुष्टों को दण्ड देने में बड़ी सहायता मिलेगी. मैं इनका पूरा मतलब तुझे बताऊँगा जिसे शायद तूने समझा न होगा. मगर इसके पहिले मैं यह चाहता हूँ कि तू अपना हाल मुझे पूरा सुना जा!"

"जो आज्ञा," कह कर मालती ने अपना हाल कहने के लिये मुँह खोला ही था कि यकायक एक बड़े भारी धम्माके की आवाज ने उसे चौंका दिया और वह घबड़ा कर इधर-उधर देखने लगी. इन्द्रदेव भी चौंक कर उठ खड़े हुए और तुरंत ही उनकी निगाह उस बँगले पर गई जिसे हम बन्दरों वाले बँगले के नाम से पुकार आये हैं. इन्होंने देखा कि वे बनावटी बन्दर इस समय बड़ी बेचैनी के साथ इधर-उधर उछल-कूद रहे हैं और उनके पीछे की तरफ छत पर कई आदमी दिखाई पड़ रहे हैं जो बार-बार इसी तरफ देखते हुए आपस में कुछ बातें कर रहे हैं. इन्द्रदेव ने मालती से कहा, "बेटी, रंग-कुरंग नजर आते हैं. मालूम नहीं वे आदमी कौन हैं और यहाँ......"

इन्द्रदेव की बात अभी पूरी नहीं हुई थी कि जाने किधर से एक गोला आकर उसी छत पर गिरा जिस पर ये दोनों खड़े थे. गोला गिरते ही फूट गया और उसमें से बहुत ज्यादा धूआं निकला जिसने इन्द्रदेव और मालती को चारों तरफ से घेर लिया. आँख और नाक में धूआँ लगते ही इन्द्रदेव समझ गये कि यह जहरीला है और बात की बात में बेहोश कर देने का असर रखता है.

7

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है. काले-काले बादलों ने आकाश को एकदम ढक लिया है और इस बात का पता भी नहीं लगता कि चन्द्रदेव आकाश में हैं या नहीं. रह-रह कर बिजली चमकती है और उसकी तड़प कानों को बहरा कर देती है. ठंडी हवा के झोंके बतला रहे हैं कि पास ही में कहीं पानी बरस चुका या बरस रहा है और यहाँ भी शीघ्र ही बरसना चाहता है.

उस पहाड़ी के लगभग कोस भर उत्तर में जिस पर इन्द्रदेव की कैलाश-भवन नामक सुन्दर इमारत है, एकदम ऊँची पहाड़ियों का लम्बा सिलसिला है जो दूर तक चला गया है. ऐसी रात और बदली के समय इस पहाड़ी पर चढ़ना बड़े साहस और जीवट का काम है क्योंकि जंगली जानवरों का डर चाहे न भी हो तो भी साँप-बिच्छू आदि का डर किसी तरह पर कम नहीं है और चिकने तथा काई लगे हुए पत्थर के ढोकों पर से पैर फिसल कर नीचे गड्ढे में जा गिरना कुछ असम्भव नहीं. फिर भी हम इस समय पाँच आदमियों की एक छोटी मंडली को इस बीहड़ पहाड़ी रास्ते से दक्खिन के तरफ जाते हुए देख रहे हैं. अन्धकार के कारण हाथ को हाथ नहीं दिखाई पड़ता, फिर भी जब-जब बिजली चमकती है तो हम देख सकते हैं कि इनमें से हर एक के मुँह पर नकाब पड़ी हुई है तथा बदन काले कपड़ों से अच्छी तरह ढंका हुआ है. बदन पर किस तरह के हर्बे सजे हुए हैं यह तो मालूम नहीं हो सकता पर हर एक के हाथ में एक-एक लम्बा बरछा है जिससे इस बीहड़ रास्ते पर चलने में कुछ मदद मिल सकती है. इनमें से एक आदमी तो आगे है और बाकी के चार उसके पीछे-पीछे जा रहे हैं. जब-जब बिजली चमकती है वे सब रुक जाते हैं और अपने चारों तरफ की आहट लेकर पुनः आगे बढ़ते हैं.

लगभग आधे घंटे तक वे सब इसी तरह बढ़ते गये और तब बिजली की तेज चमक में उन्होंने अपने सामने की पहाड़ी पर दूर से कैलाश-भवन की सुन्दर इमारत की एक झलक देखी. उस समय आगे जाने वाला आदमी रुक गया और हलकी आवाज में पीछे की तरफ देख कर उसने कहा – "रामू, कैलाश-भवन तो आ गया. सामने वाला मैदान पार करते ही हम लोग वहाँ पहुँच जायेंगे."

पीछे से एक आदमी जिसे रामू के नाम से सम्बोधित किया गया था आगे बढ़

आया और बोला, "जी हाँ, अब आगे बढ़ना उचित नहीं है. वह स्थान जिसका पता दिया गया है इसी तरफ कहीं होना चाहिए. मगर इस अंधेरे में उस जगह को खोजना ही बड़ा कठिन होगा!"

वे पाँचों आदमी इकट्ठे हो गये और कुछ देर तक आपस में सलाह करते रहे. इसके बाद वे सब अलग-अलग हो गये और अंधेरे ही में न जाने किस चीज या जगह की खोज करते हुए पाँचों पाँच तरफ फैल गये. इस समय हवा बन्द हो गई थी और हलकी-हलकी बूंदें गिरने लग गई थीं. अपने साथियों की तरह इस मंडली का सरदार भी अलग हो गया और चारों तरफ घूम-घूम कर किसी बात की आहट या टोह लेने लगा. परन्तु जब पानी बरसना आरम्भ हो गया और बिजली का चमकना बन्द हो जाने के कारण कुछ पता लगना लगभग असम्भव हो गया तो उसने अपना काम होने की आशा छोड़ दी और कोई आड़ की जगह तलाश करने लगा जहाँ रुक कर वह और उसके साथी पानी के थमने की राह देख सकें. इधर-उधर घूमता और अपने बरछे का सहारा लेता हुआ वह कुछ निचाई तक उतर आया और तब पत्थर के एक बड़े ढोंके की आड़ में कुछ विश्राम लेने की नीयत से खड़ा हो गया. उसे खड़े हुए कुछ ही देर बीती होगी कि उसको अपने बाईं तरफ कुछ दूरी पर कोई आहट लगी. उसे किसी जंगली जानवर के होने का गुमान हुआ और इस लिहाज से उसने अपने बरछे को सम्भाल कर पकड़ा और कुछ दाहिनी तरफ हट गया पर उसी समय आवाज के ढंग से वह समझ गया कि यह दो आदमियों के बहुत ही धीरे-धीरे बात करने की आवाज है. वह यह समझते ही चौकन्ना हो गया और बड़ी होशियारी से कान लगा कर सुनने लगा. बात करने वाले यद्यपि दूर न थे पर बहुत ही धीमे स्वर में बात कर रहे थे, दूसरे पानी की टपटप भी बाधा पहुँचा रही थी जिससे साफ-साफ तो सुनाई न पड़ा पर दो-चार टूटे-फूटे शब्द कान में जरूर गए —"···के लिए···इन्द्रदेव···की मौत···के काबू···मेरी जान."

शब्द बिल्कुल टूटे-फूटे और बेजोड़ थे पर जान पड़ता है कि सुनने वाले ने उनका मतलब समझ लिया क्योंकि वह आहट बचाता हुआ उन लोगों की तरफ कुछ और घसक गया पर फिर कुछ आवाज न आई और अन्दाज से मालूम हुआ कि वे बात करने वाले कहीं दूसरी जगह चले गए, या पास ही की किसी गुफा में घुस गये हैं. यह आदमी जिसका नाम जब तक कि उसका असल नाम और हाल

न मालूम हो हम घनश्याम रख देते हैं, कुछ देर तक तो रुका रहा पर फिर न जाने क्या सोच कर आगे बढ़ा और बहुत धीरे-धीरे कदम रखता हुआ उसी तरफ चला जिधर से आहट आई थी. उस बड़े पहाड़ी ढोंके के बगल घूमते ही गुफा के मुहाने की तरह एक काला स्थान दिखाई पड़ा और अन्दाज से उसने समझा कि हो न हो यह किसी खोह का मुँह है और इसी के अन्दर वे लोग गये हैं. वह कुछ और आगे बढ़ा और तब उसे निश्चय हो गया कि जरूर वह गुफा या सुरंग है क्योंकि अन्दर से थोड़ी गर्म हवा आती हुई चेहरे पर लगती थी और बहुत गौर करने पर कुछ आहट भी मिलती थी, फिर भी यह सोच कर कि शायद यह किसी दरिन्दे जानवर की माँद हो घनश्याम की यकायक हिम्मत न पड़ी कि वह आगे बढ़े या अन्दर घुसे. वह मुहाने के पास ही चुपचाप खड़ा हो गया और आहट लेने लगा कुछ देर बाद उसे मालूम हुआ कि वह वहाँ अकेला नहीं है बल्कि और भी एक आदमी उस जगह मौजूद है. घनश्याम ने धीरे-से चुटकी बजाई और जवाब में तीन बार चुटकी की आवाज सुनकर समझ गया कि उसका साथी रामू भी पास ही में मौजूद है. यह जान उसे कुछ इतमीनान हो गया और वह कुछ बेखटके होकर गौर के साथ देखने लगा कि गुफा के अन्दर से कौन निकलता है या क्या आवाज आती है.

यकायक अन्दर की तरफ कुछ रोशनी मालूम हुई और वह धीरे-धीरे बढ़ने लगी, जिससे मालूम हुआ कि कोई आदमी रोशनी लिए बाहर को आ रहा है घनश्याम और रामू चौकन्ने हो गए पर फिर भी कौतूहल ने उन्हें हटने न दिया और वे देखने लगे कि किसकी सूरत दिखाई पड़ती है. अन्दर का उजाला बढ़ने लगा, कुछ ही देर बाद मालूम हुआ कि वह गुफा जिसका मुहाना तो बहुत तंग और नीचा है पर जो अन्दर से बहुत खुलासा चौड़ी और लम्बी है कुछ ही दूर जाकर दाहिनी तरफ को घूम गई है और उधर ही से रोशनी भी आ रही है, साथ ही यह भी दिखाई पड़ा कि उस मोड़ के पास ही दो आदमी दीवार के साथ चिपके खड़े हैं जिनके बदन काले कपड़े और नकाब से बिल्कुल ढँके हैं और जिनमें से एक के हाथ में एक तेज छुरा चमक रहा है. रोशनी आते देख ये दोनों होशियार हो गये और रंग-ढंग से घनश्याम ने समझ लिया कि अब शीघ्र ही इस गुफा में कोई भयानक घटना होने वाली है.

पल-पल में रोशनी बढ़ने लगी और साथ ही आने वाले के पैरों की आहट भी

सुनाई पड़ने लगी. जिस आदमी के हाथ में छुरा था उसने अपना हाथ ऊँचा किया और साथ ही वह आदमी भी मोड़ घूम कर सामने हुआ जिसके हाथ में रोशनी थी. छुरी वाले ने छुरी मारने को जोर से हाथ बढ़ाया पर उसी समय उसका हाथ रुक गया और उसके मुँह से एक चीख की आवाज निकल पड़ी. हमारे घनश्याम और उसके साथी की भी डर के मारे अजीब हालत हो गई. उन दोनों ने देखा कि रोशनी लिये जो सामने खड़ा हुआ है वह कोई आदमी नहीं बल्कि हड्डियों का एक खौफनाक ढाँचा है, जिसके बिना माँस और चमड़े वाले मुँह के दाँत भयानक हँसी हँस रहे थे और आँखों के काले गड़हे मानो देखने वाले की हँसी उड़ा रहे थे. ढाँचे का दाहिना हाथ आगे बढ़ा हुआ था जिसमें एक दिया था और बायाँ हाथ एक तलवार की मूठ पकड़े हुए था पर उसमें तलवार न थी केवल कब्जा मात्र था. यह एक ऐसा डरावना दृश्य था जिसने इन लोगों के रोंगटे खड़े कर दिये और खास कर वह आदमी तो जो कि छुरी से उस पर वार करने वाला था एकदम ही काँप गया और छुरी फेंक दोनों हाथों से अपना मुँह ढाँप पीछे को भागा. उसके साथी ने भी एक चीख मारी और उसी के पीछे बाहर की तरफ भागा. उसी समय ऐसा मालूम हुआ मानो वह हड्डियों का ढाँचा विकट रूप से हँसा क्योंकि भयानक और डरावनी हँसी से गुफा गूँज उठी और वह आवाज दूर-दूर तक फैल गई. भागने वाले दम छोड़ कर भागे और उसी समय आसेब के हाथ का चिराग जमीन पर गिर कर फूट गया जिससे चारों तरफ पुनः अन्धकार छा गया.

यद्यपि घनश्याम और रामू पर भी उस भयानक नर-कंकाल ने कम असर न किया पर ये दोनों दिलावर और बहादुर थे अतएव इन्होंने अपने होशहवास ठिकाने रक्खे. जैसे ही वे दोनों भागने वाले इनके पास पहुँचे, दोनों ने एक-एक आदमी को पकड़ लिया. उन दोनों की घबराहट और भी बढ़ गई और डर के मारे वे बदहवास हो गये पर घनश्याम और रामू ने इस बात का कुछ भी खयाल न किया. दोनों के पास बेहोशी की दवा मौजूद थी जिसकी सहायता से दोनों ने अपने-अपने कैदी को बेहोश कर दिया और तब उनको उठा कर ले भागे. पानी जो अब तक धीरे-धीरे गिर रहा था अब यकायक तेज हुआ और मूसलाधार होकर बरसने लगा पर इन्होंने इसका कुछ भी खयाल न किया.

लुढ़कते, गिरते, उठते और भीगते हुए दोनों आदमी उन दोनों को पीठ पर लादे पहाड़ी के नीचे उतर आये. यहाँ एक पेड़ के नीचे खड़े होकर घनश्याम ने

जफील बजाई. तुरन्त ही कुछ दूर से उसका जवाब मिला और थोड़ी ही देर बाद घनश्याम के तीनों साथी भी वहाँ आ पहुँचे. सभों में जल्दी-जल्दी कुछ बात हुई और तब आगे घनश्याम और उसके पीछे दो-दो आदमी एक-एक बेहोश को उठाये हुए तेजी के साथ मूसलाधार पानी में भीगते हुए भी शिवदत्तगढ़ की तरफ रवाना हो गए.

इनके जाने के कुछ ही देर बाद एक दूसरा आदमी उस जगह आ पहुँचा. इसके हाथ में एक चोर लालटेन थी जिसकी रोशनी में इसने गौर से चारों तरफ देखा और तब जमीन पर पड़े हुए निशानों पर गौर करके निश्चय कर लिया कि ये लोग शिवदत्तगढ़ की तरफ गये हैं. यह जान उसने एक लम्बी साँस खींची और कहा, "मुझे थोड़ी देर हो गई जिससे काम बिगड़ गया, पर खैर कोई हर्ज नहीं -- क्या कोई भूतनाथ से भी भाग कर बच सकता है."

यह नया आने वाला आदमी वास्तव में भूतनाथ था जो बहुत देर तक उसी जगह घूमता हुआ न जाने क्या-क्या सोचता रहा और तब मन ही मन यह कह कर कि 'इस समय पीछा करना फजूल है' बरसते पानी और बीहड़ रास्ते का कुछ भी खयाल न कर कैलाश-भवन की तरफ रवाना हुआ.

8

सिद्धजी बने हुए प्रभाकरसिंह ने इन्द्रदेव की स्त्री सर्यू को दुष्ट दारोगा के पंजे से छुड़ा लिया और उसी के रथ पर बैठ कर चले गये.

उस समय दारोगा बहुत ही प्रसन्न था और यह सोच-सोच अपनी क़िस्मत को सराह रहा था कि जब ईश्वर ने दया करके बाबा मस्तनाथ को भेज दिया है और पुनः कल आकर वे उस तिलिस्म का भेद बताने को भी कह गए हैं तो उसकी किस्मत फिरा ही चाहती है और ताज्जुब नहीं कि एक सप्ताह के अन्दर ही वह लोहगढ़ी और उसके बड़े भारी खजाने का मालिक बन जाय. इस विचार ने उसे यहाँ तक प्रसन्न किया कि उसकी तकलीफ बहुत कुछ कम हो गई और वह बाबाजी को दरवाजे तक पहुँचा कर अपने पलंग पर नहीं गया बल्कि उस कोठरी में चला जिसमें मनोरमा और नागर बैठी हुई ताज्जुब से उन विचित्र सिद्धजी और उनके अद्भुत डण्डे का जिक्र कर रही थीं. दारोगा को देखते ही दोनों उठ खड़ी हुईं.

मनोरमा ने उसे सहारा दे अपने बगल में गद्दी पर बैठाया और नागर ने कई तकिये ढासने और सहारे के लिए उसके चारों तरफ लगा दिये. दारोगा के बैठते ही मनोरमा ने पूछा, "ये बाबाजी कौन थे जिनकी आपने इतनी इज्जत की ?"

दारोगा : ये बड़े भारी तपस्वी और प्रतापी सिद्ध पुरुष हैं. मैंने और इन्द्रदेव ने जिन ब्रह्मचारीजी से शिक्षा पाई है ये उनके गुरुभाई हैं और हम लोग इन्हें भी गुरु ही की तरह मानते और पूजते हैं. आज कितने ही बरसों बाद इन्होंने दर्शन दिये हैं. ये बड़े भारी योगी हैं, इनकी सामर्थ्य का हाल सुनोगी तो ताज्जुब करोगी.

नागर : क्या हम लोगों ने देखा नहीं ! उनके डण्डे की ताकत देख मुझे तो गश आ गया ! !

मनो० : हाँ, आप पर जब उन्होंने क्रोध किया तो उनके डण्डे से किस प्रकार आग निकलने लगी ! इतना मोटा पर्दा छूते ही भस्म हो गया. आपने अच्छा किया जो उनका क्रोध अपने ऊपर नहीं लिया नहीं तो न जाने क्या आफत आ जाती.

दारोगा : ओफ ! ये अपना डण्डा जरा सा छुला भर देते तो मेरा खातमा हो जाता. यही देख कर मैंने सर्यू को धीरे से उनके हवाले कर दिया.

नागर : मगर अब इन्द्रदेव को आप क्या कह कर समझाइयेगा ? वे जब सुनेंगे कि आपने उनकी स्त्री को कैद कर रखा था तो बड़े ही क्रोधित होंगे !

मनो० : तो इसके लिए ये क्या करते ! इन्द्रदेव के क्रोध को देखते या गुरुजी के क्रोध से भस्म होते !

दारोगा : अरे इन्द्रदेव को मैं समझा लूँगा, वह बेवकूफ है क्या चीज ?

नागर : आप ही तो कई बार कह चुके हैं कि 'दुनिया में मैं किसी से डरता हूँ तो एक इन्द्रदेव से' और अब कहते हैं कि वह क्या चीज है ?

दारोगा : बेशक इन्द्रदेव है बड़ा बलवान पर यदि बाबा मस्तनाथ हमारी मदद पर मुस्तैद हो जायँ तो वह कुछ नहीं कर सकता. अगर गुरुजी ने अपने दोनों वादे पूरा कर दिया तो इन्द्रदेव ऐसे हजारों मेरे तलवे चाटा करेंगे.

मनोरमा : दोनों वादे कौन ? एक तो लोहगढ़ी वाला !

दारोगा : और दूसरा गदाधरसिंह के विषय में ! वह कम्बख्त भी आजकल बुरी तरह से मेरे पीछे पड़ गया है. इन्द्रदेव ने उस पर न जाने कैसा जादू कर दिया है कि वह बिल्कुल उन्हीं के कहने में आ गया है, और मुझे बर्बाद कर देने की

खुली धमकी देता है. अगर वह कम्बख्त किसी तरह मेरे काबू में आ जाय तो मैं दुनिया में अपने बराबर किसी को न समझूँ.

नागर : मैं भी उस शैतान से बड़ा डरती हूँ. उसके सामने अपनी जुबान हिलाने की भी हिम्मत नहीं पड़ती.

दारोगा : क्या बताऊँ, मुझे तो बार-बार यह भी शक होता है कि उस गुप्त सभा में लूट-पाट मचाने वाला और कलमदान लूट ले जाने वाला भी वही शख्स है.

मनो० : (चौंक कर) हैं, क्या ऐसा हो सकता है ? मगर यह शक आपको क्योंकर हुआ ?

दारोगा : अब दिल ही तो है, क्या बताऊँ कि कैसे शक हुआ. मगर मुझे दृढ़ निश्चय है कि वही उन सब आफतों की जड़ है.

मनो० : लेकिन अगर ऐसा ही है और वही वह कलमदान लूट कर ले गया है तो बड़ी आफत मचावेगा. उसने उस कलमदान को खोले बिना कदापि न छोड़ा होगा, और इस हालत में उस सभा का सारा भेद उसे जरूर मालूम हो गया होगा. आज हो या कल वह आपका भण्डाफोड़ किये बिना कभी न छोड़ेगा.

दारोगा : बेशक यही बात है और यही सोच कर तो मैं अधमूआ होता जा रहा हूँ. अगर गुरुजी की कृपा से वह वश में न हुआ तो फिर मेरा मरण ही समझना चाहिए.

नागर : गुरुजी वादा तो कर गये हैं कि तीन दिन के भीतर वह आपके पैरों पर लोटता दिखाई देगा.

दारोगा : हाँ, बेशक कह गये हैं और आज तक उन्होंने कभी झूठ कहा ही नहीं, जो कुछ जिससे वादा किया है जरूर पूरा किया ! मुझे तो पूरा विश्वास है कि शीघ्र ही गदाधरसिंह मेरे कब्जे में आ जायेगा.

नागर : (मनोरमा की तरफ देख कर) इन्होंने कोशिश तो बहुत की पर वह अभी तक कब्जे में नहीं आया.

मनो० : क्या बतावें, वह कम्बख्त ऐसा धूर्त है कि जल्दी उसे किसी की बात पर विश्वास ही नहीं होता. फिर भी मैंने आशा नहीं छोड़ी है, अबकी बार अगर पुनः आया तो कुछ दूसरा चकमा दूंगी.

दारोगा : अजी मैं तो समझता हूँ अब तुम्हें मेहनत करने और कैदी बनने

की जरूरत ही नहीं पड़ेगी, बाबाजी के कहे पर मुझे विश्वास है, वे जरूर अपना कहा पूरा करेंगे.

मनो० : फिर भी आपको कोशिश से न चूकना चाहिए. कल मुझे पुन: उस कुएँ में जाना है अस्तु मैंने जो कुछ कहा है उसका इन्तजाम करा रक्खें. देखूँगी वह कम्बख्त कैसे नहीं मेरे जाल में फँसता !

दारोगा : हाँ, एक बार फिर तो कह जाओ कि तुम्हें किस-किस सामान और बन्दोबस्त की जरूरत थी. बाबा मस्तनाथ के आ जाने से वह जिक्र अधूरा ही रह गया.

मनोरमा ने कुछ कहने के लिए मुँह खोला ही था कि बाहर दरवाजे पर से चुटकी बजने की आवाज आई. इशारा पाकर नागर बाहर गई और कुछ ही देर में वापस आकर बोली, "लौंडी कहती है कि गदाधरसिंह आये हैं और किसी बहुत ही जरूरी काम से इसी समय मिलना चाहते हैं. नौकरों ने कहा भी कि इस समय आप मिल नहीं सकते पर वह किसी तरह नहीं टलते. (हँसकर) आपके सिद्धजी का मंत्र मालूम होता है काम कर गया !"

दारोगा : बेशक ! अच्छा मैं बाहर कमरे में जाता हूँ, लौंड़ी से कहो उसे लावे, और तुम दोनों अन्दर चली जाओ.

इतना कह दारोगा उठ खड़ा हुआ. नागर और मनोरमा ने उसे सहारा दे उसके कमरे में पलंग पर पहुँचा दिया और तब उसकी आज्ञानुसार वे दोनों वहाँ से हट गईं. थोड़ी ही देर बाद एक लौंडी के पीछे भूतनाथ उस जगह पहुँचा. दारोगा ने लौंडी से चले जाने को कहा और हाथ से अपने पलंग के बगल में रक्खी हुई एक चौकी पर बैठने का इशारा करते हुए भूतनाथ से कहा, "आओ जी मेरे दोस्त भूतनाथ—तुम तो ईद के चाँद हो रहे हो. भला किसी तरह तुम्हें अपने इस मुसीबतजदे दोस्त की याद तो आई !"

भूतनाथ दारोगा की बताई हुई चौकी पर बैठ गया और उसकी अवस्था देख नकली सहानुभूति दिखाता हुआ पूछने लगा, "यह क्या दारोगा साहब—आप तो बिल्कुल जख्मी हो रहे हैं ! कहीं किसी से लड़ाई हो गई क्या ?"

दारोगा : क्या बताऊँ दोस्त, मेरी तो किस्मत ही खराब हो गई है. उस दिन तीन मंजिल ऊपर की छत से नीचे चौक में आ गिरा. घंटों बेहोश रहा, सेरों खून निकल गया, बदन भर में पचासों टाँके लगाये गए और अब यह हालत है कि

हिलना-डुलना मुश्किल है, मगर तुम मेरे दोस्त ऐसे बेमुरौवत निकले कि एक बार पूछने भी नहीं आये कि तुम्हारा लंगोटिया दोस्त मरा कि जीता है !

भूत० : क्या बताऊँ मुझे यह खबर लगी तो जरूर थी कि आपकी तबीयत खराब है पर यह मुझे बिल्कुल मालूम नहीं था कि आप छत से गिर गये हैं. मुझसे किसी ने कहा कि जमानिया के बाहर किसी से लड़ाई हो गई जिसमें आप जख्मी हुए हैं. मैंने यह भी सुना कि आपके दुश्मन आपको चुटीला कर भाग गये और आप उन्हें पकड़ने की कोशिश कर रहे हैं. आज कई दिन से मैं सोच रहा था कि आपसे मिलूँ पर समय न मिलने के कारण आ न सका. मैंने यह भी सुना था कि आपको गहरी चोट नहीं आई है इससे कुछ निश्चिन्त-सा भी रहा पर आज तो मैं देखता हूँ कि आपकी बुरी हालत है ! बेशक आपके दुश्मनों ने आपसे बुरी तरह बदला लिया !

दारोगा : (कुछ सहम कर) नहीं-नहीं, मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसी कोई बात नहीं हुई, मुझे गिर जाने के कारण ही चोट आई.

भूत० : खैर जो कुछ हो, अच्छा यह बताइये अब तबियत कैसी है ?

दारोगा : बहुत कुछ सुधर गई है, घाव भर गए हैं और अब दो-चार रोज में चलने-फिरने लायक भी हो जाऊँगा, वैद्यजी की दवा से ताकत आ रही है फिर भी अभी महीनों घर से बाहर निकलने का मौका न आवेगा.

भूत० : ईश्वर को धन्यवाद है कि इतनी गहरी चोट से भी आपको उसने बचा लिया.

दारोगा : मगर तुम अपना हाल तो बताओ कि इतने दिन किधर रहे और क्या करते रहे ? आज मुद्दतों के बाद तुम्हारी सूरत दिखाई पड़ी है.

भूत० : क्या बताऊँ, मैं बड़ी बुरी झंझट में पड़ गया था.

दारोगा : झंझट ! कैसी झंझट, क्या मैं उसका हाल सुन सकता हूँ ?

भूत० : हाँ हाँ, क्यों नहीं, आप ही तो उसका कर्ता-धर्ता हैं. आप ही को सुनाने तो मैं इस समय आया ही हूँ !

दारोगा : मेरे कारण आपको झंझट ! यह विचित्र बात कैसी ?

भूत० : मैं अभी आपको बताता हूँ मगर पहिले यह कहिए कि किसी जगह से कोई छिप कर हम लोगों की बातें तो सुन नहीं सकता ?

दारोगा : क्यों क्या कोई गुप्त बात है ?

भूत० : बेशक ऐसा ही है और वह बात भी ऐसी है कि दूसरों के कानों तक चली जाएगी तो मेरी तो नहीं पर आपकी बड़ी खराबी हो जायगी.

दारोगा : (डर कर) आखिर बात क्या है ? कुछ मालूम भी तो हो, आप तो बेतरह डरा रहे हैं.

भूत० : डर की बात कुछ भी नहीं है, और जो कुछ है सो भी मैं कह देता हूँ. मुझे पता लगा है कि आपने अपने दोस्त इन्द्रदेव की लड़की और स्त्री इन्दिरा और सर्यू को अपने मनहूस मकान में बन्द कर रक्खा है और दोस्ती तथा गुरुभाई के रिश्ते का खूब बर्ताव कर रहे हैं.

दारोगा : (काँप कर) इन्दिरा और सर्यू को मैंने बन्द कर रक्खा है ! भला यह किसने तुमसे कह दिया ! ! और उन दोनों से मुझसे मतलब ही क्या ?

भूत० : सिर्फ इतना ही कि आप उनकी जान लेने पर तुल गए हैं और चाहते हैं कि किसी तरह गोपालसिंह भी आपके चंगुल में फँस जायें तो आप निष्कंटक हो जायँ और बेखटके जमानिया पर हुकूमत करें.

दारोगा : आज तुमने भांग तो नहीं पी ली है ! किस तरह की बहकी-बहकी बातें कर रहे हो ! भला अपने मालिक गोपालसिंह और उनके दोस्त इन्द्रदेव के साथ मैं किसी किस्म की बुराई करने का कभी खयाल भी मन में ला सकता हूँ ?

भूत० : (हँस कर) ख्याल लाना तो दूर आप वैसा कर चुके हैं, कर रहे हैं और अगर जल्दी ही आपकी कमर तोड़ न दी गई तो तब तक करते रहेंगे जब तक इनमें से कोई भी जीता-जागता रहेगा.

दारोगा : (बिगड़कर) बस बस, अपनी जुबान सम्हालो ? तुम बेतरह बहक रहे हो ! अगर मुझे तुम्हारी दोस्ती का खयाल न होता तो मैं अभी तुम्हें अपने मकान से बाहर निकल जाने को कहता !

भूत० : क्या खूब, आपको और दोस्ती का ख्याल ! यह तो उसे सुनाइए जो आपकी नस-नस से वाकिफ न हो. कुछ दोस्ती आपने दामोदरसिंह के साथ अदा की, कुछ राजा गिरधरसिंह का नमक अदा किया, अब कुछ इन्द्रदेव, गोपालसिंह और मेरे साथ दोस्ती का दम भर रहे हैं. आप ऐसे दोस्त और नमकख्वार जिसे मिल जायें उनके लिए इस दुनिया में शेर-चीतों की मांद भी उतनी डरावनी नहीं जितनी आपकी दोस्ती और नमकख्वारी! काले साँप के साथ खेलना और बिच्छुओं को छाती पर रखना भी उतना भयानक नहीं जितना आपका साथ करना !

भूतनाथ की वेतुकी बातें सुन दारोगा घबड़ा गया और डर कर उसका मुँह देखने लगा. इस समय उसके चेहरे पर तरह-तरह का रंग आता और जाता था. इतना तो वह जरूर समझ गया कि भूतनाथ को उसके किसी गुप्त भेद का पता लग गया है पर वह कौन-सा भेद है और कितना हाल उस पर प्रकट हुआ है यह उसे बिल्कुल ही नहीं मालूम था अतएव बड़ी घबडाहट के साथ भूतनाथ का मुँह देखने लगा.

भूत० : आप मेरा मुँह क्या देख रहे हैं दारोगा साहब ! जो कुछ मैं कह रहा हूँ वह बहुत ठीक है और मैं इसे बहुत जल्द साबित कर दूंगा कि दामोदरसिंह की जान लेने वाले आप ही हैं, महारानी को मारने वाले आप ही हैं, महाराज गिरधर सिंह की हत्या करने वाले आप ही हैं. अपने दोस्त इन्द्रदेव की लड़की और स्त्री की जान पर वार करने वाले आप ही हैं, गोपालसिंह को कैद करने वाले आप ही हैं और इन्द्रदेव को गिरफ्तार कराने वाले भी आप ही हैं ! केवल यही नहीं बल्कि उस गुप्त कमेटी के कर्ताधर्ता भी आप ही हैं जिसकी मदद से आप बहुत कुछ कर चुके और अभी बहुत कुछ कर गुजरने की आशा रखते हैं. लीजिए देखिए और इन कागजों को पढ़िए.

इतना कह कर भूतनाथ ने अपने बटुए में से बहुत-से कागज निकाल कर दारोगा के सामने फेंक दिए और गरज कर कहा, "दारोगा साहब ! आपकी उस गुप्त सभा से सर्यू वाला कलमदान लूट ले जाने वाला मैं ही हूँ, मैंने ही इन्दिरा को आपके इस मकान से निकाला है, मैंने ही सर्यू और इन्द्रदेव की जान बचाई और मैं ही आपको कैदखाने की अँधेरी कोठरी में भेजने के लिए यमदूत की तरह आपकी खोपड़ी पर आ मौजूद हुआ हूँ. लीजिए देखिए इन कागजों को पढ़िए और मौत से लड़ने के लिए तैयार हो जाइए, क्योंकि आपके यहाँ से निकल कर मैं सीधा गोपालसिंह के पास जाऊँगा और वह कलमदान उनके आगे रख आपकी काली कारतूतों का भंडा फोड़ूंगा !!"

भूतनाथ की ये बातें सुनते ही और उन कागजों पर एक निगाह डालते ही दारोगा की तो यह हालत हो गई कि काटो तो बदन में खून नहीं ! उसे मालूम हो गया कि भूतनाथ ने उसका वह बहुत ही गुप्त भेद, जिसे वह जान से ज्यादा छिपा कर रक्खे हुआ था जान लिया और अब कुछ ही समय बाद उसे कैदखाने की कोठरी नसीब हुआ चाहती है. मौत की भयानक सूरत तरह-तरह की डरावनी

शकलों में उसकी आँखों के सामने फिरने लगी और वह यहाँ तक बदहवास हो गया कि उसके मुँह से आवाज तक निकलनी असंभव हो गई. वह पागलों की तरह सिर्फ भूतनाथ की सूरत देखने लग गया.

भूत० : आप मेरी तरफ क्यों देख रहे हैं ! इन कागजों को देखिए और अपनी आखिरी घड़ी का इन्तजार कीजिए. समझ लीजिए कि आपके पापों का घड़ा फूट गया और अब आप किसी तरह बच नहीं सकते. आप विश्वास रक्खें कि गोपालसिंह अपने पिता और इन्द्रदेव अपने ससुर के खूनी की जान इस तकलीफ के साथ लेंगे कि खूँखार जानवरों को भी आपकी हालत देख कर रहम न आवेगा और आप की लाश पर कौवे और चील भी नफरत की निगाह डालेंगे.

भूतनाथ की बातों ने मौत की डरावनी सूरत दारोगा की आँखों के सामने खड़ी कर दी और वह इस तरह उसकी सूरत देखने लगा जैसे घोर जंगल की लताओं में सींग फँस जाने के कारण रुका हुआ बारहसिंघा अपने पीछे झपटने वाले शेर को देखता है. कुछ देर बाद वह आपसे आप ही पागलों की तरह टूटे-फूटे शब्दों में कहने लगा—"सब फजूल······इन्द्रदेव की प्यारी इन्दिरा···महाराज गिरधरसिंह की मौत···मेरे बहुत ही···दामोदरसिंह का खून······मेरी जान का ग्राहक···अब तो···बुरी तरह फँस···मगर···तब क्यों नहीं···"

इतना कहते-कहते दारोगा रुक गया और कुछ सोचते हुए उसने एक छिपी निगाह भूतनाथ पर डाली जो इस प्रकार दारोगा को देख रहा था जिस तरह कि कोई व्याध अपने जाल में फँसी हुई हिरनी को देखता है. दारोगा कुछ देर तक उसी तरह देखता रहा, तब बोला, "खैर तो अब मैं जान गया कि तुम मुझे सब तरह से चौपट करने के लिए तैयार हो गए हो."

भूत० : दारोगा साहब—आपको मैं नहीं बल्कि आपके कर्म चौपट कर रहे हैं और उन्हें ही आप इसके लिए सराहिये, मैं तो सिर्फ अपने दोस्त का हित करने के विचार से इस झगड़े में पड़ गया हूँ.

दारोगा : और वह दोस्त इन्द्रदेव है !

भूत० : जो कोई भी हो.

दारोगा : जो कोई क्या बेशक इन्द्रदेव ही होगा जो मेरा गुरुभाई होने का दम भरता है और हर बात में दोस्ती जाहिर करने को मरा जाता है.

भूत० : जी वह इन्द्रदेव नहीं बल्कि वह इन्द्रदेव कहिए जिसकी स्त्री और

लड़की आपकी बदौलत कैदखाने में मौत से बढ़ कर मुसीबत में पड़ी हुई हैं अ जिसके ससुर और न जाने कितने रिश्तेदार आपकी बदौलत मौत की तकली उठा चुके और उठा रहे हैं.

दारोगा : खैर तुम ऐसा ही कहो, झूठ और फरेब का तो जवाब ही क्या सकता है.

भूत० : (गुस्से से) मैं झूठ कह रहा हूँ ? क्या सामने पड़े हुए कागज आप दिखाई नहीं पड़ रहे हैं या आप इन्हें अपनी सच्चरित्रता का विज्ञापन सम कर···

दारोगा भूतनाथ से बातें भी करता जा रहा था और साथ ही छिपे-छि अपने पलंग के सिरहाने की तरफ हाथ बढ़ाकर कुछ करता भी जाता था. भूतना की बात खतम नहीं हुई थी कि यकायक कमरे के बगल की किसी कोठरी में एक घंटे के बजने की आवाज आने लगी. भूतनाथ आवाज सुनते ही चौकन्ना गया और फुर्ती से अपनी जगह से उठने लगा मगर उसी समय पीछे का एक द वाजा खुला और उसमें से काली पोशाक पहिने दो आदमी झपटते हुए वहाँ पहुँचे. इन दोनों का डील और कद देखने ही से मालूम होता था कि ये बड़े ही मज बूत, दिलेर और बहादुर हैं और साथ ही इनकी काली पोशाक और नकाब अन्दर से चमकती हुई खूंखार आँखों तथा हाथ की तलवारों ने इन्हें बड़ा ही डर वना बना रक्खा था. ये दोनों आते ही भेड़ियों की तरह भूतनाथ पर टूट पड़े औ उसी समय दारोगा ने वह शमादान जो पलंग के सिरहाने की तरफ जल रहा हाथ के धक्के से जमीन पर गिरा बुझा दिया जिससे उस कमरे में घोर अन्धका छा गया.

दारोगा की इस अचानक की कार्रवाई और नकाबपोशों के इस तरह यकाय आ टूटने से एक बार तो भूतनाथ घबड़ा गया पर तुरन्त ही उसने अपने होश-हवा ठिकाने किये और उछल कर अपनी जगह से हट दूसरी तरफ चला गया. उ समय बड़े जोर से धम्माके की आवाज हुई जिसकी आहट से भूतनाथ को मालू हो गया कि कमरे की जमीन का उतना हिस्सा जहाँ वह बैठा था मय चौकी जमीन के अन्दर धँस गया है और उसी चौकी के गिरने का वह भयानक धम्मा है. आवाज बहुत ही गहराई से आती हुई मालूम होती थी जिससे उसको यह गुमान हुआ कि वह चौकी शायद किसी कुएँ या ऐसी ही किसी जगह में जा गि

है. उसने अपने बच जाने पर ईश्वर को धन्यवाद दिया और तब तुरन्त ही जेब से सीटी निकाल कर बजाई. जवाब में पास ही कहीं से तीन बार सीटी बजाने की आवाज आई जिसे भूतनाथ ने प्रसन्नता से सुना और समझ लिया कि उसके तीन शागिर्द भी उस जगह पहुँच चुके हैं. एक सायत का भी विलम्ब न करके उसने अपने बटुए में से एक छोटा-सा गेंद निकाला और उसे जोर से जमीन पर पटका. भारी आवाज के साथ वह गेंद फट गया और उसमें से इतनी चमक और तेजी से आँखों में चकाचौंध पैदा करने तथा देर तक टिकने वाली रोशनी ने पैदा होकर कमरे भर में उजाला कर दिया.

रोशनी होते ही कमरे में एक अजीब दृश्य दिखाई पड़ा. दारोगा साहब कमरे के एक कोने में जमीन पर गिरे हुए थे और भूतनाथ का एक शागिर्द खंजर लिए उनकी छाती पर सवार था. उन दोनों नकाबपोशों में से जिन्होंने भूतनाथ पर हमला किया था एक तो बेहोश पड़ा हुआ था और दूसरे को उसके दो शागिर्द जमीन पर दबाये कमन्द से हाथ-पाँव बाँध रहे थे. अपने शागिर्द की यह तेजी और फुर्ती देख भूतनाथ बड़ा ही खुश हुआ और जोर से बोल उठा, "शाबाश !" उसी समय उसके दो साथी और उस कमरे में आ पहुँचे जिनकी मदद से वह दूसरा नकाबपोश भी तुरन्त बेकार कर दिया गया. उस समय भूतनाथ दारोगा के पास गया और उससे बोला, "बाबाजी, आपने कारीगरी तो बहुत की थी पर काम कुछ न बना ! अब आपको मालूम हो गया होगा कि भूतनाथ दुश्मन के घर में अकेला या बेपरवाह होकर नहीं आता. कहिए अब आपके साथ क्या सलूक किया जाय ?"

दारोगा के मुंह से डर के मारे कोई आवाज नहीं निकल रही थी. वह अपने मौत की घड़ी नजदीक जान आँखें बन्द किये हुए मानो अपनी आखिरी साँसें गिन रहा था. डर के मारे उसका बदन इस तरह काँप रहा था जैसे जूड़ी बुखार चढ़ आया हो. उसकी शक्ल ही से मालूम होता था कि वह अपनी जिन्दगी से बिल्कुल नाउम्मीद हो चुका है. भूतनाथ ने पुनः पूछा, "क्यों दारोगा साहब, बोलते क्यों नहीं ! कहिए अब मैं आपके साथ क्या सलूक करूँ और आपके इन मददगारों की क्या गति बनाई जाय ! (हँस कर) क्यों न आपको इसी हालत में राजा गोपालसिंह के पास उठा ले चलूं !"

यह बात सुनते ही दारोगा काँप उठा और आँखें खोलकर बड़ी करुणा की

दृष्टि से भूतनाथ की तरफ देखने लगा. भूतनाथ ने अपने शागिर्द को उसके ऊपर से हट जाने का इशारा किया और आप दारोगा के सामने जा खड़ा हुआ क्योंकि उसके ढंग से मालूम होता था कि वह कुछ कहना चाहता है पर डर के मारे उसके मुँह से आवाज नहीं निकल रही है.

इतने ही में बाहर दरवाजे की तरफ रोशनी दिखाई दी और शोरगुल की आवाज आई. इस कमरे में जो कुछ काण्ड मच गया था उसकी खबर मनोरमा और नागर को लग गई थी और घर के नौकरों को भी इस लड़ाई-झगड़े का पता लग गया था, अस्तु कई आदमी दरवाजे पर पहुँच कर कमरे के अन्दर की विचित्र अवस्था और अपने मालिक का अद्भुत हाल देख रहे थे. उन्हें वहाँ मौजूद पा दारोगा ने जबरन अपने होश-हवास ठिकाने किये और धीमी आवाज में भूतनाथ से कहा, "भूतनाथ, जो कुछ मैंने किया उसके लिए मैं माफी माँगता हूँ और तुम्हारे गुलाम की तरह तुमसे कहता हूँ कि मेरे इन नौकरों के सामने अब मुझको और जलील न करो. तुम जो कुछ कहो मैं करने को तैयार हूँ मगर इस समय मेरी इज्जत रख लो!"

भूतनाथ दारोगा का मतलब समझ गया. वह खुद भी नहीं चाहता था कि इतने आदमियों के सामने कुछ कहे या करे. सब कुछ होने पर भी वह अच्छी तरह समझता था कि दारोगा के सैकड़ों नौकर और सिपाहियों से भरे हुए इस भयानक और विचित्र मकान में वह खतरे से खाली नहीं है अस्तु कुछ सोच-विचार कर उसने धीरे-से दारोगा से कहा, "मैं खुद नहीं चाहता था कि आपकी किसी तरह पर बेइज्जती करता या तकलीफ पहुँचाता मगर खुद आप ही ने अपनी करनी से यह सामान पैदा कर लिया. खैर अब आप उठिये, अपने इन आदमियों को बिदा कीजिये और ठंडे दिल से मुझसे बातें कीजिये."

हाथ का सहारा देकर भूतनाथ ने दारोगा को उठाया और मदद देकर पलंग पर ला बैठाया. दारोगा ने आँख से इशारा किया और तब भूतनाथ से कहा, "मेरे दोस्त! तुम्हारी मैं किस तरह तारीफ करूँ. तुमने इस समय मेरी जान बचाई है! (अपने नौकरों और आदमियों की तरफ देख कर) मेरे दोस्त भूतनाथ और इनके शागिर्दों ने अभी मेरी जान (दोनों नकाबपोशों की तरफ दिखाकर) इन हरामजादों से बचाई है. यहाँ का शोरगुल इन्हीं कम्बख्तों के कारण था. (भूतनाथ से) दोस्त! अब तुम अपने आदमियों को हुक्म दो कि इन कमीनों को इसी गढ़े

फेंक दें, तब हम लोग दूसरी जगह चल कर बातें करेंगे."

जिस जगह चौकी पर भूतनाथ बैठा हुआ था वहाँ एक भयानक अँधेरा गढ़ा अभी तक दिखाई पड़ रहा था. भूतनाथ का इशारा पा उसके शागिर्दों ने दोनों स्याहपोशों को बारी-बारी से उसी गढ़े में फेंक दिया जिसमें से उनके चिल्लाने की आवाज आने लगी. दारोगा के पलंग के पीछे दीवार के साथ एक अलमारी थी जिसमें चाँदी के दो मुट्ठे लगे हुए थे. दारोगा ने पीछे झुककर मुट्ठों को जोर से घुमा दिया, साथ ही कमरे की सतह का वह हिस्सा जहाँ पर भूतनाथ बैठा हुआ था पुन: ज्यों-का-त्यों अपनी जगह पर आकर इस तरह बैठ गया कि बहुत गौर करने पर भी यह न मालूम हो सकता था कि यहाँ कोई ऐसा भेद है.

दारोगा ने भूतनाथ से कहा, "आओ हमलोग एकान्त में चल कर बातें करें." और उसके सिर हिला कर मंजूर करने पर वह दूसरे कमरे की तरफ बढ़ा और नौकरों को हुक्म देता गया, "इस कमरे को साफ कर दो."

भूतनाथ के शागिर्द भी भूतनाथ का इशारा पा इधर-उधर हो गये अर्थात् जिस तरह पहिले वे कहीं छिपे हुए थे वैसे ही पुन: उस शैतान के आँत की तरह वाले मकान में कहीं गायब हो गये. दारोगा भूतनाथ को एक बिल्कुल ही एकान्त जगह में ले गया और वहाँ कमरे का दरवाजा बन्द कर उससे बातें करने लगा.

9

जिस समय किसी का फेंका हुआ एक गोला आकर उस छत पर गिर कर फूटा और उसमें से बहुत-सा धुआँ निकल कर चारों तरफ फैल गया उसी समय इन्द्रदेव समझ गये कि यह धुआँ जहरीला और बहुत बुरा असर पैदा करने वाला है. इसके पहिले कि धुएँ का असर होने पावे उन्होंने वहाँ से हट जाने का इरादा किया और उन कागजों तथा सामानों को बटोर और मालती को अपने पीछे आने को कहते हुए वे फुर्ती के साथ नीचे उतर गये. नीचे की मंजिल में पहुँच कर बल्कि कई कोठरियों में घूम-फिर कर वे उस तरफ से निश्चिन्त हुए, फिर भी उस कड़ुए धुएँ का जो कुछ अंश उनकी आँखों में लगा था या साँस की राह भीतर गया था उसने उन्हें चक्कर दिला दिया और कुछ देर के लिए उनकी यह हालत हो गई कि सिवाय सिर पकड़ कर बैठ जाने के और कुछ नहीं कर सकते थे. थोड़ी देर बाद

जब उनके होश-हवास कुछ ठिकाने हुए तो उन्होंने अपने जेब से निकालकर कोई चीज सूंघी जिसने धुएँ के जहरीले असर को एकदम दूर कर दिया और तब वे इस लायक हुए कि कुछ कर सकें.

सबसे पहिला तरद्दुद उन्हें मालती के विषय में हुआ जिसे उन्होंने अपने पास कहीं न पाया. जिस धुएँ ने उनके मजबूत दिल व दिमाग पर इतना असर किया उसने उस कमजोर औरत पर कहीं ज्यादा असर किया होगा बल्कि ताज्जुब नहीं कि उसे छत से उतरने का भी मौका न दिया हो. यह सोच इन्द्रदेव तुरन्त लौट पड़े और उन्हीं कोठरियों में घूमते-फिरते पुनः छत पर जाने वाली सीढ़ी के पास पहुँचे. वहाँ जमीन पर उन्हें बेहोश मालती दिखाई पड़ी और तब उनके जी में जी आया. उन्होंने उसे उठा लिया और बगल की एक कोठरी में ले जाकर उसे होश में लाने का उद्योग करने लगे. जिस चीज के सूंघने से उन्हें फायदा पहुँचा था उसी को कुछ देर तक मालती को सुँघाने तथा उसकी आँखों पर मलने के कुछ देर बाद मालती की हालत सुधरती नजर आई. उसके बदन में एक हलकी कंपकंपी आ गई और साँस कुछ जोर से आने-जाने लगी. उसकी आँखें भी एक बार खुल कर पुनः बन्द हो गईं मगर इससे इन्द्रदेव को विश्वास हो गया कि अब कोई खतरा नहीं है और यह शीघ्र ही होश में आ जायगी.

इसी समय सीढ़ी पर से धमधमाहट की आवाज आई जिससे मालूम हुआ कि कई आदमी छत से उतर रहे हैं. आहट मिलते ही इन्द्रदेव चौंके और उन्हें उन दुश्मनों का खयाल आ गया. फुर्ती से कुछ सोच और तब मालती को पुनः गोद में उठा कर वे एक दूसरे स्थान में जा पहुँचे. यह एक छोटी कोठरी थी जिसमें चारों तरफ की दीवारों में हर तरफ एक दरवाजा और उसके बगल में दोनों तरफ दो-दो अलमारियाँ बनी हुई थीं. इन्द्रदेव ने पूरब तरफ वाले दरवाजे के बाईं तरफ वाली अलमारी का पल्ला किसी ढब से खोला. अन्दर से यह अलमारी बहुत ही चौड़ी थी और इसमें दर या हिस्से बने हुए न थे जिससे यह इस लायक थी कि उसमें तीन-चार आदमी बखूबी खड़े हो सकते थे. इन्द्रदेव ने बेहोश मालती को इसी अलमारी में रखने के बाद अपने हाथ का सब सामान भी उसी जगह रख दिया और तब पल्ले बन्दकर देने के बाद कोई तर्कीब ऐसी कर दी जिससे सिवाय उनके और कोई उसे खोल ही न सके. यद्यपि यह सब काम उन्होंने बड़ी फुर्ती से किया फिर भी वे आने वाले वहाँ तक आ ही पहुँचे. बगल की कोठरी में उनके आने

की आहट मिल चुकी थी जब इन्द्रदेव मालती की तरफ से निश्चिन्त हुए और जैसे ही वे बगल के दरवाजे से दूसरी कोठरी में घुसे वैसे ही कई आदमियों ने इस कोठरी में पैर रक्खा.

ये आने वाले पाँच या छः आदमी थे और सभों ही के चेहरे नकाब से ढके हुए थे. आगे-आगे एक लम्बा आदमी था जो सभों का सरदार मालूम होता था. इसने आते ही कोठरी में चारों तरफ देखा और कहा, "यहाँ तो कोई नहीं है—मालूम होता है वे दोनों कहीं दूसरी तरफ निकल गए. तुममें से एक-एक आदमी इन चारों दरवाजों के अन्दर जाकर तलाश करो और जिन-जिन कोठरियों को देख चुको उनकी जंजीर बाहर से बन्द करते जाओ."

हुक्म के मुताबिक चार आदमी चारों तरफ के दरवाजों में चले गये, वह सरदार तथा केवल एक आदमी और उस कोठरी में रह गये जिनमें धीरे-धीरे बातें होने लगीं—

सरदार : न मालूम वे दोनों किधर निकल गये !

साथी : यह तिलिस्मी इमारत है, इसमें पचासों ही गुप्त रास्ते और स्थान हैं जिनसे किसी का निकल जाना या छिपा रहना कोई भी ताज्जुब नहीं.

सरदार : मगर मुझे ताज्जुब तो यह है कि उस गोले के तेज असर से वे दोनों बचे किस तरह ! उसके धुएँ का एक बार साँस के साथ जाना ही काफी था और मजबूत से मजबूत आदमी भी उसके असर से बच नहीं सकता था.

साथी : बेशक यह ताज्जुब तो मुझे भी है.

सरदार : अगर वे दोनों नहीं पकड़े गये तो उन चीजों का पता बिल्कुल लग न सकेगा जिनके पाने की आशा में हम लोग यहाँ आये और इतनी तकलीफें उठा...

इसी समय बगल की कोठरी से किसी आदमी के जोर से चिल्लाने की आवाज उनके कानों में पड़ी जिसे सुनते ही वे दोनों चौंके और यह कहते हुए कि 'महावीर की आवाज है, मालूम होता है उस पर कुछ आफत आई है' उसी तरफ लपके मगर जब वे उस कोठरी में पहुँचे तो किसी की सूरत दिखाई न पड़ी. ताज्जुब करते हुए वे अपने चारों तरफ देखने लगे क्योंकि उस कोठरी में सिवाय उस रास्ते के जिससे कि वे अभी-अभी यहाँ आये और कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता था और ऐसी अवस्था में उस आदमी का गायब हो जाना जो यहाँ आया था अथवा जिसके

चीखने की आवाज अभी-अभी उनके कानों में गई थी बड़े ताज्जुब की बात थी.

फिक्र और तरद्दुद के साथ वे दोनों अपने चारों तरफ देख ही रहे थे कि यकायक बड़े जोर से उस कोठरी का दरवाजा बन्द हो गया और वे दोनों घने अन्धकार में पड़ गए, क्योंकि सिवाय उस दरवाजे के उस कोठरी में कहीं से चाँदना या हवा आने का कोई भी रास्ता न था. अपने को यकायक इस मुसीबत में पाकर दोनों घबरा गये और दरवाजा खोलने का उद्योग करने लगे पर उन्हें शीघ्र ही पता लग गया कि वह मजबूत दरवाजा उनके किसी भी उद्योग से शीघ्र खुलने वाला नहीं.

पाठक तो समझ ही गये होंगे कि यह कार्रवाई इन्द्रदेव की थी जिनके लिए इस तिलिस्मी मकान में दस-पाँच आदमियों को पकड़ लेना या बन्द कर देना कोई भी मुश्किल बात न थी. जो हालत इन दोनों आदमियों की हुई थी वही बाकी के चारों आदमियों की भी हुई और कुछ ही देर घूमने-फिरने के बाद उन चारों ने अपने को एक ऐसी कोठरी में पाया जिसमें केवल एक ही दरवाजा था और जो उनके अन्दर पहुँचते ही इस तरह से बन्द हो गया कि उसका निशान तक बाकी न रह गया अर्थात यह भी मालूम न होता था कि वह दरवाजा कहाँ है जिसकी राह अभी-अभी उन्होंने इस कोठरी में पैर रक्खा है.

इन सब शैतानों को इस प्रकार बन्द करके भी इन्द्रदेव निश्चिन्त न हुए, क्योंकि उन्हें सन्देह था कि शायद अभी कुछ आदमी और बचे हों जो मौका पाकर उन्हें या मालती को तंग करें—अस्तु वे होशियारी के साथ चारों तरफ देखते हुए पुनः उस बंगले की छत पर चले गये और वहाँ पहुँचते ही एक अद्भुत और विचित्र तमाशा देखा.

छत पर चारों तरफ सन्नाटा था मगर पूरब तरफ से किसी तरह की आहट मिल रही थी. अस्तु इन्द्रदेव की निगाह उधर ही को घूम गई और उस बंगले पर जा पहुँची जिसे हम अब तक बन्दरों वाले बंगले के नाम से पुकारते चले आये हैं. पाठकों को मालूम होगा कि उसकी छत पर किसी धातु के बने हुए कई बन्दर थे जो कभी-कभी विचित्र प्रकार की हरकतें किया करते थे. इस समय इन्द्रदेव ने देखा कि वे बन्दर उस बंगले के बीचोबीच की एक ऊंची छत पर इकट्ठे हुए भए हैं और उस पर खड़ी एक औरत के चारों तरफ विचित्र प्रकार से उछल-कूद मचा रहे हैं. थोड़ा ही गौर करने से उन्हें मालूम हो गया कि वे बन्दर कवायद कर रहे हैं और उन्हीं में से एक सरदारी के तौर पर उस औरत

के सामने खड़ा होकर उन बाकी बन्दरों से कवायद करा रहा है. यद्यपि आज से पहिले भी सकड़ों बार इन्द्रदेव उन बन्दरों का विचित्र तमाशा देख चुके थे पर आज की इस कवायद में कुछ ऐसी विचित्रता थी और उन बन्दरों की उछल-कूद कुछ ऐसी हँसी पैदा करने वाली थी कि इन्द्रदेव अपने को रोक न सके और मजबूरन हँस पड़े.

परन्तु तुरन्त ही इन्द्रदेव ने अपने को सम्हाला और तब उन्हें यह जानने की फिक्र हुई कि वह औरत कौन है जो उन बन्दरों के बीच में बेखटके खड़ी हुई बल्कि ताली बजा-बजा कर हँसती हुई उनकी इस विचित्र उछल-कूद को देख रही है. वह बंगला यहाँ से बहुत ज्यादा दूर तो न था पर इतना नजदीक भी न था कि उसकी छत पर खड़े किसी नये आदमी की सूरत-शक्ल बखूबी देखी जा सके, अस्तु कुछ देर तक गौर के साथ देखने पर भी इन्द्रदेव यह न पहिचान सके कि वह कौन औरत है, अस्तु वे कुछ सोचते हुए छत के नीचे उतरे और किसी कोठरी में घुस गये. थोड़ी देर बाद जब वे लौटे तो उनके हाथ में एक मोटा शीशा था जिसे आँखों के सामने रखने से दूर तक की चीजें साफ दिखाई पड़ने लगती थीं. इस शीशे की मदद से उस औरत को बखूबी देख और पहिचान सकेंगे ऐसा इन्द्रदेव का विश्वास था पर अफसोस, जब उन्होंने उस बन्दरों वाले बंगले की तरफ निगाह की तो न उस औरत को वहाँ पाया और न उन बन्दरों ही की करामात देखी. सब-के-सब अपनी जगह पर पुनः पत्थर की मूरती की तरह बैठे हुए थे और उस औरत का कहीं पता न था. न जाने कुछ ही सायतों के बीच में वह कहाँ या किधर चली गई थी !

बड़ी देर तक इन्द्रदेव उस शीशे की मदद से दूर-दूर तक चारों तरफ उस घाटी और उसमें की इमारतों पर निगाह डालते रहे पर न तो वह औरत ही कहीं दिखाई दी और न किसी दूसरे आदमी पर ही निगाह पड़ी. लाचार वे वहाँ से हटे और बहुत-सी बातें सोचते हुए छत के नीचे उतर कर उस कमरे में पहुँचे जहाँ मालती को अलमारी के अन्दर बन्द कर गये थे. उस कमरे में घुसते ही यह देख कर उनका कलेजा धड़क उठा कि उस अलमारी के दोनों पल्ले खुले हुए हैं और मालती का कहीं पता नहीं है. वे झपट कर उस जगह पहुँचे. देखा कि अलमारी बिल्कुल खाली थी, हाँ, उसके नीचे जमीन पर एक कागज का टुकड़ा पड़ा हुआ अवश्य दिखाई दिया जिसे इन्द्रदेव ने उठा लिया और पढ़ा. मोटे-मोटे हरफों में

लाल स्याही से यह लिखा हुआ था :—

"आखिर कम्बख्त मालती मेरे हाथ लगी. मुझसे बच कर वह जा ही कहाँ सकती थी. इन्द्रदेव, तुम अपनी तिलिस्मी ताकत पर भूले हुए हो पर समझ रक्खो कि तुम्हारा 'गुरु-घन्टाल' आ पहुँचा! बस पहिचान जाओ और अपने को बचाओ. इस समय तो मैं केवल मालती और लोहगढ़ी की ताली लिए जाता हूँ पर मेरा दूसरा वार तुम्हीं पर होगा.

वही—तिलिस्मी शैतान."

यह विचित्र पत्र पा और खास कर यह देख कि वह गठरी जिसमें लोहगढ़ी की ताली तथा और सब सामान था इसमें नहीं है, इन्द्रदेव ताज्जुब में पड़ गये और बहुत देर के लिए न जाने किस गौर में डूब गए. न जाने यह तिलिस्मी शैतान क्या बला था जिसने इन्हें इतनी फिक्र में डाल दिया कि तनोबदन की सुध भुला दी. देर तक वे इसी तरह सोच में डूबे रहे मगर एक खटके की आवाज ने उन्हें चौंका दिया और घूम कर देखने से उन्हें मालूम हुआ कि उस कोठरी का दरवाजा जिसमें कुछ ही देर पहिले वे उन बदमाशों के सरदार और उसके साथी को बन्द कर चुके थे, आप से आप खुल गया. इन्द्रदेव को गुमान हुआ कि शायद उसमें से कोई दुश्मन आकर हमला करेगा और उन्हें नुकसान पहुँचावेगा पर ऐसा न हुआ. वह कोठरी बिल्कुल खाली थी, यहाँ तक कि उसमें वे दोनों आदमी भी नहीं दिखाई पड़ रहे थे जिन्हें कुछ ही देर पहिले उन्होंने बन्द किया था.

बहुत कोशिश करके इन्द्रदेव ने उन खयालों को अपने से दूर किया और यह कहते हुए वहाँ से हटे, "भला बे शैतान! चाहे तू कोई भी क्यों न हो पर मैं तुझसे टक्कर जरूर लूंगा!" दो-चार कोठरियों में घूमने के बाद उन्हें मालूम हो गया कि वह तिलिस्मी शैतान उन सब आदमियों को छुड़ा ले गया जिन्हें कुछ ही देर पहिले उन्होंने बन्द किया था अस्तु फिर विशेष जाँच करने की जरूरत न समझ इन्द्रदेव उस बंगले के बाहर निकल आये और चारों तरफ गौर से देखते हुए उसी बन्दरों वाले बंगले की तरफ बढ़े. रास्ते में कहीं किसी आदमी की सूरत उन्हें दिखाई न पड़ी और वे बेखटके उस जगह पहुँच गये. पतली खूबसूरत सीढ़ियों के जरिये चढ़ कर बंगले के सदर दरवाजे के पास पहुँचे और किसी तर्कीब से उसे खोल ऊपर चले गये. अन्दर जाकर वह दरवाजा उन्होंने पुनः बन्द कर लिया.

यह एक बड़ा कमरा था जिसमें बैठने के लिए बहुत से कौच और कुर्सियाँ

आदि रक्खी हुई थीं. किसी तरह की खास सजावट इसमें न थी और यह बिल्कुल सादे ढंग का था. इसमें तीनों तरफ कई दरवाजे थे जिनमें से बाईं तरफ का दरवाजा खुला था. इन्द्रदेव उसी दरवाजे से अन्दर घुस गये और तरह-तरह के विचित्र सामानों से सजे हुए दूसरे कमरे में पहुँचे.

पाठक, इस कमरे का हाल विशेष रूप से लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि आप एक बार पहिले भी भूतनाथ के साथ इसमें उस समय आ चुके हैं जब वह मेघराज का पीछा करता हुआ प्रभाकरसिंह की सूरत बना इस घाटी में घुसा था. इसी कमरे में नकली जमना से उसकी मुलाकात हुई थी और यहीं पहुँच कर बेतरह झमेले में वह पड़ गया था[1]. अस्तु इस जगह के सामानों का हाल आपको बखूबी मालूम है जिससे उसके दुहराने की कोई आवश्यकता नहीं है.

इन्द्रदेव के कमरे में घुसने के साथ ही सामने कोने में खड़ी एक शीशे की पुतली बड़ी तेजी के साथ चक्कर खाने लगी. इन्द्रदेव ने यह देख दरवाजे के बगल में बने एक आले में हाथ डाल कोई खटका दबा दिया जिससे उस पुतली का घूमना बन्द हो गया और साथ ही सामने की दीवार में एक रास्ता दिखाई पड़ने लगा. इन्द्रदेव उस दरवाजे की राह आगे आने वाली कोठरी में चले गये और अपने पीछे के दरवाजे को किसी तर्कीब से बन्द करते गये. इस कोठरी में इन्द्रदेव ठहरे नहीं बल्कि एक गुप्त दरवाजे की राह बगल की एक दूसरी कोठरी में होते हुए सीढ़ियाँ पार कर नीचे के एक ऐसे कमरे में पहुँचे जो बहुत बड़ा था और जिसके बीच का हिस्सा तरह-तरह के कल-पुरजों तथा विचित्र सामानों से भरा हुआ था. चारों तरफ बने कई रोशनदानों से काफी हवा और रोशनी आ रही थी जिससे वहाँ की हर चीज साफ दिखाई पड़ रही थी.

इन्द्रदेव ने कमरे में पहुंचते ही यहाँ के कल-पुर्जों में से एक को छेड़ दिया जिसके साथ ही कुछ पुरजे तथा पहिए तेजी के साथ घूमने लग गये और एक तरह की आवाज, जो वास्तव में पुरजों के घूमने ही से पैदा हुई थी, उस कमरे में गूंज उठी. इन्द्रदेव ने पुन: किसी दूसरे पुरजे को हिलाया, और भी कई कल-पुर्जे घूमने लगे और आवाज की तेजी बढ़ गई. इसी तरह धीरे-धीरे इन्द्रदेव की करतूत से उस बड़े कमरे में जितने कल-पुरजे थे सभी चलने लगे और आवाज इतनी जोर से होने लगी कि कान के परदे फटने लगे. इतना कर इन्द्रदेव अलग

1. देखिये भूतनाथ आठवां भाग, अन्तिम बयान.

हो गये और कुछ खुशी भरी आवाज के साथ बोले—"अब कोई माई का लाल ऐसा नहीं है जो घाटी के किसी भी दरवाजे को खोल सके. भीतर से बाहर जा सके या बाहर से भीतर हों आ सके. मगर इस काम का नतीजा तभी निकलेगा जब कि वह कम्बख्त शैतान और उसकी मण्डली अभी तक इस घाटी में हों, अगर वे सब निकल गये होंगे तो मेरी कोशिश बिल्कुल फजूल होगी. खैर अब यह जानना चाहिये कि इस घाटी में कहाँ पर कौन-कौन है और यह बात 'इन्द्र मण्डल' में गए बिना मालूम न होगी !"

इन्द्रदेव उस जगह से हटे और पूरब की तरफ की दीवार के पास पहुँचे जिसमें तीन बड़े दरवाजे बने हुए थे. इनमें से बीच वाले दरवाजे को उन्होंने किसी तर्कीब से खोलना चाहा पर कई बार कोशिश करने पर भी वह न खुला जिससे वे बड़े तरद्दुद में पड़ गए पर फिर तुरन्त ही इसका कारण उनकी समझ में आ गया और वे हँस कर बोले, "ओहो, मैंने स्वयं ही तो सब दरवाजों का खुलना रोक दिया है, वे खुल ही क्योंकर सकते हैं ! अत: इसे खोलने के लिए दूसरी ही तर्कीब करनी होगी."

इन्द्रदेव ने अपने गले के साथ तावीज की तरह लटकती हुई एक छोटी-सी ताली निकाल ली जो एक ही हीरे को काट कर बनाई गई थी. यह कीमती ताली खास जमानिया तिलिस्म के दारोगी के लिए ही बनाई गई थी और इसमें यह कुदरत थी कि तिलिस्म के किसी भाग के किसी भी ताले को जब चाहे खोल सकती थी. इन्द्रदेव को दारोगा होने के कारण बतौर धरोहर के यह ताली मिली थी, इसे उन्हें हमेशा अपने गले में पहिने रहना पड़ता था. मगर साथ ही यह बात भी थी कि इसका इस्तेमाल केवल बहुत ही खास मौकों को छोड़ कर हर समय करने की सख्त मुमानियत थी और इसकी मदद से किसी कैदी को निकाल देने की बिल्कुल इजाजत न थी. इस समय इन्द्रदेव ने इसी ताली से काम लिया और इसकी मदद से दरवाजा खोल डाला. पर कमरे के अन्दर घुसते ही उनको एक ऐसी भयानक चीज दिखाई पड़ी कि उन्हें रोमांच हो गया और आप से आप उनके मुँह से एक चीख निकल गई.

वह भयानक चीज क्या थी ? वह एक कटा हुआ सिर था जो इस कमरे के बीचोबीच में एक संगमरमर की चौकी पर रखा हुआ था. लहू से तमाम चौकी और उसके नीचे की जमीन तर हो रही थी और सिर के लम्बे तथा लहू से सने हुए बालों ने चेहरे पर पड़ कर उसे और भी भयानक बना रक्खा था.

10

आज शुक्ल पक्ष की एकादशी है. रात आधी के करीब बीत चुकी है और चन्द्रदेव ने अपनी शीतल किरणों से जंगल, मैदान और पहाड़ों में एक अजीब सुहावना दृश्य पैदा कर रक्खा है जिसे घण्टों तक देखने पर भी मन नहीं भर सकता.

अजायबघर के पास वाले जंगल के उस विचित्र कुएँ पर जिसमें पिछली एकादशी को भूतनाथ ने श्यामा के पीछे कूदकर एक विचित्र तमाशा देखा था[1] आज एक पेड़ की आड़ में कई आदमी खड़े हैं जो बार-बार उस कुएँ की तरफ देखते और कुछ बातें करते जाते हैं. रंग-ढंग और आकृति से उनका लक्ष्य वह औरत मालूम होती है जो अभी उस कुएँ के बाहर आई और जगत पर पैर लटका कर उदास भाव से बैठी गाल पर हाथ रक्खे कुछ सोच रही है.

पाठक इस औरत को पहिचानते हैं क्योंकि यह वही श्यामा है जिससे उस दिन भूतनाथ से भेंट हुई थी और जिसके पीछे-पीछे भूतनाथ ने अपने को कुएँ में डाल दिया था.

यह तो हम नहीं कह सकते कि वह औरत क्या सोच रही है पर यकायक एक घोड़े के टापों की आवाज ने उसे चैतन्य जरूर कर दिया और उसने गर्दन उठाकर सामने की तरफ देखा जिधर से किसी सवार के आने की आहट मिल रही थी. थोड़ी देर में वह सवार भी उसी जगह आ पहुँचा और घोड़े से कूद लगाम एक डाल से अटकाने के बाद कुएँ के ऊपर पहुँचा.

श्यामा उस समय न जाने किस तकलीफ के कारण आँखें बन्द किए हुए धीरे-धीरे उसांसें और आहें ले रही थी. किसी के कूएँ पर आने की आहट पाकर उसने आँखें खोलीं और भूतनाथ को अपने सामने खड़ा देख एक हलकी चीख मार कर उसकी तरफ हाथ बढ़ाया. भूतनाथ भी उसे देख उसकी तरफ झपटा और दोनों एक-दूसरे के हाथों में गुथ गये. श्यामा ने भूतनाथ से बहुत ही प्रेम दिखाया और भूतनाथ ने भी कोई कसर बाकी न रक्खी.

थोड़ी देर बाद दोनों प्रेमी अलग हुए और तब श्यामा ने भूतनाथ के हाथ को प्रेम के साथ दबाते हुए पूछा, "तुमने आने में कुछ देर कर दी."

---

1. देखिए भूतनाथ बारहवाँ भाग, अन्तिम बयान.

भूत० : हाँ, मैं बहुत दूर से आ रहा हूँ, देखो मेरे घोड़े की हालत क्या हो रही है, और अभी मुझे बहुत लम्बा सफर करना बाकी है.

श्यामा : (गौर से देख कर) ओह ! तुम तो एकदम पसीने से लथपथ हो रहे हो ! जरूर बहुत दूर से आ रहे हो. ठहरो मैं कपड़े उतार कर हवा कर देती हूँ. पहिले ठंडे होओ और सुस्ताओ, तब कहीं जाने का नाम लेना.

इतना कह उस औरत ने कूएँ की तरफ मुँह करके कहा, "कूपदेव, एक पंखा तो देना !" आवाज के साथ ही कूएं के अन्दर से एक हाथ निकला जिसकी उँगलियों में एक नाजुक सुनहरी डण्डी की पंखी थी. श्यामा ने पंखी उस हाथ से ले ली और तब कहा, "ठंडा पानी भी लाना." हाथ नीचे चला गया और थोड़ी ही देर बाद जब पुन: ऊपर आया तो उस पर चाँदी का कटोरा साफ ठण्डे पानी से भरा रक्खा हुआ नजर आया.

भूतनाथ ताज्जुब के साथ यह विचित्र हाल देख रहा था. जिस समय श्यामा ने उस हाथ से कटोरा लेकर भूतनाथ की तरफ बढ़ाया तो उसने कटोरा ले लिया और ताज्जुब के साथ कहा, "बड़ा विचित्र कूआँ है."

भूतनाथ की बात सुन श्यामा ने अफसोस के साथ एक लम्बी साँस खींची और कहा, "हाँ, दूसरों की निगाह में यह विचित्र, अद्भुत, मनोरंजक सभी कुछ है, मगर मेरे लिए तो सिर्फ एक खौफनाक कैदखाना है. महीने भर में केवल एक आज की रात को कुछ देर के लिए यह मेरे हुक्म में है, नहीं तो बराबर मैं ही इसके पंजे में रहती हूँ. खैर मेरे दोस्त, तुम मेरी फिक्र छोड़ो, कपड़े उतारो और ठण्डे होओ."

भूतनाथ के इनकार करने पर भी श्यामा ने उसके कपड़े उतार कर अलग कर दिये, ठण्डा पानी पीने को दिया और पंखा झलने लगी. दोनों में बातचीत भी होने लगी.

भूत० : क्या आज भी तुम हर रोज की तरह कैदी ही हो ?

श्यामा : (अफसोस के साथ) क्या इसमें भी कोई सन्देह है ?

भूत० : मगर मेरी समझ में नहीं आता कि कूआँ क्योंकर तुम पर कब्जा रख सकता है जबकि मैं तुम्हें हर तरह से स्वतन्त्र देख रहा हूँ ?

श्यामा : मालूम होता है कि आप उस दिन की वात भूल गये जब उस

बेरहम पंजे ने जबर्दस्ती मुझे खींचा था और आपका खंजर उस पर लग कर टूट गया था !

भूत० : हाँ ठीक है, बेशक यह एक विचित्र कूआँ है, मगर तुम इसके फंदे में पड़ क्योंकर गईं ?

श्यामा : जाने दो मेरे दोस्त ! एक औरत का हाल जानने के लिए इतनी उत्कंठा तुम्हें क्यों है ? जब तुम उसे मुसीबत बल्कि मौत के पंजे से छुड़ाने के लिए अपनी उँगली भी हिलाना पसन्द नहीं करते तब बेकार इस तरह के सवाल करने से सिवाय तकलीफ बढ़ने के और क्या हो सकता है ?

भूत० : नहीं नहीं श्यामा, यह तुम्हारा बहुत गलत ख्याल है. मैं तुम्हारे लिए सब कुछ करने को तैयार हूँ, यहाँ तक कि तुम्हारे ही छुड़ाने का प्रबन्ध करने के लिए मैं अपने सबसे बड़े दुश्मन दारोगा के पास जाने को तैयार···

श्यामा : (खुश होकर) हाँ, तुम दारोगा साहब के पास जाने को तैयार हो ? वे अगर चाहें तो मुझे सहज ही में इस मुसीबत से छुड़ा सकते हैं और अगर वे तुम्हारी मदद करें तो तुम बहुत ही सहज में यहाँ का तिलिस्म तोड़कर मुझे रिहाई दे सकते हो.

भूत० : यह तो उन्होंने नहीं कहा पर यह जरूर कहा कि मेरे पास एक छोटी किताब है जिसमें इस जगह का कुछ हाल लिखा हुआ है. यह किताब पढ़कर अगर कुछ काम चल जाय तो ठीक ही है नहीं तो बिना राजा गोपालसिंह की मदद के कुछ नहीं हो सकता.

श्यामा : (काँप कर) गोपालसिंह ! अरे वह तो बड़ा ही दुष्ट है, उसी ने तो···खैर वह किताब तुम्हें देने का वादा दारोगा साहब ने किया है ?

भूत० : केवल वादा ही नहीं किया बल्कि किताब मुझे दे भी दी है.

इतना कह भूतनाथ ने अपना बटुआ उठा लिया जो सामने रक्खा हुआ था और उसमें से रेशमी कपड़े में लपेटी हुई एक छोटी किताब निकाल कर श्यामा के हाथ पर रख दी. उस किताब को देखते ही श्यामा ने खुश होकर भूतनाथ के गले में हाथ डाल दिया और कहा, "बस मेरे दोस्त ! इसी किताब की मुझे जरूरत थी. इसकी मदद से तुम अगर चाहो तो बहुत जल्द मुझे छुड़ा सकोगे. (कूएँ की तरफ देख कर) यह जालिम कैदखाना अब मुझे ज्यादा दिनों तक तकलीफ न दे सकेगा."

मानों इस बात के जवाब ही में कूएँ के अन्दर से शंख बजने की आवाज आई जिसे सुनते ही श्यामा काँप उठी. उसने फुरती से वह किताब भूतनाथ के हवाले कर दी और कहा, "मुझे अपने कैदखाने में जाने का हुक्म हो गया—अब मैं बाहर नहीं रह सकती. तुम यह किताब लो, इसमें इस जगह का सब हाल लिखा है. जब तुम्हें फुरसत हो या जब तुम्हें इस बेकस की याद आवे तो इसी जगह आना, यह किताब तुम्हें सब रास्ता बतायेगी."

इतना कह श्यामा उठने लगी मगर भूतनाथ ने हाथ पकड़ कर उसे रोका और कहा, "ठहरो और मेरी दो बातें सुनकर तब जाओ."

श्यामा : (बैठ कर) कहो मगर जल्दी कहो.

भूत० : अगर मैं तुम्हें छुड़ाना चाहूँ तो मुझे क्या करना होगा ?

श्यामा : इस किताब को दो-तीन बार पढ़ जाने से तुम्हें स्वयं सब हाल मालूम हो जाएगा.

भूत० : खैर, मगर मैं चाहता हूँ कि पहिले तुम्हारा हाल सुन लूँ.

श्यामा : क्यों ? (कुछ चुप रह कर) अच्छा ठीक है, मैं समझ गई ! तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं, तुम शायद समझ रहे हो कि मैं कोई चालाक औरत या ऐयार हूँ और तुम्हें धोखे में डाल कर अपना कोई काम निकालना चाहती हूँ ! अच्छी बात है मेरे दोस्त, तुम चाहे मुझे जो कुछ भी समझो पर सिर्फ कभी-कभी याद करते रहो यही मेरी प्रार्थना है, बस और मैं कुछ भी नहीं चाहती.

भूत० : नहीं, मेरा मतलब यह नहीं है, मैं तो···

श्यामा : बस-बस अब झूठी बातें न करो ! जो तुम्हारे दिल में था सो मैं समझ गई. अब तुम्हें कुछ भी तकलीफ करने की जरूरत नहीं—तुम्हें मुनासिब है कि यह किताब जिससे लाए हो उसी को वापस कर दो और बेफिक्री के साथ नागर और मनोरमा की सोहबत का मजा उठाते हुए आराम की जिन्दगी बसर करो. फजूल एक बे-जान-पहिचान की अजनबी औरत के लिए क्यों कष्ट उठाओगे! मैं जाती हूँ मगर तुम्हारी बेवफाई की याद अपने दिल में लिए जाती हूँ.

इतना कह श्यामा उठ खड़ी हुई और कूएँ की तरफ लपकी पर भूतनाथ ने पुनः उसे रोका और कहा, "तुम फजूल मुझे ऐब लगा रही हो. मैं जरूर तुम्हारी मदद करूँगा और तुम्हें इस तिलिस्म से छुड़ाऊँगा ! तुम ही जरा सोचो कि अगर मुझे तुम्हें छुड़ाना मंजूर न होता तो क्यों तुम्हारे लिए ऐसे आदमी की मदद

चाहता जिसका मुँह देखना भी मंजूर न था ! अफसोस की बात है कि तुम बिना मेरा मतलब समझे ही गुस्से में आ रही हो और मुझ पर झूठा इलजाम लगा रही हो !"

श्यामा : (ठंडी होकर) माफ करो, मुझसे भूल हुई, तुम बेशक मेरे खैर-खाह हो इसमें शक नहीं है. मैं अपना सब हाल तुम्हें सुनाऊँगी मगर इस वक्त नहीं—जब तुम मुझे स्वतन्त्र कर दोगे तब, इस समय मौका नहीं है.

भूत० : तो मैं किस दिन आऊँ ?

श्यामा : जब तुम्हारी इच्छा हो आ सकते हो, पर जब आना अकेले आना और अपने साथ कोई हर्बा जरूर लाना.

भूत० : मैं तो आज ही चलता पर इस समय बहुत ही जरूरी काम से कहीं जा रहा हूँ. रुकने से बहुत हर्ज होगा, इसलिए आज से एक सप्ताह के···

इसी समय कूएँ के अन्दर से पुन: शंख बजने की आवाज आई जिसे सुनते ही श्यामा उठ खड़ी हुई और यह कहती हुई कि 'मैं जाती हूँ' कूएं के पास जाकर उसमें कूद पड़ी.

भूतनाथ कुछ देर तक वहाँ बैठा न जाने क्या-क्या सोचता रहा. इसके बाद वह उठा और कूएँ के पास जाकर अन्दर की तरफ झाँकने लगा परन्तु उसी समय उसे अपने पीछे कुछ आहट मालूम पड़ी और जब उसने घूम कर देखा तो पाँच आदमियों को एक-एक करके सीढ़ी की राह उस कूएँ की जगत पर चढ़ते हुए पाया. ये पाँचों ही हाथ-पाँव से बहुत मजबूत कद्दावर और हर्बों से अच्छी तरह लैस थे. भूतनाथ उन्हें देख कर यद्यपि डरा तो नहीं पर कुछ चौकन्ना अवश्य हुआ और कूएँ के पास से एक ओर हट कर बड़े गौर से उन आदमियों की तरफ देखने लगा.

हम नहीं कह सकते कि ये नये आने वाले पाँचों आदमी वे ही थे या कोई दूसरे जो पहिले जंगल में दिखाई पड़े थे और न यही कह सकते हैं कि इनकी सूरत-शक्ल कैसी थी क्योंकि इन सभों ही ने अपनी-अपनी सूरत को नकाब के अन्दर ढाँक रखा था. भूतनाथ को सन्देह था कि ये लोग उसे छेड़ेंगे या उससे कुछ बातचीत करेंगे पर उन्होंने भूतनाथ की तरफ निगाह उठाकर भी न देखा और सब के सब उसी कूएं के पास हो कर नीचे की तरफ झाँकने और आपस में कुछ बातें करने लगे. इस नीयत से कि शायद बातचीत से वह उन्हें पहिचान सके या इन लोगों के यहाँ आने का कारण जान सके, भूतनाथ बड़े गौर से इन सभों की बातें सुनने लगा, पर उसकी समझ में कुछ भी न आया क्योंकि वे लोग जिस विचित्र भाषा में बोल रहे

थे उसका एक शब्द भी भूतनाथ समझ न सकता था.

थोड़ी देर बाद यकायक कूएँ के अन्दर से शंख की आवाज आई जिसे सुनते ही वे सब चौकन्ने हो गये. उनमें से एक ने जो सरदार मालूम होता था अपने एक साथी की तरफ इशारा करके कुछ कहा जिसे सुनते ही उसने सलाम किया और कूएँ से नीचे उतर किसी तरफ को रवाना हो गया. थोड़ी ही देर बाद भूतनाथ ने उसे एक बड़ी गठरी पीठ पर लादे वापस आते देखा जिसके विषय में उसकी चालाक निगाहों ने तुरन्त बता दिया कि इसमें कोई आदमी या औरत बँधी है.

दो आदमियों ने वह गठरी उसकी पीठ पर से उतारी और कूएँ के पास ले आये. सरदार ने कूएँ में झाँका और अपनी विचित्र भाषा में कुछ कहा जिसके जवाब में भीतर से पुनः शंख की आवाज आई, आवाज सुनते ही उन दोनों ने वह गठरी उसी तरह बँधी-बँधाई कूएँ में फेंक दी और उसके बाद सबके सब कूएं से उतर कर जिधर से आये थे उधर ही को चल पड़े. जाती समय भी भूतनाथ की तरफ किसी ने आँख उठा कर न देखा.

ताज्जुब के साथ भूतनाथ यह सब हाल देख रहा था. वे आदमी कौन थे, गठरी में कौन बंधा था, यह कूआँ कैसा है ? आदि बातें वह बहुत देर तक सोचता रहा. अन्त को उसका मन न माना, उसने अपने बटुए में से सामान निकाल कर रोशनी की और उसकी मदद से वह किताब जिसे दारोगा से पाया था खोल कर पढ़ने लगा. उलट-पुलट कर जल्दी-जल्दी कई जगह से पढ़ा और तब रोशनी बुझा बटुए में रख तथा उस किताब को कमर में खोंस अपने कपड़े पहिने और हरबे लगाये, बटुआ कमर में बांध कमन्द हाथ में ली तब एक निगाह चारों तरफ देख और सन्नाटा पा कूएँ के पास पहुँचा. कमन्द का एक सिरा पत्थर के खम्भे के साथ बाँध दिया और दूसरा कूएँ में लटका दिया, कुछ देर तक खड़ा कुछ सोचता रहा और तब कमन्द के सहारे कूएँ में उतर गया.

भूतनाथ के जाने के कुछ ही देर बाद न जाने कहाँ से वे पाँचों आदमी पुनः उसी जगह आ मौजूद हुए. सरदार ने झाँक कर कूएँ के अन्दर देखा, कुछ हलकी-हलकी आवाज आ रही थी जिस पर गौर किया और तब अपने आदमियों से कुछ बातें कीं. इसके बाद एक-एक करके वे चारों उसी कमन्द के सहारे कूएँ के अन्दर उतर गये, केवल वह सरदार बाहर रह गया जिसने कमन्द को खम्भे से खोल लिया और कमर में लपेट लेने के बाद हँस कर कहा, "वह मारा ! अब ये बचाजे कहाँ जा सकते हैं. इनकी सब ऐयारी ताक पर रह जायगी और हम लोग अपना काम कर गुजरेंगे." इतना कह कर वह फिर जोर से हँसा और तब स्वयं भी उस कूएँ में कूद पड़ा.

।। तेरहवाँ भाग समाप्त ।।

चौदहवाँ भाग

1

भूतनाथ ने सोचा था कि पहिले की तरह इस बार भी वह कूएं में बहुत थोड़ा ही पानी पायेगा मगर उसका यह खयाल गलत निकला. कूएँ के अन्दर उतरते ही उसे मालूम हो गया कि इस समय इसमें अथाह पानी है. यह जान वह एक बार तो घबड़ा गया मगर तुरन्त ही उसने होश-हवास दुरुस्त किए और पानी की हालत पर गौर कर सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये.

चन्द्रमा की किरणें आड़ी होकर जल के पास तक पहुँच रही थीं जिससे वहाँ का अंधकार कुछ कम हो रहा था. इसी मद्धिम रोशनी में भूतनाथ चारों तरफ निगाह दौड़ा कर देखने लगा कि किसी जगह कोई कड़ा कुण्डा या आला दिखाई पड़ जाय तो वह उसके सहारे रुके और तब सोचे कि क्या करना उचित होगा. सब तरफ घूमती हुई उसकी निगाह लोहे के एक मोटे कुण्डे की तरफ गई जो जल से लगभग हाथ भर की ऊँचाई पर दीवार में गड़ा हुआ था. भूतनाथ इसके पास पहुँचा और कुण्डा पकड़ कर सुस्ताने लगा. उसी समय ऊपर की तरफ देखने से उसे यह भी मालूम हुआ कि हाथ-हाथ डेढ़-डेढ़ हाथ के फासले पर ऐसे ही कुण्डे बराबर लगे हुए हैं और अगर वह चाहे तो उनकी मदद से कूएँ के बाहर निकल जा सकता है. यह जान उसे कुछ धीरज हुआ और वह इस लायक हुआ कि अब क्या करना चाहिए, इसे सोच सके.

भूतनाथ का खयाल था कि वह इस जगह या तो कैदी श्यामा को देखेगा अथवा उस गठरी को पावेगा जो उन आदमियों ने कुछ देर पहिले इस कूएँ में फेंकी थी पर वह सब कुछ भी न देख बल्कि कूएँ की हालत को बिल्कुल ही बदली हुई पा उसे ताज्जुब हुआ. उसे विश्वास हो गया कि जरूर यह कूआँ तिलिस्मी है और इसकी यह हालत किसी भेद से सम्बन्ध रखती है. वह सोचने लगा कि यह भेद क्या हो सकता है ? कूएँ में कूदने के पहिले फुर्ती-फुर्ती उसने उस तिलिस्मी किताब के दो चार पृष्ठ पढ़े थे जो वह दारोगा से मांग लाया था और जो

कुछ पढ़ा था वह उसे याद भी था. अस्तु वह उसी के मुताबिक कार्रवाई करने लगा.

चन्द्रमा तेजी के साथ हट रहे थे और कूएँ में पड़ती हुई उसकी रोशनी कुछ ही पलों की मेहमान थी अस्तु भूतनाथ ने सोच-विचार में समय नष्ट करना मुनासिब न समझा. जिस कुंडे को वह थामे हुए था उसके ठीक सामने उसने निगाह की और गौर करने से जल से कोई दो हाथ की उंचाई पर दीवार में बनी हुई एक मूरत देखी. कुंडा छोड़ भूतनाथ तैरता हुआ उस मूरत के नीचे पहुँचा और यह कोशिश करने लगा कि उछल कर उस मूरत को छूए, पर यह कुछ आसान बात न थी. चारों तरफ की दीवारें एकदम चिकनी थीं जिनसे किसी तरह का सहारा मिलना असम्भव था और मूरत की ऊंचाई इतनी कम न थी कि जल में तैरता हुआ कोई आदमी साधारण रीति से छू सके. भूतनाथ पुनः उछल-उछल कर उसे पकड़ने की चेष्टा करने लगा.

यकायक पास ही कहीं शंख के बजने की आवाज ने भूतनाथ का ध्यान बंटा दिया और वह रुक कर गौर करने लगा कि यह आवाज कहाँ से आई परन्तु कुछ समझ में न आया. मगर इसके साथ ही यह देख भूतनाथ को ताज्जुब और घबराहट हुई कि कूएँ का जल तेजी के साथ घट रहा है. उसने मूरत को पकड़ने का ख्याल छोड़ दिया और पुनः तैर कर उस कुंडे के पास आया जिसे पहिले पकड़े हुए था पर अफसोस वह उस कुंडे को भी छू न सका क्योंकि इसी बीच में जल हाथ-डेढ़ हाथ के करीब कम हो गया था और वह कुंडा भी अब भूतनाथ की पहुँच के बाहर हो रहा था. अब भूतनाथ की घबड़ाहट बढ़ गई और उसके मुँह से निकला—"व्यर्थ इस जंजाल में आ फंसे !" उसी समय मानों भूतनाथ की बची-खुची आशा को भी भंग करने की नीयत से चन्द्रमा एक काले बादल के टुकड़े के पीछे हो गया और कूएँ में घोर अंधकार छा गया.

यकायक जल में खलबलाहट होने लगी और ऐसा जान पड़ा मानों उसका पानी किसी तरफ को निकला जा रहा हो क्योंकि जल में एक तरह का खिचाव-सा पैदा हो गया था. भूतनाथ ने बहुत कुछ जोर मारा मगर वह बच न सका और अन्त में खुद भी खिचाव में पड़ कर एक तरफ को बह चला. अंधेरे में अंदाज ही से मालूम हुआ कि वह किसी सुरंग के अन्दर घुस रहा है जो कूएँ के बगली दीवार में यकायक खुल गई है और यह जान उसकी बेचैनी और घबराहट इस कदर बढ़ी

कि वह एक तरह पर बदहवास-सा हो गया.

जब भूतनाथ के होश दुरुस्त हुए उसने अपने को कुछ-कुछ कूएँ जैसे एक ऐसे स्थान में पाया जिसके चारों तरफ ऊँची दीवारें और बीच में आसमान नजर आ रहा था. बगल में छोटे नाले के रूप की पक्की और बड़ी नालो दिखाई पड़ रही थी और सामने की तरफ दीवार में शायद पानी के निकल जाने के ही लिए रास्ता बना हुआ था मगर लोहे के मोटे छड़ों की जाली लगी रहने के कारण इस रास्ते से किसी आदमी का आना या निकल जाना असम्भव था. चारों तरफ की दीवारें भी इतनी ऊँची थीं कि उनको लांघ कर पार हो जाना भी कठिन था. भूतनाथ को गुमान हुआ कि अगर उसके पास कमन्द होता तो उसके जरिये वह उन दीवारों को लांघ सकता था मगर अफसोस अपनी कमन्द तो वह कूएँ के खंभे से ही बँधी छोड़ आया था.

होश में आते ही पहिले तो भूतनाथ ने अपने बटुए और हथियारों को टटोला और सब कुछ दुरुस्त पाकर अपने गीले कपड़े उतार दिये. उसके बटुए में एक रोगनी कपड़े का टुकड़ा मौजूद था जिस पर पानी का असर नहीं होता था, उसे निकाल कर पहिन लिया और कपड़ा निचोड़ कर सूखने को फैला देने के बाद वह इस फिक्र में पड़ा कि देखें इस विचित्र स्थान के बाहर जाने की क्या तरकीब निकल सकती है. आसमान की तरफ निगाह करने से उसे मालूम हो गया कि कूएं में कूदने और बेहोश होकर इस जगह तक आने के बीच में ज्यादे देर नहीं हुई है क्योंकि चन्द्रदेव अभी तक आकाश में विराजते हुए उस स्थान को उजाला किये हुए थे.

भूतनाथ उठ खड़ा हुआ और चारों तरफ घूम-घूम कर देखने लगा. सब तरफ ऊंची संगीन दीवारें थीं जिनके बीचोबीच वह पत्थर का फर्श था जिस पर उसने अपने को पाया था. बस सिवाय इसके और उन नालियों को छोड़ के जिनका हाल हम ऊपर लिख आये हैं, उस स्थान में और कुछ भी न था, न तो कहीं कोई दरवाजा था, न खिड़की, न आला, न मोखा.

अच्छी तरह गौर से सब तरफ देखने बल्कि दीवारों को भी खंजर के कब्जे से ठोंक कर जाँच लेने के बाद भूतनाथ को निश्चय हो गया कि इस जगह से निकल जाने के लिए सिवाय कमन्द के और कोई रास्ता नहीं हो सकता. वह अपने छूटने से निराश हो गया और एक जगह बैठ गया.

परन्तु इस तरह बेकार बैठना भी उसे भला न मालूम हुआ. थोड़ी देर बाद उठा और बटुए में से सामान निकाल उसने रोशनी की, इसके बाद वह किताब निकाली जो श्यामा को छुड़ाने की नीयत से वह दारोगा से मांग लाया था और उसे पढ़ कर देखने लगा कि उसमें इस स्थान का कोई जिक्र या इसके बाहर होने की कोई तरकीब लिखी है या नहीं. मगर समूची पुस्तक पढ़ जाने पर भी उसे इस बात का कोई पता न लगा कि यह कौन-सी जगह है और यहाँ से बाहर निकलने का रास्ता कहाँ है. आखिर उसने किताब बन्द कर दी और रोशनी बुझा सिर पर हाथ रख बैठ गया.

धीरे-धीरे रात बीत गई और सुबह की सुफेदी चारों तरफ फैलने लगी. पल पल पर भूतनाथ की घबराहट बढ़ती जाती थी. बार-बार वह उठ कर चारों तरफ घूमता था. कभी दीवारों को ठोंकता, कभी जमीन पर पैर पटकता, कभी उस जंगले को देखता जिसकी राह नाली का पानी आता था और कभी ऊपर की ओर निगाह फेरता, मगर किसी से कुछ फायदा न होता था. आखिर थक कर और बिल्कुल ही लाचार होकर वह एक जगह बैठ गया और उसके मुँह से निकला, "बस हुआ, अब मेरी जिन्दगी इसी तरह बीतेगी. मालूम नहीं कुछ दाना-पानी भी मुझे मिलेगा या भूखे-प्यासे ही जान देना पड़ेगा."

यकायक भूतनाथ के कानों में किसी तरह की आवाज आई. वह चैतन्य हो गया और साथ ही उसके मन में कुछ आशा का संचार हुआ. वह उठ कर चारों तरफ देखने लगा और ऊपर की तरफ नजर घुमाते ही उसकी निगाह एक वृद्ध साधू पर पड़ी जो दीवार के बाहर सर निकाले नीचे की तरफ देख रहा था.

हम नहीं कह सकते कि भूतनाथ उस साधू को पहिचानता था या क्या बात थी पर उसे देखते ही उसने हाथ जोड़े और बड़ी नम्रता से बोला, "मुझसे क्या अपराध हुआ जो इस जगह कैद किया गया हूँ ?"

साधू ने जवाब दिया, "तुम्हें कैद करने वाला मैं नहीं हूँ बल्कि कोई और ही है."

भूत० : यदि ऐसी बात है तो कृपा कर मुझे यहाँ से छुटकारा दिलाइये.

साधू : सो भी मैं नहीं कर सकता. जिस जगह तुम हो वह एक तिलिस्मी कैदखाना है और वहाँ से निकलना सहज नहीं है.

भूत० : मेरी कमन्द ऊपर ही छूट गई है नहीं तो मैं सहज ही में इस जगह से

निकल जाता. अगर आप कृपा कर एक कमन्द मुझे दे सकें तो मैं अभी बाहर निकल जा सकता हूँ.

साधू : (हँस कर) नहीं, तुम्हारा खयाल गलत है. कमन्द तुम्हें इस जगह के बाहर नहीं कर सकती और न मेरे पास मौजूद ही है जो मैं तुम्हें दूं.

भूत० : तब क्या मैं किसी तरह कैद से छुटकारा नहीं पा सकता ?

साधू : सिर्फ एक तर्कीब हो सकती है, अगर···

बात करते समय साधू महाराज इस तरह पर रुक गए मानो उन्हें अपने पीछे कोई आहट लगी हो. उन्होंने सिर घुमा कर देखा और तुरत ही उनके चेहरे पर घबराहट के चिह्न दिखाई देने लगे. उन्होंने हाथ के इशारे से भूतनाथ को ठहरने और चुप रहने को कहा और तुरत ही वहाँ से हट कर कहीं चले गए. भूतनाथ उनके लौट आने की राह देखता चुप हो रहा.

यकायक पुन: शंख बजने की आवाज हुई, वह चौकन्ना हो गया और इसके साथ ही उसने पूरब तरफ की दीवार पर जमीन से पाँच-छ: हाथ की ऊँचाई पर एक पत्थर की पटिया को पीछे हटते और उस जगह एक दरवाजा पैदा होते देखा. वह ताज्जुब के साथ उधर देखने और साथ ही यह भी सोचने लगा कि इस खिड़की तक पहुँचने की अगर कोई सूरत निकल आवे तो शायद इस जगह से बाहर निकल जा सके.

यकायक उस खिड़की या दरवाजे के अन्दर से किसी औरत के चीखने की आवाज आई जिसने भूतनाथ को बेचैन कर दिया क्योंकि उसे सन्देह हुआ कि यह आवाज श्यामा की है. वह घबरा कर उधर देख रहा था कि उसने किसी औरत को भाग कर एक तरफ से दूसरी तरफ जाते और तब उसके पीछे कई आदमियों को दौड़ते देखा. साथ ही उस खिड़की के अन्दर से तरह-तरह की आवाजें भी आने लगीं जिन्होंने भूतनाथ को बेचैन कर दिया और वह समझ गया कि कई शैतान किसी बेचारी औरत पर जुल्म कर रहे हैं.

भूतनाथ बेचैनी के साथ उस दरवाजे की तरफ देख ही रहा था कि ऊपर से पुन: कुछ आहट आई और उसने फिर साधू महाशय को झांकते हुए पाया. साधू ने उस दरवाजे की तरफ ऊँगली से दिखाया और भूतनाथ को उसके अन्दर जाने और उस औरत की मदद करने का इशारा किया. साधू के हाथ में कोई चीज थी जो उन्होंने नीचे फेंक दी और तब तुरत वहाँ से हट गये. भूतनाथ ने देखा कि वह एक

मजबूत कमन्द है.

खुशी-खुशी भूतनाथ ने अपना सामान उठाया और अपने कपड़े (जो अब सूख गये थे) पहनने तथा बटुआ और हथियार इत्यादि बांधने के बाद हर तरह से लैस हो वह कमन्द उस खिड़की में लगाई. उसे गुमान था कि शायद कोई उसे ऐसा करने से रोके मगर किसी ने भी उसके काम में बाधा न डाली और बात की बात में वह उस खिड़की तक पहुँच गया.

अब जिस जगह भूतनाथ ने अपने को पाया वह एक बड़ा कमरा था जिसमें चारों तरफ कई दरवाजे दिखाई पड़ रहे थे. भूतनाथ को आशा थी कि वह औरत तथा वे आदमी वहीं होंगे पर ऐसा न था और यह स्थान एकदम खाली था. वह खड़ा होकर ताज्जुब के साथ सोचने लगा कि वे लोग किधर गये.

उसे ज्यादा समय नष्ट करना न पड़ा और बगल के किसी स्थान से आती हुई कई आदमियों के बातचीत की आवाज उसके कान में पड़ी. सुनते ही उसने खंजर हाथ में ले लिया और बेधड़क उस दरवाजे के अन्दर घुस गया जिसमें से आवाज आ रही थी. यहाँ पहुँचते ही उसे मालूम हो गया कि यह वही जगह है जहाँ पहिली बार आने पर उसने श्यामा को बेबसी की हालत में देखा था क्योंकि दीवार के साथ वह भयावनी मूरत ज्यों-की-त्यों बैठी हुई थी, फर्क सिर्फ इतना ही था कि इस समय उसके दोनों हाथ खाली थे और कोई कैदी उनमें छटपटा न रहा था. यहाँ पहुँचते ही जमीन पर गिरी हुई श्यामा को उसने देखा और साथ ही उन कई दुष्टों पर निगाह पड़ी जो जबर्दस्ती उसे बेहोशी की दवा सुँघा रहे थे. यह दृश्य देखते ही भूतनाथ ने कड़ककर आवाज दी, "बस खबरदार ! इस औरत पर से अपना हाथ अभी हटा लो."

उन आदमियों ने भी यह बात सुनी, साथ ही उनमें से एक जो सरदार मालूम होता था और अलग खड़ा था खंजर हाथ में लिए आगे बढ़ आया. उसके साथियों ने भी उसका इशारा पा श्यामा को उसी तरह छोड़ दिया और भूतनाथ को चारों तरफ से घेर लिया.

2

दारोगा को गहरे धोखे में डाल प्रभाकरसिंह सर्यू को छुड़ा लाये और उसी के रथ

पर सवार हो कहीं चल दिये.

पाठक समझते होंगे कि प्रभाकरसिंह सर्यू को लिए सीधे इन्द्रदेव के डेरे पर जाँयगे, मगर नहीं, इन्द्रदेव ने उन्हें विदा करते समय इस बारे में खास हिदायत कर दी थी और कब क्या करना होगा यह अच्छी तरह समझा दिया था अस्तु रथ पर बैठते ही साधू बने हुए प्रभाकरसिंह ने बहलवान को रथ शहर से बाहर ले चलने को कहा और आप चारों तरफ से पर्दा गिरा उसके अन्दर हो गए. वहाँ बहुत गुप्त रीति से सर्यू को अपना परिचय देने के बाद उन्होंने संक्षेप में सब हाल सुना दिया और यह भी कह दिया कि इन्द्रदेव का कहना है कि जमानिया में दुश्मनों के जाल बेतरह फैले हुए हैं अस्तु सर्यू को छुड़ा कर तुम सीधे तिलिस्मी घाटी में चले जाना और उसे वहाँ छोड़ कर जब वापस आना तब मुझसे मिलना. इसके लिए कई खास इन्तजाम भी वे कर चुके हैं." सर्यू को ये बातें जान सन्तोष हो गया और बहलवान को किसी प्रकार का संदेह न हो जाय इसका खयाल कर प्रभाकरसिंह ने भी इस समय उससे विशेष बातें करना उचित न जाना.

शहर के बाहर होते ही प्रभाकरसिंह ने रथ रोकवाया और सर्यू को लेकर रथ से नीचे उतर पड़े. रथवान से रथ वापस ले जाने को कहा और जब तक वह आँखों के ओट न हो गया तब तक वहीं खड़े रहे. इसके बाद उन्होंने जेब से सीटी निकाल कर बजाई जिसकी आवाज सुनते ही पेड़ों की आड़ में छिपा हुआ एक आदमी बाहर निकल आया और उन्हें सलाम कर खड़ा हो गया. प्रभाकरसिंह ने पूछा, "रथ तैयार है ?" जिसके जवाब में वह बोला, "जी हाँ, यहाँ से कुछ ही दूर पर है. हुक्म हो तो ले आऊँ." प्रभाकरसिंह ने रथ लाने की आज्ञा दी और वह आदमी वहाँ से चला गया.

थोड़ी ही देर में दो मजबूत घोड़ों का एक हल्का रथ जिसे चार सवार घेरे हुए थे वहाँ आ पहुँचा, साथ-साथ वह आदमी था. प्रभाकरसिंह ने सर्यू को रथ पर सवार कराया और आप भी बैठ गये. उस आदमी ने पूछा, "मुझे क्या आज्ञा होती है?" जिसके जवाब में प्रभाकरसिंह ने कहा, "तुम घर चले जाओ और इन्द्रदेवजी को खबर कर दो कि सब काम ठीक हो गया और हम लोग तिलिस्मी घाटी की ओर जा रहे हैं." वह 'बहुत खूब' कह सलाम कर वहाँ से हट गया और आज्ञा पाते ही रथ तेजी के साथ रवाना हुआ. चारों सवार साथ-साथ जाने लगे. इस समय रात आधी से ज्यादा जा चुकी थी.

कैद की मुसीबतों ने सर्यू को बहुत ही कमजोर कर दिया था. कपड़े तथा बिछावन का पूरा इन्तजाम रथ में होने के कारण प्रभाकरसिंह ने उसे लेटा दिया और तब आप भी एक तरफ उठंग गये. रात की ठंडी हवा आलस्य पैदा कर रही थी अस्तु थोड़ी देर बाद कमजोर सर्यू तो नींद में गाफिल हो गई और प्रभाकरसिंह को भी झपकी आने लगी.

रथ के यकायक रुक जाने से प्रभाकरसिंह को जिस समय चैतन्यता हुई उस समय यह देख उन्हे बड़ा आश्चर्य हुआ कि रथ एक सुनसान मैदान में खड़ा है और सिवाय हाँकने वाले के और किसी का भी वहाँ पता नहीं है. उन्होंने चौंक कर पूछा, "यह क्या मामला है—रथ रुका क्यों है और हमारे सवार कहाँ हैं ?" रथवान बोला, "कई सवारों द्वारा पीछा किये जाने की आहट पा सवार जाँच करने के लिए गए मगर देर हो जाने पर भी अभी तक वापस नहीं लौटे." यह सुनते ही प्रभाकरसिंह को ताज्जुब हुआ. वे कूद कर रथ के नीचे आ गए और चारों तरफ गौर से देखने के बाद बोले, "वे लोग किधर गए हैं ?" बहलवान ने पीछे की तरफ इशारा किया और कहा, "उधर ही से आहट आई थी और उधर ही हमारे सवार गए हैं."

बहुत देर तक प्रभाकरसिंह गौर से चारों तरफ देखते और सुनते रहे पर न तो उन्हें अपने सवार ही कहीं दिखाई दिए और न किसी प्रकार की आहट ही मिली. आखिर वे पुनः रथ पर सवार हो गए और हाँकने वाले से बोले, "तुम रथ बढ़ाओ, वे लोग आते रहेंगे." हुक्म पा उसने घोड़ों पर चाबुक लगाई और रथ पुनः तेजी से जाने लगा.

घड़ी भर तक के जाने बाद हाँकने वाले ने पुनः बाग कड़ी की और घूम कर प्रभाकरसिंह से कहा, "सामने की तरफ कई सवार दिखाई पड़ रहे हैं, मुमकिन है कि हमारे दुश्मन हों."

यह सुन प्रभाकरसिंह तरद्दुद में पड़ गए. वे स्वयम् तो बहुत ही वीर और हिम्मतवर थे मगर इस समय कमजोर सर्यू को साथ लेकर किसी तरह के खतरे में पड़ना उन्हें मंजूर न था अस्तु कुछ सोच-विचार कर बोले, "रथ बाईं तरफ मोड़ो और वह जो टीला दिखाई पड़ता है उसके पास चलो." जिस टीले की तरफ उनका इशारा था वह वही था जिस पर लोहगढ़ी की इमारत थी और वह यहाँ से बहुत ज्यादा दूर भी न था. बमूजिब हुक्म रथवान ने घोड़ों को उधर ही मोड़ा और

सड़क छोड़ जंगल का रास्ता लिया. उस समय प्रभाकरसिंह ने देखा कि वे सवार जिनके दिखलाई पड़ने की वजह से उन्हें रास्ता छोड़ना पड़ा था अपनी जगह ही रुक गए हैं बल्कि मालूम होता है आपस में कुछ सलाह कर रहे हैं.

तेजी से चल कर रथ शीघ्र ही टीले के नीचे आ पहुँचा. जिधर से ऊपर चढ़ने का रास्ता था वहाँ पहुँच कर प्रभाकरसिंह ने रथ को रुकवाया और सर्यू से जो आहट पाकर और किसी मुसीबत का ख्याल करके उठ बैठी थी, बोले, "मासी, मुझे दुश्मनों का कुछ संदेह हो रहा है. हमारे सवार जो साथ थे न जाने कहाँ चले गए हैं और अकेले इतना लम्बा रास्ता तय करना मुझे इस रात के समय उचित नहीं मालूम होता इसलिए मैं चाहता हूँ कि कुछ देर तक आपको (ऊपर की तरफ उंगली उठा कर) उस मकान में बैठा दूँ और अपने सवारों के आ जाने पर या सब तरह का सन्देह दूर होने पर यह सफर शुरू करूँ!" बेचारी सर्यू यह सुनते ही तुरत तैयार हो गई और प्रभाकरसिंह ने अपने हाथ का सहारा दे उसे नीचे उतारा तथा कुछ जरूरी सामान साथ में ले टीले पर चढ़े, रथवान से कहते गए, "रथ कहीं आड़ में खड़ा कर दो और जरा टोह लो कि वे लोग कौन हैं या हमारे सवार कहाँ चले गये."

लोहगढ़ी की इस विचित्र इमारत में पाठक कई बार हमारे साथ आ चुके हैं अस्तु इस जगह इसके बारे में कुछ लिखने की जरूरत नहीं हैं. सर्यू को लिए हुए प्रभाकरसिंह उस टीले पर चढ़ सीधे लोहगढ़ी के अन्दर चले गए और उनका रथवान उनकी आज्ञानुसार रथ को पेड़ों की एक झुरमुट में छिपाने के बाद इस बात की टोह लेने निकला कि उसके साथ वाले सवार कहाँ चले गए.

रथवान के जाने के कुछ ही देर बाद एक आदमी जो न जाने कहाँ छिपा हुआ था उस जगह आ मौजूद हुआ. पहिले तो उसने घूम-घूम कर चारों तरफ देखा और जब किसी को न पाया तो वह रथ के पास पहुँचा और उसे ले वहीं आ गया जहाँ रथ से उतर कर प्रभाकरसिंह सर्यू के साथ टीले पर चढ़ गए थे. थोड़ी देर बाद चार सवार भी उस जगह आ पहुंचे जिन्होंने इस नये आदमी से ऐयारी भाषा में कुछ बातें कीं और तब कायदे के साथ रथ के पीछे इस प्रकार खड़े हो गए मानो मालिक के आने का इन्तज़ार कर रहे हों.

लगभग एक घंटा बीत गया पर न तो प्रभाकरसिंह ही लोहगढ़ी के बाहर निकले और न उनका असली रथवान ही जो अपने साथियों को खोजने निकला था

वापस लौटा. रथ के पीछे खड़े सिपाहियों में यह देख धीरे-धीरे कुछ कानाफूसी होने लगी. अन्त में उनमें से एक जो सभों का सरदार मालूम होता था आगे बढ़कर रथवान के पास पहुँचा और ऐयारी भाषा में उससे बोला, "मालूम होता है हम लोगों की मेहनत बेकार हो गई. न तो साधू महाराज ही लौटते दिखाई पड़ते हैं और न सर्यू का ही वापस आना सम्भव मालूम होता है. फजूल ही इतना लड़े-झगड़े, उन सिपाहियों को कैद किया और इतनी दूर तक रथ का पीछा कर चले आये."

रथवान बने हुए आदमी ने यह सुन जवाब दिया, "ताज्जुब तो यह है कि वह रथवान भी अभी तक नहीं लौटा जो अपने साथियों की टोह लेने निकला था. न मालूम क्या मामला है !"

दोनों में पुनः कुछ देर तक इसी तरह की बातें होती रहीं. आखिर रथवान यह कह कर रथ से उतरा—"तुम जरा घोड़ों को देखते रहो मैं टीले पर जाकर देखूं शायद कुछ पता लगे." और लपकता हुआ टीले पर चढ़ गया. अभी वह इमारत से कुछ दूर ही था कि सामने से आते हुए वे ही बाबाजी (प्रभाकरसिंह) दिखाई पड़े जो उसे देखते ही बोले, "क्यों महाबीर, तुमने कुछ पता लगाया ! और हमारे सवार वापस लौटे या नहीं ?"

नकली महावीर ने जवाब दिया, "जी हाँ, वे लौट आये मगर जिनका पीछा उन्होंने किया था वे भाग निकले और कोई हाथ न आया. इन लोगों ने भी कोई विशेष चेष्टा न की. रथ तैयार है—हुक्म हो तो ले आऊँ."

प्रभाकरसिंह बोले, "हाँ ले आओ, मगर यह तो बताओ अब समय क्या होगा ?"

यह एक बंधा हुआ इशारा था जिसे प्रभाकरसिंह ने संदेह के मौके के लिए मुकर्रर कर रखा था. उनका असली रथवान इसके जवाब में एक खास शब्द कहता मगर इस नकली महावीर को इस बात की क्या खबर थी, इसने मामूली तौर पर जवाब दे दिया, "अब पौ फटने ही वाली है."

इस जवाब ने प्रभाकरसिंह को होशियार कर दिया. उन्होंने संदेह की एक बारीक निगाह महाबीर पर डाली और तब कहा, "अच्छा तुम रथ टीले के पास लाओ मैं अभी आता हूँ." नकली महाबीर "जो हुक्म" कह लौट गया और प्रभाकरसिंह कुछ सोचते हुए लोहगढ़ी की तरफ घूमे. अभी वे दस ही पंद्रह कदम

गए होंगे कि उन्हें किसी की आहट लगी और घूम कर देखते ही उन्होंने पुनः महावीर को अपनी तरफ आते देखा जिससे वे रुक गए. महाबीर दौड़ता हुआ पास आया और हाथ जोड़कर बोला, "मैं आपका खिदमतगार महाबीर हूँ. परिचय के लिए मैं 'मनचला' कहता हूँ जो आप ही ने बताया था. अभी-अभी जो आदमी आपसे बातें कर गया है वह मेरी ही सूरत-शक्ल का होने पर भी कोई दुश्मन है और रथ के साथ वाले चारों सवार भी हमारे नहीं हैं."

प्रभा० : हाँ, यह तो मुझे भी मालूम हो गया मगर यह बताओ कि तुम इतनी देर तक थे कहाँ और हमारे सवार कहाँ रह गये ?

महा० : सवारों की तो मुझे खबर नहीं पर मैं आपकी आज्ञानुसार रथ को छिपा कर जब उनका पता लगाने चला तो कुछ दूर पेड़ों की झुरमुट में मुझे वे ही चारों सिपाही दिखाई पड़े जो इस समय रथ के पास हैं. पहिले तो मुझे ख्याल हुआ कि वे हमारे ही आदमी हैं क्योंकि उनकी पोशाक वगैरह ठीक वैसी ही और सूरतें भी बहुत कुछ मिलती थीं मगर मुझे कुछ सन्देह हो गया और मैं बातें सुनने की नीयत से छिप कर उनके पास पहुँचा. उनकी बातचीत से पता लगा कि वे आपको और बहूजी (सर्यू) को गिरफ्तार करने की धुन में हैं अस्तु मैं होशियार हो गया और···

प्रभा० : कुछ यह भी पता लगा कि वे किसके आदमी हैं !

महा० : नहीं, मगर बातचीत में एक बार महाराज शिवदत्त का नाम जरूर आया था.

प्रभा० : (कुछ सोचने के बाद) अच्छा तब !

महा० : कुछ देर तक बातचीत करने के बाद वे चारों वहाँ से हटे और उस जगह आये जहाँ आप रथ से उतरे थे. वही आदमी जो अभी-अभी आपसे मेरी सूरत बन कर बातें कर गया है रथ लिए यहाँ मौजूद था. उन सवारों ने उससे कुछ बातें कीं और तब रथ के पीछे खड़े हो गये. मैं इस फिक्र में हुआ कि कहीं आप धोखे में उस रथ पर सवार हो दुष्टों के फन्दे में न फंस जाएँ अस्तु यहाँ आकर आपको होशियार करना चाहा पर आप शायद गढ़ी के अन्दर थे इसलिए आपका कुछ पता न लगा, तब यह सोच उस झाड़ी में जा बैठा कि आखिर आप कभी तो बाहर आवेंगे, तभी होशियार करूँगा. जब उस नकली महाबीर से आपको बातें

करते देखा तो बहुत घबराहट हुई और इधर आ गया. अब जो आप आज्ञा दें सो करूँ.

प्रभाकरसिंह कुछ देर खड़े सोचते रहे कि अब क्या करना चाहिये. बहुत जल्दी ही उन्होंने इसका निश्चय कर लिया और तब महाबीर को लिये हुए लोहगढ़ी के पिछली तरफ चले गये.

आधी घड़ी के बाद साधू बने हुए प्रभाकरसिंह टीले के नीचे उतर कर उस जगह पहुँचे जहाँ उनका रथ खड़ा था. रथवान उन्हें देख रथ के नीचे उतर आया और सवारों ने भी सलाम किया. प्रभाकरसिंह रथ के अन्दर जा कर बैठ गए और बोले, "चलो." उन्हें अकेले देख नकली रथवान ने डरते-डरते पूछा, "क्या और कोई आपके साथ न चलेगा ?" जवाब में प्रभाकरसिंह ने सिर हिला दिया और कुछ अधिक पूछने की हिम्मत न कर नकली महाबीर ने रथ हाँक दिया. चारों सवार पीछे-पीछे जाने लगे.

3

भूतनाथ के फेंके हुए कागजों को देख दारोगा के होश उड़ गये और जब उसे मारने की कोशिश भी नाकामयाब हुई तो दारोगा को सिवाय इसके और कुछ न सूझा कि जिस तरह हो भूतनाथ को राजी करे और अपनी जान बचावे. अस्तु वह उसे लेकर एक एकान्त कमरे में चला गया और तरह-तरह की नर्मी और खुशामद की बातें करता हुआ उसे अपने ऊपर मेहरबान बनाने की कोशिश करने लगा.

जिस जगह दारोगा भूतनाथ को अब ले गया वह उसके मकान का एक बहुत ही एकान्त और निराला हिस्सा था और वहाँ किसी का आना-जाना बिना दारोगा की मर्जी के नहीं हो सकता था. भूतनाथ दारोगा के पीछे वहाँ तक चला तो गया मगर उसके मन में यह सन्देह जरूर हो गया कि दारोगा जो एक बार मुझे धोखा देकर फँसाने की कोशिश कर चुका है कहीं फिर धोखा न दे अस्तु उसने यहाँ पहुँचते ही दारोगा से कहा, "सुनियेगा दारोगा साहब, मैं आपके साथ यहाँ तक चला तो आया हूँ लेकिन अगर आपके दिल में यह खयाल हो कि मुझे फिर किसी तरह का धोखा दें या जान से मारने की इच्छा करें तो मैं आपसे साफ कह

देना चाहता हूँ कि आपको तो कामयाबी मिलेगी ही नहीं मगर मैं भी फिर आपकी जरा भी मुरौवत न करूँगा और बुरा से बुरा सलूक आपके साथ करने को तैयार हो जाऊँगा. अगर आपने मेरा एक बाल भी बांका करने की कोशिश की तो आपकी वोटी-वोटी…"

दारोगा : (जनेऊ हाथ में लाकर) मैं धर्म की शपथ खाकर कहता हूँ कि तुम्हारे साथ जरा भी बेईमानी करने का खयाल दिल में न लाऊँगा. मैं तुम्हारी और तुम्हारे शागिर्दों की चालाकी और बहादुरी देख चुका हूँ और तुम विश्वास रक्खो कि अब मुझे तुम्हारा मुकाबला करने की हिम्मत बिल्कुल नहीं रह गई है. अगर तुम्हें मेरी कसम पर एतबार न हो तो यह लो मैं हाथ बढ़ाता हूँ अपने कमंद से इन्हें बाँध डालो बल्कि दोनों पैर भी बाँध कर अपना डर दूर कर लो और तब मुझसे बातें करो, मुझे कोई उज्र न होगा.

भूत० : (हंस कर) नहीं-नहीं, इतना करने की मुझे कोई जरूरत नहीं क्योंकि मुझे अब भी अपनी फुर्ती, चालाकी और ताकत पर भरोसा है और मेरे शागिर्द अभी भी यहाँ मौजूद हैं. मैंने तो सिर्फ आपको होशियार करने की नीयत से एक बात कही थी.

दारोगा : तो मैं पूरी तरह से होशियार हो गया हूँ और मुझे अपनी जान प्यारी है अस्तु तुम किसी तरह से न डरो और मेरे पास आकर बैठो.

भूतनाथ दारोगा के पास जाकर बैठ गया और दोनों में बातचीत होने लगी—

दारोगा : मैं समझता हूँ कि उस दिन सभा में पहुँच कर खून-खराबी मचाने और उस कलमदान को ले जाने वाले नकाबपोश तुम्हारे ही आदमी थे.

भूत० : हाँ.

दारोगा : तो जरूर ही सभा का सब भेद भी उस कलमदान की बदौलत तुम्हें मालूम हो गया होगा.

भूत० : जी हाँ बिल्कुल.

दारोगा : अस्तु अब तुमसे कोई बात छिपाना या झूठ बोलना बेवकूफी होगी. अपना सब कसूर स्वीकार करके तुमसे पूछता हूँ कि अब तुम क्या किया चाहते हो ?

भूत० : आपके पास से उठ कर मैं सीधा राजा गोपालसिंह के पास जाया

और उनके आगे ये कागज रख दिया चाहता हूँ जिसमें उन्हें भी आपका सब कच्चा चिट्ठा मालूम हो जाय और वे जो सजा चाहें आपको दें.

दारोगा : (कांप कर) मतलब यह है कि मुझे एकदम खाक ही में मिला दिया चाहते हो.

भूत० : अब आप जो कुछ समझें.

दारोगा : मगर इससे तुम्हारा क्या फायदा होगा ? गोपालसिंह कुछ तुम्हारा रिश्तेदार नहीं और न जमानिया राज्य ही से तुम्हें किसी तरह का मतलब या सरोकार है. ऐसा करने से तुम्हें अगर यह उम्मीद हो कि कोई बड़ी भारी रकम, जागीर या इनाम तुम्हें मिल जायगा सो भी कोई बात नहीं है क्योंकि मैं गोपालसिंह को बखूबी जानता हूँ. उसके ऐसा मतलबी, स्वार्थी और लालची आदमी दुनिया में शायद ही कोई हो. उसे यह सब कागजात दिखा कर तुम मुझे जरूर बर्बाद कर दोगे मगर अपना कोई काम न कर सकोगे. अगर तुम समझते हो कि गोपालसिंह तुम्हारा कोई फायदा करेगा तो यह तुम्हारा सिर्फ खयाल है, वह तुम्हें एक कौड़ी भी न देगा बल्कि ताज्जुब नहीं कि तुम्हें भी अपना दुश्मन समझ बैठे और…

भूत० : (हँस कर) दारोगा साहब, आप व्यर्थ की बातों के जाल में मुझे फँसाने की कोशिश न करें. मैं अपना फायदा-नुकसान अच्छी तरह समझता हूँ और गोपालसिंह के मिजाज और तबीयत से भी खूब वाकिफ हूँ. अस्तु यह सब तो आप मुझे बताइये नहीं. गोपालसिंह मेरा कोई फायदा करें या न करें मगर अपने पिता के मारने वाले को कदापि जिन्दा न छोड़ेंगे इसका मुझे पूरी तरह विश्वास है.

दारोगा : (चौंक कर) तो क्या तुम बड़े महाराज साहब के मारने का इलजाम भी मुझ पर लगाते हो ?

भूत० : जी हाँ, क्या आपको इनकार है ?

दारोगा : अगर तुम्हारा मतलब उस कमेटी से है जिसने महाराज को मारने का हुक्म दिया था तो उस बारे में सिर्फ मैं ही कसूरवार नहीं हूँ, सभा के सैंकड़ों दूसरे सदस्यों का कसूर भी उतना ही है जितना कि मेरा.

भूत० : जी नहीं, मेरा मतलब उस कमेटी से नहीं है बल्कि मैं उस लौंडी की बात आपसे कह रहा हूँ जिसे आपने गोपालसिंह की स्त्री बनाने का सब्जबाग दिखा कर भरमाया था, और जिसके हाथ में इसलिए जहर की शीशी दी थी कि

महाराज के भोजन में मिला दे.

यह बात सुन दारोगा और भी घबड़ा गया. अब तक न जाने किस हिम्मत पर वह बातें कर रहा था, भूतनाथ की यह आखिरी बात सुन उसकी बची-खुची हिम्मत भी जाती रही और वह बिल्कुल ही नाउम्मीद हो बैठा. कुछ देर तक तो वह सिर झुकाये न जाने क्या-क्या सोचता रहा और तब हाथ जोड़ कर भूतनाथ से बोला, "बस मैं जान गया कि तुमसे कोई बात छिप नहीं सकती. अब मेरी जान तुम्हारे हाथ में है, अगर तुम समझते हो कि मेरे मारे जाने से तुम्हारा कोई फायदा होगा तो खुशी से मारो, मगर अपने ही हाथ से मारो, मुझे कोई उज्र न होगा, और अगर यह समझते हो कि मेरे जीते रहने से तुम्हारा कुछ भला हो सकेगा तो मुझे जीता छोड़ दो और फिर देखो कि मैं क्योंकर अपने को सुधारता हूँ. सचमुच अब जो देखता हूँ तो शुरू से आज तक एक के बाद एक बुरा ही काम करता आया हूँ. मेरे पापों का घड़ा भरता जा रहा है और मर जाने पर मेरे लिए न जाने कौन-सा नरक तैयार मिलेगा. ओफ, अब तो मैं याद करता हूँ तो दुनिया में कोई ऐसा पाप नहीं दिखाई पड़ता जो मैंने न किया हो, एक से एक बढ़ कर…"

इत्यादि बातें देर तक दारोगा बकता रहा और उसकी आँखों से चौधारे आँसू निकल कर उसके कपड़ों को तर करते रहे. वह यहाँ तक रोया-कलपा और बिल-बिलाया कि अन्त में भूतनाथ के पैरों पर गिर पड़ा और जोर-जोर से रोने लगा. भूतनाथ का पत्थर-सा कलेजा भी उसकी यह हालत देख कर कुछ नर्म पड़ गया और उसे अपना विचार बदल देना पड़ा. दारोगा की हालत देख अन्त में उससे न रहा गया और उसने उसे अपने पैरों पर से उठाते हुए कहा, "दारोगा साहब, आपकी हालत देख कर मुझे रहम आ जाता है. यद्यपि आप दया करने लायक आदमी नहीं हैं फिर भी मैं एक बार आपको छोड़ता हूँ. उठिये और मेरी बातें सुनिये. तीन शर्तों पर मैं अब भी आपको बख्श देने को तैयार हूँ."

दारोगा ने अपना आँसुओं से भरा चेहरा उठाया और उसकी सूरत देखता हुआ बोला, "वे शर्तें क्या हैं ?"

भूत० : सुनिये—एक तो आपको एक एकरारनामा मुझे लिख देना पड़ेगा कि आज तक आपने जो कुछ किया सो किया, अब आगे आप गोपालसिंह, इन्द्रदेव, बलभद्रसिंह, लक्ष्मीदेवी आदि के साथ अथवा इनके किसी भी रिश्तेदार या दोस्त

के साथ किसी तरह की बुराई न करेंगे.

दारोगा : मंजूर है, अच्छा और ?

भूत० : दूसरे बीस हजार अशर्फी इसी वक्त मुझे देना होगा.

दारोगा : (लम्बी साँस लेकर) अच्छा मंजूर है, आगे बोलो ?

भूत० : तीसरी शर्त यह है कि मेरे, इन्द्रदेव के, बलभद्रसिंह के, गोपालसिंह के, या मेरे मालिक रणधीरसिंह के जितने भी दोस्त, रिश्तेदार या मुलाकाती इस समय दुनिया में मरे मशहूर होकर भी आप या आपकी उस मनहूस कमेटी की वजह से कैद में पड़े हुए हैं उन्हें तुरन्त छोड़ देना होगा !

दारोगा : यह भी मंजूर है, जमानिया के कुछ लुच्चे शोहदे और डाकू-लुटेरे कैद हैं, अगर तुम चाहोगे तो उन्हें भी मैं छुड़वा दूंगा.

भूत० : (कड़ुए स्वर में) जनाब, मेरा मतलब उन लुच्चों-शोहदों से नहीं है बल्कि उन भले आदमियों से है जिन्हें आपने मौत से बढ़कर तकलीफ दे रक्खी है.

दारोगा : (कांप कर) वे कौन हैं ? कम से कम जरा नाम तो सुनूं ?

भूत० : दामोदरसिंह, मैयाराजा, बहुरानी, दयाराम,—क्या और नाम सुनाऊँ !

दारोगा : क्या ये लोग जीते हैं और मैंने इन्हें कैद रक्खा है ?

भूत० : बेशक !

दारोगा : कदापि नहीं. दयाराम खुद तुम्हारे हाथ से मारे गये, तुम्हें उनकी मौत का हाल बखूबी मालूम है, मैयाराजा और बहुरानी आप ही आप कहीं गायब हो गये और मुझे उनकी बाबत कुछ भी नहीं मालूम, और दामोदरसिंह को कमेटी के आदमियों ने कई महीने हुए मार कर फेंक दिया था, इसी शहर की चौमुहानी पर उनकी लाश मिली थी. फिर मुझ पर इन लोगों के कैद करने का इलजाम क्योंकर लगाया जा सकता है ?

भूत० : देखिये दारोगा साहब, अब आप फिर चालबाजी की बात करने लगे. मैं जो कुछ कह रहा हूँ—समझ-बूझ कर कह रहा हूँ. मुझे ठीक पता है कि वे सब लोग तथा और भी कितने ही आदमी आपके कैदखानों को रोशन कर रहे हैं. जिस तरह आपने पहिली दोनों शर्तें मानीं उसी तरह धीरे से इसे भी मान लीजिए तभी आपकी भलाई है नहीं तो फिर आपके जान की खैर नहीं.

दारोगा : भला तुम्हीं बताओ कि मरे आदमियों को मैं क्योंकर जिन्दा कर

कता हूँ, अगर यही शक्ति मुझमें होती तो…

भूत० : (डपट कर) फिर भी आप बकबक किए ही जाते हैं ! मालूम होता मौत अभी तक आपके सिर पर नाच रही है, अच्छा लीजिए मैं सबूत देता हूँ. हिले दामोदरसिंह वाला मामला ही लीजिए. क्या उनका मरना मशहूर होने के दिन बाद भी वे आपके इसी मकान की उस कोठरी में मौजूद नहीं थे जिसकी तह में लोहे की कांटियाँ जड़ी हुई हैं और क्या बाद में उन्हें आप अजायबघर में द नहीं कर आए हैं ?

भूतनाथ की यह बात सुन कर एक बार तो दारोगा के चेहरे का रंग उड़ गया र उसने तुरन्त ही अपने को सम्हाला और कहा, "हरगिज नहीं—यह बिल्कुल त बात है ! अगर तुमसे किसी ने ऐसा कहा तो फरेब किया और मुझ पर ठा ऐब लगाया है. यह बिल्कुल गलत बात है—मैं दामोदरसिंह के बारे में कुछ नहीं जानता."

भूत० : (गुस्से से) आपने पुनः झूठ बोलने पर कमर बांध ली, मैं कहता हूँ र जोर देकर कहता हूँ कि दामोदरसिंह जीते हैं और आपकी ही कैद में हैं. मुझे ी खबर नहीं लगी है बल्कि जिसने मुझे कहा है उसने अपनी आँखों से उन्हें है और उससे खुद उन्होंने बयान किया कि वे आपके मकान में कैद थे और आपने उन्हें अजायबघर में बन्द कर रक्खा है.

दारोगा : (गुस्से का चेहरा बना कर) बिल्कुल झूठी बात है ! किसने तुमसे बात कही है ?

भूत० : (जोश से) मुझे खास इन्द्रदेव ने यह बात कही है और वे खुद से मिल चुके हैं.

दारोगा : (तेजी से) इन्द्रदेव झूठे हैं और झख मारते हैं जो ऐसी गलत त कहते हैं और इतना झूठा ऐब मुझ पर लगाते हैं. वे कभी इस बात को वित नहीं कर सकते. मैं अपने साथ उनको और तुम्हें दोनों ही को अजायबघर ले चलने को तैयार हूँ, वे भला मुझे दामोदरसिंह की सूरत दिखला तो दें !

भूत० : (ताज्जुब से) इन्द्रदेव और झूठ कहते हैं ! आपको अपनी जुबान यह बात लाने की हिम्मत है ?

दारोगा : हाँ है और हजार बार है ! अब मैं समझ गया कि यह सब पापड़ द्रदेव ही के बेले हुए हैं. उन्होंने ही समझा-बूझा कर तुम्हें मेरे पास भेजा है

और वे मुझे बरबाद करने पर लगे हैं. लो अब जब तुमने यह परदाफाश कर दिया है तो मैं भी तुम्हें सुनाता हूँ. ध्यान से सुनो और अपने नायाब दोस्त की सचाई देखो. इन्द्रदेव ने मशहूर कर रक्खा है न कि दयाराम को तुमने मारा है, नहीं, मुझ पर टेढ़ी आँखें न फेरो ! ऐसे समय जोश में आकर मैं भी वे बातें कह रहा हूँ जो मुझे कहनी न चाहिए और जिनके लिए शायद आगे कभी पछताना पड़ेगा, मगर कोई परवाह नहीं, जब इन्द्रदेव मुझे बदनाम करने पर उतारू हो गए हैं तो मैं भी उनका कच्चा चिट्ठा तुम्हारे आगे खोल देता हूँ, लो अच्छी तरह कान खोल कर सुन लो—मगर दयाराम को न तुम ने मारा है न मैंने—उन्हें खास इन्द्रदेव ने ही बन्द कर रक्खा है और अपना काम निकल जाने पर वे उन्हें मार डालेंगे. अगर तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो तो चलो मैं आज और अभी तुम्हें ले चल कर दयाराम को जीता-जागता और खास इन्द्रदेव के मकान में बन्द दिखा सकता हूं.

दारोगा की यह बात जो उसने बड़े ही जोश के साथ कही, सुन कर भूतनाथ ताज्जुब में पड़ गया. दारोगा के ढंग से सचाई की बू आती थी और उसकी आकृति से दृढ़ता प्रकट होती थी मगर उसकी यह बात विश्वास करने लायक नहीं थीं. आखिर भूतनाथ ने कहा—

भूत० : क्या आप दयाराम को जीता-जागता मुझे दिखा सकते हैं ?

दारोगा : हाँ जी हाँ, जीता-जागता और खास इन्द्रदेव के मकान के अन्दर बन्द ! जिस तरह चूहा जब लाचार होता है तो बिल्ली पर हमला करता है उसी तरह आज मैं लाचार हो इन्द्रदेव का मुकाबला करने पर मजबूर हुआ हूँ. मैं खूब जानता हूँ कि मेरी यह बात सुन कर वे मुझे जीता न छोड़ेंगे पर खैर जो कुछ होगा झेलूंगा और साथ ही यह भी विश्वास रक्खूंगा कि अगर तुममें कुछ भी मर्दानगी है तो तुम इन्द्रदेव के वार से मुझे बचाओगे.

भूत० : हाँ हाँ, अगर आपने अपनी बात पूरी की और जीते-जागते दयाराम को मुझे दिखा दिया तो मैं इन्द्रदेव तो क्या सारी दुनिया भी अगर आपके खिलाफ हो जाय तो भी आप का साथ दूंगा. मगर आप फिर सोच लीजिए. बात आप बड़े ताज्जुब की कर रहे हैं और अगर यह झूठी निकली तो सबसे पहिले मैं ही आपसे इसका बदला लूंगा.

दारोगा : हां हाँ खुशी से, तुम अपने हाथ से मेरा सर काट लेना, मुझे

अफसोस न होगा. मगर तुम इतने ही में घबड़ा गए ! मैं इन्द्रदेव की बदनीयती के और कितने ही सबूत दे सकता हूँ. अच्छा तुम्हीं बताओ अभी तक तुम यही न समझ रहे हो कि पिछली दफे जमना और सरस्वती तुम्हारे हाथों मारी गई हैं ?

भूत० : (सिर नीचा करके) हाँ.

दारोगा : मगर मैं साबित कर सकता हूँ कि यह भी इन्द्रदेव की महज एक चालबाजी है जो तुम पर झूठे ऐब लगा सारे जमाने के आगे तुम्हारा मुँह काला किये दे रहे हैं ! अगर तुम्हारी इच्छा हो तो मेरे साथ चलो, मैं इन्द्रदेव ही के मकान में जमना और सरस्वती को भी जीती-जागती दिखा दूंगा.

भूत० : (ताज्जुब और कुछ खुशी से) क्या आप सच कह रहे हैं !

दारोगा : हाँ जी हाँ, सच कह रहा हूँ और जो कुछ कह रहा हूँ इसी दम उसका सबूत देने को तैयार हूँ.

भूत० : आप जीते-जागते दयाराम और जमना तथा सरस्वती को मुझे दिखायेंगे !

दारोगा : हाँ, मगर एक शर्त पर.

भूत० : क्या ?

दारोगा : यही कि दिखा देने के बाद मेरी जान बचाये रखना तुम्हारा काम होगा ! इन्द्रदेव जरूर मेरा जानी दुश्मन हो जायेगा और मुझे कदापि जीता न छोड़ेगा.

भूत० : (जोश के साथ) मैं कसम खाकर कहता हूँ कि अगर आप अपनी बात पूरी करके दिखा देंगे तो मैं आपका बाल भी बांका न होने दूंगा और जिन्दगी भर आपको अपना बड़ा भाई मानूंगा.

दारोगा : तो मैं भी कसम खाकर कहता हूँ कि बीमारी से अच्छा होने और चलने-फिरने के लायक होने के साथ ही मैं अपना वादा पूरा करूंगा और दयाराम, जमना तथा सरस्वती को जीता-जागता तुम्हें दिखा देने के बाद तुमसे कहूँगा कि अब इन्द्रदेव को लेकर मेरे साथ अजायबघर में ले चलो और दामोदर-सिंह को मुझे दिखाओ !

भूत० : अच्छी बात है, मैं एक पखवाड़े बाद आप से मिलूंगा. (कुछ रुक कर) खैर यह बात तो तय हो गई, अब और जो कुछ मैंने कहा है सो पूरा कर दें.

दारोगा : वह क्या ?

भूत० : वही एकरारनामा और बीस हजार अशर्फी !

दारोगा : तुम्हारे लिए मैं इतना भयानक काम करने पर उतारू हो कि इन्द्रदेव को जानी दुश्मन बना रहा हूँ, फिर भी तुम मुझे माफ न करोगे.

भूत० : देखिए दारोगा साहब, सच बात तो यह है कि मुझे आ विश्वास नहीं होता. मुझे जब तक कि मैं अपनी आँखों से देख न लूँगा— लोगों के जीते रहने का विश्वास न होगा. फिर, जमना और सरस्वती के रहने या न रहने में मेरा अपना निजी स्वार्थ है, गोपालसिंह, रणधीरसिंह, ब सिंह या इन्द्रदेव को उससे कोई मतलब नहीं जिन्हें मैं तब तक अपना दोस्त ही मानता जाऊँगा जब तक कि आप अपना कहना पूरा नहीं कर दि

दारोगा : खैर जो तुम्हारी मर्जी—मगर यह तो कहो कि अगर मैं रारनामा लिख दूँगा और बीस हज़ार अशर्फी भी तुम्हें दे दूँगा तो तुम मेरा भेद तो छिपाये रहोगे और वह कलमदान मुझे वापस तो कर दोगे ?

भूत० : हाँ हाँ जरूर.

दारोगा : अच्छी बात है तो मुझे तुम तीन दिन की मोहलत दो, इस मैं दोनों का इन्तजाम कर लूँगा.

भूत० : कोई हर्ज नहीं, मैं तीन दिन की मोहलत आपको देता हूँ परन्तु अलावे एक छोटी तकलीफ मैं और आपको दूँगा.

दारोगा : कहिए, मैं आपका सब हुक्म बजा लाने को तैयार हूँ.

भूत० : अजायबघर से लगभग दो कोस के फासले पर एक तिलि कूआँ है.

दारोगा : (चौंक कर) हाँ है तो सही !

भूत० : मेरा एक दोस्त उसमें बन्द है, और मुझे पता लगा है कि उस का भेद आपको मालूम है बल्कि आपके पास कोई किताब है जिसमें वहाँ बिल्कुल हाल दर्ज है.

दारोगा : बेशक है—मगर आपको यह बात क्योंकर मालूम हुई ?

भूत० : किसी तरह भी हुई हो, मगर मैं वह किताब भी चाहता हूँ.

दारोगा : मैं खुशी से देने को तैयार हूँ बल्कि उसके विषय में और भी बातें ऐसी आपसे कह सकता हूँ कि सुन कर आपको ताज्जुब होगा.

भूत० : तो जरूर बताइए, मैं बड़े शौक से सुनूंगा !

दारोगा और भूतनाथ में धीरे-धीरे कुछ बातें होने लगीं.

सुबह की सफेदी आसमान पर अच्छी तरह फैल चुकी थी जब भूतनाथ दारोगा के मकान के बाहर निकला. इस समय वह बहुत खुश था और उसके चेहरे से मालूम होता था कि उसे कोई ऐसी अलभ्य वस्तु मिल गई है जिसके पाने की उसे कोई आशा न थी. वह लम्बे डग भरता हुआ पूरब की तरफ रवाना हुआ.

4

एक बड़े कमरे में जो ऐशोआराम के सामानों से बखूबी सजा हुआ है एक कमसिन और खूबसूरत औरत पलंग पर लेटी हुई है. उसकी निगाहें सामने की खिड़की में से होती हुई कुछ फासले पर धीरे-धीरे बहने वाली गंगा के ऊपर पड़ रही हैं जिस पर अस्त होते हुए सूर्य की अन्तिम किरणें गिर कर विचित्र ही दृश्य पैदा कर रही हैं.

जिस समय सूर्य बिल्कुल डूब गये और केवल उनकी लाली मात्र ही आसमान पर रह गई ठीक उसी समय एक छोटी-सी किश्ती गंगा के बीचोबीच बहती हुई आती दिखाई पड़ी. किश्ती पर निगाह पड़ने के साथ ही उस औरत की तबीयत खिल गई और वह खुश हो उठ बैठी, उसकी तेज निगाहें बीच का फासला तय करती हुई उस नौजवान पर पड़ने लगीं जो तेजी के साथ किश्ती को खेता हुआ उधर को ला रहा था मगर दूरी के सबब जिसकी सूरत साफ दिखाई नहीं पड़ती थी. वह पलंग पर से उतर कर खिड़की के पास आ गयी और एकटक उस ओर देखने लगी.

बात की बात में किश्ती पास आ पहुँची. एक निराली जगह देख कर खेने वाले ने डांड़ रोक किश्ती किनारे लगाई और उतर पड़ा, किश्ती बांध दी और तब इस खिड़की की तरफ घूम कर अपना रूमाल हिलाया. इस औरत ने भी जवाब में कपड़ा हिलाया जिसका इशारा समझते ही वह नौजवान खुश हो कर उस बाग की तरफ बढ़ा जिसके अन्दर यह मकान बना हुआ था.

दो-तीन सूराखों पर जो शायद इसी लिए बना लिए गए थे पैर रखते हुए नौजवान ने सहज ही में बाग की ऊँची चारदीवारी पार की और अन्दर आ पहुँचा. वह यहाँ रुका और झाड़ियों की आड़ में खड़ा होकर इधर-उधर की

आहट लेने लगा. बाग में एकदम सन्नाटा था और मकान में से भी किसी तरह की आहट नहीं मिल रही थी जिससे नौजवान का सन्देह दूर हो गया और वह अपने को पेड़ों की आड़ में छिपाता हुआ उस खिड़की की तरफ बढ़ा जहाँ वह औरत अभी तक खड़ी एकटक उसकी तरफ देख रही थी. इसको पास आता देख अपनी जगह से हटी और पलंग के पीछे से घूमती हुई एक छोटे से दरवाजे के पास पहुँची जो दक्खिन तरफ की दीवार में बना हुआ था. आँचल में बंधी ताली से उसने इसका ताला खोला. दरवाज़ा खोलने पर नीचे को उतरती हुई पतली सीढ़ियाँ दिखाई पड़ीं. औरत ने एक निगाह अपने चारों तरफ डाली और जब कमरे के बाकी सभी दरवाजों को बन्द पाया तो इतमीनान के साथ उन सीढ़ियों की राह नीचे उतर गई. एक और दरवाजा मिला जिसे उसने आहिस्ते से खोला. वह नौजवान सामने ही खड़ा था जो दरवाजा खुलते ही भीतर आ गया और औरत ने दरवाजा पुनः भीतर से बन्द कर लिया. एक-दूसरे की बाँहों में जकड़े हुए दोनों ऊपर आए और पलंग पर बैठे.

कुछ देर तक तो वे ही सब चोचले होते रहे जो बहुत दिनों के बाद मिले हुए आशिक-माशूकों में होते हैं और इसके बाद दोनों में बातचीत होने लगी.

मर्द : मुन्दर, तुमने आज बड़े बेमौके मुझे बुलाया. इस तरह दिन के वक्त यहाँ आने के ख्याल ही से मेरा कलेजा धड़कता था, कुशल हुई कि किसी ने देखा नहीं.

मुन्दर : नहीं, आने में कोई भी डर न था. आज घर के सब लोग, यहाँ तक कि नौकर-चाकर भी बाहर गए हुए हैं, केवल मैं हूँ. मेरे पिता किसी आदमी के साथ कहीं गए हैं और आधी रात के पहिले न लौटेंगे और शायद उनके आते ही मुझे आज ही किसी दूसरी जगह चले जाना पड़ेगा.

मर्द : क्यों, सो कहाँ ?

मुन्दर : सो मैं ठीक नहीं कह सकती.

मर्द : तो क्या अब मुलाकात न होगी ?

मुन्दर : कैसे बताऊँ ! अभी तो मुझे यह भी नहीं मालूम कि जाना कहाँ या कितने दिनों के लिए है, हाँ पता लगाने की कोशिश जरूर कर रही हूँ जिसमें मेरी-तुम्हारी मुलाकात में रुकावट न पड़ने पावे.

मर्द : इस तरह यकायक ऐसा क्या सबब आ पड़ा कि एकदम मकान खाली

करके सब लोग जा रहे हैं ?

मुन्दर : सो मुझे कुछ भी नहीं मालूम, खैर जो होगा देखा जायेगा. इस वक्त तो हमलोगों को इस मौके का पूरा फायदा उठा ही लेना चाहिए फिर न-जाने कब मुलाकात हो या क्या हो.

मर्द : तुम्हारे पिता कब तक लौटेंगे ?

मुन्दर : कह तो गए हैं कि आधी रात गए तक नहीं लौटेंगे. तब तक के लिए पूरी निश्चिन्ती है और किसी तरह का खतरा नहीं.

इतना कह मुन्दर बेसब्री के साथ उस मर्द की तरफ बढ़ी मगर अचानक चौंक कर रुक गई. मकान के दूसरी तरफ कहीं किसी दरवाजे के जोर से खुलने की आवाज आई और इसके बाद ही किसी आदमी के जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ने की आहट सुनाई पड़ी. आवाज कान में पड़ते ही नौजवान अलग हो गया और मुन्दर भी चिहुँक कर उठ खड़ी हुई. अन्दाज से मालूम हुआ कि वह आदमी सीढ़ियाँ तय करने के बाद अब इधर ही को आ रहा है अस्तु मुन्दर नौजवान से बोली, "तुम इधर सीढ़ियों पर जाकर खड़े हो जाओ, मैं देख लूं कि क्या मामला है." नौजवान सीढ़ियों की तरफ चला गया और इधर वाला दरवाजा बन्द कर ताली कहीं छिपाने के बाद मुन्दर ने कमरे के सदर दरवाजे की साँकल जो भीतर से बन्द थी खोल दी, इसके बाद वह रूमाल हाथ में ले पुन: पलंग पर आ लेटी और अपना सिर पकड़ कर धीरे-धीरे "आह, आह" करने लगी. इस बात को मुश्किल से दो-चार मिनट बीते होंगे कि कमरे का दरवाजा जोर से खुल गया और मुन्दर के बाप हेलासिंह ने भीतर पैर रक्खा.

इस समय हेलासिंह की कुछ अजीब हालत हो रही थी, चेहरा सूखा हुआ था, बदन पर गर्द पड़ी हुई थी, मुँह पीला पड़ गया था, और आकृति से ऐसा जान पड़ता था मानों वह किसी बड़ी दुख:दायी घटना का शिकार हुआ हो. अपने बाप की यह हालत देख मुन्दर घबड़ा गई और बोली, "बाबूजी, यह क्या मामला है ? आपकी ऐसी हालत क्यों हो रही है ?"

हेलासिंह इस तरह गद्दी पर आ गिरा मानों अपनी जान से एकदम ना-उम्मीद हो गया हो. कुछ देर तक वह एकदम चुपचाप पड़ा लम्बी साँसें लेता रहा, तब बोला, "कुछ पूछो नहीं, मेरा किया-कराया सब चौपट हो गया, और ताज्जुब नहीं कि अब मैं कुछ घन्टों का मेहमान होऊँ !"

मुन्दर : (चौंक कर) सो क्या, सो क्या ?

हेला० : सो सब पीछे बताऊँगा, पहले यह बताओ इस समय घर में कोई है?

मुन्दर : कोई भी नहीं, सब नौकर-चाकर असबाव के साथ चले गए हैं और जरूरी सामान मजदूरनियों के हाथ रवाना कर मैं अभी-अभी यहाँ आ बैठी हूं. सिरदर्द से परेशान थी और सोच रही थी कि कुछ देर तक लेटूं ताकि तबीयत को आराम मिले क्योंकि आपने आधी रात तक लौटने को कहा था. मगर मालूम होता है कि वह काम नहीं हुआ जिसके……

हेला० : काम ? अरे, वह काम तो क्या हुआ पहिले का सब किया-कराया भी चौपट हो गया. मालूम होता है अब मेरी जान नहीं बचेगी ! ओफ !

कहता हुआ हेलासिंह बेचैनी के साथ उसी गद्दी पर लेट गया, मुन्दर की जान इस समय अजीब पशोपेश में पड़ी हुई थी. वह अपने बाप से उसकी बेचैनी का पूरा सबब भी सुनना चाहती थी मगर साथ ही यह भी चाहती थी कि कोई भी भेद की या गुप्त बात उसके आशिक के कान में न पड़ जाय जो कुछ ही दूर सीढ़ियों पर खड़ा है और जरूर ही जिसके कान में यहाँ की बातचीत का एक-एक अक्षर जा रहा होगा. आखिर वह उठ कर अपने पिता के पास पहुँची और बगल में बैठ प्यार से उसके सर और बदन पर हाथ फेरती हुई धीरे-धीरे बोली, "कुछ मुझे भी तो बताइये कि क्या मामला है जो आप इस तरह बदहवास हो रहे हैं."

हेला० : (बड़ी लाचारी की मुद्रा दिखाता हुआ) क्या बताऊँ, होठों तक आकर वह प्याला गिरा चाहता है ! (एक लम्बी सांस लेकर) खैर तुम भी सुन लो.

मुन्दर और पास झुक आई और हेलासिंह ने कहा, "कम्बख्त गदाधरसिंह को हम लोगों की सब कार्रवाइयों का पता लग गया.

मुन्दर : (चौंक कर) हैं ! गदाधरसिंह को हमारा सब हाल मालूम हो गया ?

हेला० : हाँ. उस दिन हम लोगों की कमेटी में जो लोग घुस आये थे और बहुत-से कागजात तथा वह कलमदान भी उठा ले गये थे जिसमें सभा का सब हाल बन्द था. वे भूतनाथ के ही आदमी थे और वहाँ से लूटा हुआ सब सामान उन्होंने भूतनाथ ही को ले जाकर दिया. भूतनाथ ने कलमदान खोल डाला और इस तरह उस सभा का तथा मेरा सब हाल उसे मालूम हो गया.

यह बात सुन मुन्दर के होश उड़ गये और कुछ देर के लिए उसकी भी वही हालत हो गई जो हेलासिंह की थी. उसे ऐसा मालूम हुआ मानो उसकी बढ़ी हुई उम्मीदों पर पाला पड़ गया हो और उसका राजरानी या मायारानी बनने का सुख-स्वप्न अधूरे में ही टूट गया हो. कुछ देर तक तो उसको अपने बदन की सुध-बुध न रही, लेकिन आखिर उसने अपने को सम्हाला और हेलासिंह से पूछा, "यह बात आपको क्योंकर मालूम हुई, क्या दारोगा साहब का कोई आदमी आया था."

हेला० : नहीं वह आदमी जो आज सन्ध्या को मुझसे मिला और मुझे अपने साथ ले गया था खुद भूतनाथ ही था. उसने निराले में ले जाकर मुझे यह सब हाल सुनाया और कहा कि अगर तीन दिन के भीतर पचास हजार रुपया और लोहगढ़ी की ताली मैं उसे न दूंगा तो वह सब भेद राजा गोपालसिंह से कह देगा.

यह बात सुनते ही मुन्दर की घबराहट और भी बढ़ गई और वह जल्दी से कुछ पूछा ही चाहती थी कि यकायक उसे दरवाजे के पीछे छिपे हुए नौजवान का खयाल आ गया और वह रुक कर बोली, "इस जगह अंधेरा हो गया है और रोशनी का भी कोई सामान नहीं है, बेहतर हो कि हम लोग बगल वाले कमरे में चले चलें तो वहीं सब हाल खुलासा आपसे सुनूं."

हेलासिंह ने मुन्दर की बात मान ली और उसके कन्धे का सहारा लेता हुआ धीरे-धीरे चल कर बगल वाले कमरे में पहुँचा. उसे वहीं छोड़ किसी बहाने से मुन्दर पुनः अपने कमरे में पहुँची. यहाँ पहुँचते ही उसने सीढ़ी वाला दरवाजा खोला मगर वहाँ किसी की भी सूरत दिखाई न पड़ी, न जाने उसका प्रेमी वह नौजवान कब वहाँ से चला गया था. मुन्दर ने उस समय इसके लिए विशेष तरद्दुद भी न किया और नीचे का दरवाजा बन्द करने के बाद इस दरवाजे में पुनः ताला लगा, लौट कर अपने पिता के पास पहुंची जो एक पलंग पर लेटा लम्बी साँसें ले रहा था. वह उसके बगल में बैठ गई और पुनः दोनों में बातचीत होने लगी.

मुन्दर : तो भूतनाथ को सब हाल मालूम हो गया ?

हेला० : हाँ, न सिर्फ सभा और उसके साथ मेरे सम्बन्ध का ही हाल बल्कि न-जाने कैसे उसे यह भी मालूम हो गया कि मैं लक्ष्मीदेवी के बदले तुम्हारी शादी गोपालसिंह से कराने की कोशिश कर रहा हूँ.

मुन्दर : अरे ! यह बात भी उसे मालूम हो गई !

हेला० : हाँ, और अब उससे जान बचाने का सिर्फ यही रास्ता है कि जो कुछ वह माँगता है सो उसे दिया जाय और उसका मुँह बन्द किया जाय.

मुन्दर : यानी पचास हजार रुपया और लोहगढ़ी की ताली उसके हवाले की जाय ?

हेला० : हाँ, सिवाय इसके और किया ही क्या जा सकता है ?

मुन्दर : मगर इस समय यकायक इतना रुपया कहाँ से आ सकता है और लोहगढ़ी की ताली भी आप उसे क्योंकर दे सकते हैं जिसके लिए दारोगा साहब मुंह बाये बैठे हैं ?

हेला० : बेशक, मगर इसके सिवाय और मैं कर भी क्या सकता हूं ! भूतनाथ से भाग कर मैं किसी तरह बच नहीं सकता क्योंकि अगर उसने सब हाल गोपालसिंह से कह दिया तो वे मुझे कदापि जिन्दा न छोड़ेंगे, ऐसी अवस्था में भूतनाथ की बात मान लेने के सिवाय और चारा ही क्या है ?

मुन्दर : (कुछ सोच कर) क्या ऐसा नहीं हो सकता कि कुछ बहाना करके भूतनाथ से हफ्ते की मोहलत ले लें.

हेला० : (ताज्जुब से) शायद ऐसा हो सके, मगर इससे फायदा क्या होगा ?

मुन्दर : मुझे एक तरकीब सूझी है जिसका पूरा हाल मैं फिर कभी आपको बताऊँगी. फिलहाल अगर आप आठ दिन की भी मोहलत मुझे दें और इस बीच में न तो भूतनाथ को एकदम से नाराज ही कर दें और न उसकी माँग पूरा कर अपने ही को हमेशा के लिए बरवाद कर दें तो सम्भव है कि मेरी कार्रवाई चल जाय और हम लोग भूतनाथ पर जबर्दस्त पड़ सकें.

हेला० : (ताज्जुब से) आखिर वह कौन-सी कार्रवाई है, कुछ मुझे भी तो बताओ ताकि कुछ पता लगे.

मुन्दर : जरूर बताऊँगी मगर अभी नहीं, अभी बता देने से सब मामला बिगड़ जायगा. मगर इस सम्बन्ध में मैं इतना जरूर चाहती हूँ कि कुछ दिन के लिए आप मुझे लेकर किसी ऐसे निरापद स्थान में चलें जहाँ कोई भी हमारा न तो पता लगा सके और न भेद ही जान सके, बस एक हफ्ते के अन्दर मैं या तो कामयाब होकर भूतनाथ ही को अपने कब्जे में कर लूंगी और या फिर नाउम्मीद होकर आपसे यही कह दूंगी कि आप जैसे बने वैसे उस शैतान को राजी कीजिए,

मेरे किए कुछ न हो सका.

हेलासिंह ने बहुत कोशिश की मगर मुन्दर ने कुछ भी न बताया कि वह कौन-सी तर्कीब है जिसकी बदौलत वह भूतनाथ जैसे भयानक ऐयार को अपने बस में करने की आशा करती है. लाचार उसने वह जानने की कोशिश छोड़ दी और जैसा मुन्दर चाहती थी वैसा ही करने का वादा किया क्योंकि इतना तो वह बखूबी समझता था कि उसकी लड़की एक ही चांगली है और शैतानी तथा धूर्तता में बड़ों-बड़ों के कान काट सकती है, उसने जरूर कुछ सोचा होगा जो ऐसी बात कह रही है. आखिर बहुत कुछ सोच-विचार करने के बाद उसने मुन्दर की बात मान ली और कहा, "खैर जैसा तुम चाहो, मैं तैयार हूँ, मगर इतना समझ लो कि कोई ऐसी बात नहीं होनी चाहिए जिसमें भूतनाथ हमेशा के लिए हम लोगों से फिरंट हो जाय और हमारा सब किया-धरा चौपट हो जाय."

मुन्दर : नहीं नहीं, सो कदापि न होगा. मैं क्या इस बात को नहीं समझती हूँ ? मैं जो कुछ करूँगी इस सफाई और खूबसूरती से करूँगी कि भूतनाथ को हम लोगों पर किसी तरह का रत्ती भर भी शक नहीं होने पावेगा.

हेला० : अच्छी बात है. तुम कब अपनी कार्रवाई शुरू करना चाहती हो और मुझे क्या करना होगा ?

मुन्दर० : अगर मौका हो तो अभी इसी वक्त आप मुझे लेकर किसी ऐसे स्थान में चलिए जहाँ कोई हम लोगों को कोशिश करके भी पा न सके. क्या आपके ध्यान में ऐसी जगह है ?

हेला० : हाँ कई, और सबसे अच्छी तो लोहगढ़ी ही है जहाँ हम लोग जब तक चाहें रह सकते हैं और ऐसे छिप सकते हैं कि राजा गोपालसिंह तक को जल्दी पता न लगे.

मुन्दर : लोहगढ़ी का हाल तो मालूम हो चुका है.

हेला० : सिवाय महाराज गिरधरसिंह के और कोई भी ऐसा नहीं जिसे उस जगह का पूरा हाल मालूम हो, और वे यमलोक को जा चुके. अब मेरे बराबर उस जगह का हाल जानने वाला कोई भी नहीं है. फिर अगर तुम चाहोगी तो लोहगढ़ी से संलग्न बहुत-से और भी गुप्त स्थान हैं जिनमें से किसी में हम लोग छिप सकते हैं और जहाँ एक बार मौत का भी गुजर मुश्किल से होगा.

मुन्दर : अच्छी बात है तो आप वहीं चलने का प्रबन्ध कीजिए. जो कुछ

जरूरी सामान हो उसे साथ लीजिए और मुझे बताइये कि मैं कितने देर में रवाना होने के लिए तैयार हो जाऊँ क्योंकि मुझे भी कुछ इन्तजाम करना होगा.

हेला० : बस एक घण्टे में हम लोग रवाना हो जायेंगे, तुम इतने समय के भीतर तैयार हो जाओ.

इतना कह हेलासिंह उठ बैठा. उसे मुन्दर की बातें सुन बहुत कुछ ढाढ़स हो गयी थी क्योंकि उसे अपनी अकल से कहीं ज्यादा इस अपनी लड़की की धूर्तता पर भरोसा था और वह अच्छी तरह समझता था कि मुन्दर को जरूर ऐसी ही कोई भारी बात मालूम हुई होगी जिस पर वह इतना जोर दे रही है. उसने मुन्दर से फिर कुछ न कहा और सफर का इन्तजाम करने के लिए कमरे के बाहर निकल गया, मुन्दर भी किसी फिक्र में लग गयी.

ठीक एक घण्टे बाद, जब कि रात का पहिला सन्नाटा चारों तरफ फैल रहा था, एक रथ जिसमें मजबूत बैलों की जोड़ी जुती थी हेलासिंह के दरवाजे पर आकर रुका. बहलवान ने रास अटका दी और घर के भीतर घुस गया. थोड़ी देर बाद वह एक भारी गट्ठर सिर पर लादे लौटा जिसे उसने रथ के अन्दर रख दिया, पीछे हेलासिंह और मुन्दर भी आ रहे थे जिन्होंने आपस में कुछ बातें कीं और तब रथ पर सवार हो गए. रथ तेजी के साथ लोहगढ़ी की तरफ रवाना हुआ.

आधी रात जाते-जाते रथ लोहगढ़ी के पास पहुँच गया. हेलासिंह रथ से उतर पड़ा और मुन्दर भी नीचे आ गई. बहलवान ने रथ को आड़ की जगह में खड़ा कर दिया और इसके बाद हेलासिंह के हुक्म से वह गट्ठर उठाए इन दोनों के साथ हुआ. सब कोई टीले पर चढ़ने लगे और बात की बात में लोहगढ़ी की इमारत के दरवाजे पर जा पहुँचे. मामूली तौर पर हेलासिंह ने दरवाजा खोला और सबके भीतर चले आने पर पुनः बन्द कर लिया.

बीच की उस इमारत में पहुँच कर जिसमें हमारे पाठक कई बार आ चुके हैं तीनों आदमी रुक गये. हेलासिंह ने मुन्दर से पूछा, "कहो यहीं रुकना है या और भीतर चलने का विचार है ?" जवाब में मुन्दर ने कहा, "अगर कोई और स्थान इससे भी गुप्त और सुरक्षित है तो वहीं चले चलिये." हेलासिंह ने कहा, "जरूर है, मगर वहाँ चलने में काफी देर लग जायेगी." मुन्दर बोली "कोई हर्ज नहीं," जिसे सुन हेलासिंह बोला, "अच्छा तो तुम यहीं खड़ी रहो, मैं जाकर पहिले

दरवाजा खोल आऊँ." वह इमारत के अन्दर जा एक कोठरी में घुस गया और मुन्दर उस बहलवान के साथ वहीं रुकी रह गई.

कुछ ही मिनटों के बाद हेलासिंह लौट आया और बोला, "दरवाजा खुल गया अब चलना चाहिए. मगर रास्ता बहुत ही पेचीदा है, होशियारी से आना." आगे-आगे हेलासिंह उसके पीछे मुन्दर और उसके पीछे गठरी उठाये वह बहलवान रवाना हुआ और सभों को लिए हुए हेलासिंह एक तिलस्मी सुरंग में घुस गया.

इस जगह हम इस विचित्र रास्ते का हाल बताने की कोई जरूरत नहीं समझते और सिर्फ इतना ही कह देते हैं कि कितनी ही सुरंगों, दरवाजों, इमारतों और गुप्त तथा डरावने स्थानों में से होते हुए ये लोग बहुत देर तक बराबर चले गए और तब एक दूसरी सुरंग की राह बाहर निकले. अब जिस जगह ये लोग थे वह पहाड़ की कुछ ऊँचाई पर बना हुआ एक छोटा दालान था. नीचे एक सुन्दर घाटी थी और इसके चारों तरफ की पहाड़ियों पर कई सुन्दर इमारतें और बंगले नजर आ रहे थे. चन्द्रमा की चाँदनी चारों तरफ फैली हुई थी और उसकी रोशनी में यह स्थान बड़ा ही रमणीक मालूम हो रहा था. हम पाठकों को इस जगह का विशेष हाल बताने की जरूरत नहीं समझते क्योंकि यह वही तिलिस्मी घाटी है जिसमें दयाराम और प्रभाकरसिंह वगैरह रहा करते थे अथवा जिसमें मालती इस समय मौजूद है.

हेलासिंह ने उँगली से बताकर कहा, "वह देखो सामने की पहाड़ी पर जो बंगला है और जिस पर कई बन्दर बैठे हुए दिखाई पड़ते हैं वहीं हमको जाना है, मगर इस तरह यह पहाड़ी उतर कर वह दूसरी पुनः चढ़ने में यह भारी गठरी लेकर जाना बड़ा कठिन होगा. यहाँ से एक सुरंग की राह भीतर वहाँ तक जाने का रास्ता है जो इस समय अन्दर से बन्द है. अगर तुम वहाँ जाकर जो तर्कीब मैं बताता हूँ उससे वह रास्ता खोल दो तो हम लोग सहज ही में वहाँ तक पहुँच जायेंगे."

मुन्दर० : तो आप भी वहाँ क्यों नहीं चले चलते ! नई और अनजान जगह है, दूसरे मुझसे शायद वह रास्ता न खुले.

हेला० : नहीं, जरूर खुल जायगा, मैं तुम्हें पूरा भेद बताए देता हूँ. मैं जब

तक इधर का मुहाना खोलूँगा तब तक तुम वहाँ पहुँच जाओगी और काम जल्द हो जायगा.

मुन्दर ने जवाब में कहा, "बहुत अच्छा, बताइये." हेलासिंह ने उस गुप्त रास्ते को खोलने का सब हाल बखूबी समझा दिया और जब वह उस तरफ रवाना हो गई तो आप उस आदमी के साथ एक दूसरी सुरंग में घुस गया जिसका रास्ता उसने किसी गुप्त तर्कीब से खोला था.

पाठक अब जान गये होंगे कि मालती ने घाटी में बन्दरों वाले बंगले पर जिस औरत को देखा था वह यही मुन्दर थी और चबूतरे के नीचे उस गठरी को छिपाने वाले ये ही हेलासिंह और उसका नौकर थे.

5

मालती जब होश में आई उसने अपने को एक विचित्र स्थान में पाया. चारों तरफ से ऊँची-ऊँची चहारदीवारी से घिरा हुआ एक छोटा-सा बाग था जिसके बीचो-बीच में काले पत्थर से बनी एक गोल बारहदरी थी जो मामूली न थी बल्कि लोहे के एक मोटे खम्भे के ऊपर बनी हुई और जमीन से करीब बीस हाथ ऊँची थी. बारहदरी की सतह लाल रंग के पत्थरों की बनी हुई थी जिसमें जगह-जगह सफेद पत्थर के कई कमल बने हुए थे जो सतह के बराबर न थे बल्कि उभड़े हुए थे और जिनके सबब से बारहदरी की जमीन इस लायक न रह गई थी कि कोई इस पर आराम से लेट सके क्योंकि ये कमल जमीन को ऊबड़-खाबड़ बनाये हुए थे.

बहुत देर तक मालती सोचती रही कि वहाँ पर क्यों और कैसे आ गई! उसके सिर में हलका-हलका दर्द हो रहा था जिसका सबब वह गहरी बेहोशी थी जिसमें कई घण्टे तक उसे रहना पड़ा था और इसी कारण उसकी विचार-शक्ति कमजोर हो रही थी, फिर भी धीरे-धीरे उसे पिछली बातें ख्याल आने लगीं और उसे याद आ गया कि वह इन्द्रदेव से बातें कर रही थी जब कहीं से आकर एक गोला उसके सामने फटा था और उसमें से बड़ा ही कड़ुआ धूआँ निकला था जिसकी बदौलत वह भाग कर सीढ़ी उतरते-उतरते ही बेहोश हो गई थी. उसके बाद क्या हुआ इसकी उसे कोई खबर न थी और अब होश में आकर वह अपने को यहाँ पा रही थी.

लोग बड़े-बड़े पेड़ों के नीचे खाट डाले लेटे हुए बिना सूर्यास्त का समय आए उठने की इच्छा नहीं कर रहे हैं जब तक कि उनकी जरूरत उन्हें ऐसा करने पर मजबूर न करे.

परन्तु अपने पाठकों को लेकर हम जिस स्थान पर चल रहे हैं वहाँ ऐसे समय में भी गर्मी और लू की तकलीफ बिल्कुल नहीं है और तपिश तो एकदम नहीं के बराबर है.

एक लम्बे-चौड़े बाग की हवा, जिसके ओर-छोर का कुछ ठिकाना नहीं लग रहा है, चारों तरफ बने और छूटते हुए सैंकड़ों ही फौवारों की तरी की बदौलत इस गर्मी के वक्त भी काफी ठण्डी हो रही है और घने तथा गुँजान पेड़ों की बदौलत वहाँ धूप का भी जोर बिल्कुल नहीं होता है. इस बाग के बीचो-बीच में संगमर्मर की बारहदरी है जिसकी कुर्सी जमीन से एक पुरसा ऊँची है और इस समय उसके ऊपर पहुँचने वाली पतली सीढ़ियों पर से न-जाने कहाँ से आता हुआ बहुत-सा पानी बहकर नीचे पहुँच उस नाले में मिल रहा है जिसका पानी छोटी-बड़ी सैकड़ों नालियों में से होता हुआ उस समूचे बाग में फैला हुआ है और इस गर्मी के मौसिस में भी बाग को एकदम हराभरा और तर बनाए हुए है. इस बारहदरी की छत पर भी चारों तरफ कई फव्वारे बने हुए हैं जिनकी चक्करदार टूटियों से निकलता हुआ पानी चारों तरफ बहुत ही हलकी बूंदों में फैल कर नीचे को गिरता हुआ खासा बरसात का मजा दे रहा है और साथ ही उस बारहदरी को भी इतना ठण्डा बनाए हुए है कि घोर गर्मी का मौसम और तीन पहर का समय होते हुए भी वहाँ एकदम तरी है. धूप की किरणें जब पानी से तर इस बारहदरी की चमकदार सुफेद दीवार, सीढ़ियों और खम्भों पर पड़ती हैं तो यह बारहदरी शीशे की तरह चमक उठती है और बड़ी ही सुन्दर मालूम होती है.

धूप, लू और गर्द का मारा एक नौजवान मुसाफिर जब इस बाग में पहुँचा तो यकायक चौंक कर इस ताज्जुब में पड़ गया कि वह कहीं स्वर्ग में तो नहीं आ पहुँचा है. बाग की चहारदीवारी डाँकते ही यह एक ऐसा सुहावना दृश्य और बदला हुआ मौसिम उसकी आँखों के सामने पड़ा कि वह अपनी सब थकावट और परेशानी भूल गया और एक गुंजान पेड़ के नीचे खड़ा हो एकटक उस बारहदरी की तरफ देखने लगा जो इस समय एक खिलौने की तरह उसके सामने नजर आ रही थी और जिस पर से गिरती हुई पानी की बौछारें और उनके ऊपर

पड़ने वाली धूप की किरणें तरह-तरह के रंगों वाले पचासों इन्द्र-धनुष पैदा कर उसे देवताओं का आवास या परियों का क्रीड़ास्थल-सा बना रही थीं.

बारहदरी की शोभा देखता हुआ वह नौजवान यकायक चिहुँक पड़ा और तब बड़े गौर से कुछ देखने लगा. अब हमने भी देखा कि उसकी निगाह एक हसीन नाज़नीन पर पड़ रही है जो उस बारहदरी के पीछे की तरफ से निकल कर इसी तरफ को आ रही थी. इसी समय नौजवान के मुँह से निकला, "वही तो है." तब उसने अपने को पेड़ों की झुरमुट के अन्दर और भी अच्छी तरह छिपा लिया पर अपनी निगाह उस पर कायम रक्खी.

उस औरत के पीछे-पीछे एक हिरन का बच्चा भी नजर आया जो उसके साथ बहुत हिला-मिला हुआ था. वह औरत एक गेंद के साथ खेलती हुई बारहदरी में इधर-उधर घूमने लगी और वह हिरन का बच्चा भी उसके पीछे-पीछे दौड़ने और किलोल करने लगा.

कभी गेंद को जमीन पर पटक कर उछालती कभी हवा में उछाल कर लोकती, कभी जमीन पर ढुलका कर उसके पीछे-पीछे हिरन के साथ-साथ दौड़ती, या कभी हिरन को उसके पीछे दौड़ाती हुई वह औरत इधर से उधर घूमने लगी. कभी-कभी वह कहीं रुक जाती, किसी फूल को तोड़ती, सूँघती या जूड़े अथवा बालों में खोंसतीं, कभी किसी फुहारे की टूटी से निकल कर मेंह की तरह गिरने वाले पानी से खेलती, कभी मुलायम घास नोच कर अपने हिरन को खिलाती या कभी संगमर्मर के उन बहुत-से चबूतरों में से जो मुनासिब जगहों में बने हुए थे किसी एक पर बैठ उस हिरन से विनोद करती या उसका तकिया बना अधलेटी-सी हो किसी गौर में डूबती हुई वह औरत इस समय इस नौजवान की निगाहों में बिल्कुल एक परी-सी जान पड़ती थी. उसकी पतली साड़ी जिसको वह बड़ी लापरवाही के साथ अपने बदन पर डाले हुए थी कभी हवा के झोंकों से इधर-उधर उड़ जाया करती थी या कभी-कभी पानी से तर होकर उसके बदन के साथ इस तरह से चिमट जाया करती थी कि मन को बेतहाशा खींच लेने वाला बदन का गुलाबी रंग फट पड़ता और अंग-प्रत्यंग झलकने लग जाते थे. पेड़ों के अन्दर छिपे हुए इस नौजवान का मन क्षण-क्षण भर में हाथ से निकला जा रहा था और वह बड़ी मुश्किल से अपने को सम्भाल रहा था.

यकायक कुछ देख वह हिरन का बच्चा चौंका और दौड़ कर उस औरत के

उन्होंने न-जाने क्या किया था कि सब बन्दर एक विचित्र रीति से कवायद करने लगे थे, वह क्या बात थी !

राम० : (हँस कर) मैं समझ रहा था कि यही बात तुम पूछोगे. वह कोई खास या विचित्र बात नहीं बल्कि यहाँ रहने वालों का मन बहलाने के लिए मजाक के तौर पर कारीगरों ने बना दी है. मैं उसकी भी तर्कीब अभी तुमको बताए देता हूँ पर इसके पहिले जब जिक्र आ ही गया है तो एक बात और भी कह दूं जिसका पता शायद तुमको नहीं होगा और जिसको जानकर मुझे अफसोस हुआ क्योंकि उस मौके पर हम लोगों से एक मूंडी गलती हो गई जिसका नतीजा भयानक हो सकता था.

श्याम० : (ताज्जुब से) सो क्या ?

राम० : जिन आदमियों को हमने हेलासिंह और मुन्दर समझ कर उन पर हमला किया था वे वास्तव में इन्द्रदेव और मालती थे.

श्याम० : (चौंक कर) हैं, इन्द्रदेव और मालती!

राम० : हाँ.

श्याम० : ओ हो, तब तो हम लोगों से भारी भूल हो गई. (कुछ सोच कर) अवश्य वे लोग हेलासिंह और मुन्दर न होंगे क्योंकि ये दोनों उस तरह आपके हाथ के बाहर न हो सकते थे जैसा कि वे हो गये और इन्द्रदेव के सिवाय और किसी की मजाल भी न थी कि हम लोगों को इस तरह परेशान करता. आप उस वक्त बड़े मौके से पहुँचे थे नहीं तो जब मैंने अपने को कोठरी में बन्द होते देखा तो यही समझा कि बस हुआ, तिलिस्म के चक्कर में फँस गया और अब जिन्दगी गई. मगर आपको यह बात किस तरह मालूम हुई !

राम० : तुम लोगों को छुड़ा कर रवाना कर देने के बाद जब मैंने आलमारी में बेहोश मालती और लोहगढ़ी की चाभी वाला डिब्बा पाया तब. उसी समय मैंने अपना रुख बदल दिया और दूसरे ढंग से काम करने लगा.

श्याम० : ठीक है, अच्छा अब यह बताइये कि इन बन्दरों को नचाने की तर्कीब क्या है ?

रामचन्द्र श्यामसुन्दर को लिए हुए छत के एक कोने की तरफ गया जहाँ एक अकेला बन्दर जो औरों से कुछ बड़ा था बैठाया हुआ था. इसके पेट के पास एक छोटा-सा मुट्ठा लगा हुआ था जिसको रामचन्द्र ने घुमा दिया और अलग

जा खड़ा हुआ. मुट्ठा घुमाते ही वह बन्दर उठ खड़ा हुआ और बाकी के सब बन्दरों के बदन में भी हरकत होने लगी. कुछ देर तक सब इधर-उधर उछलते-कूदते रहे और तब उस बड़े बन्दर ने उन सभों से कुछ इस ढंग से कवायद कराना शुरू किया कि देखते ही ये दोनों हँस पड़े. कुछ देर तक यह तमाशा देखने के बाद इसे बन्द कर वे दोनों नीचे उतरे और बाकी आदमियों को साथ लेने की नीयत से उस कोठरी में पहुँचे जहाँ उन लोगों को छोड़ गए थे, पर ताज्जुब की बात थी कि वहाँ उन चारों में एक भी आदमी न था. हाँ, वह सब सामान जो वे लोग उठा लाये थे वहीं जमीन पर जरूर पड़ा हुआ था. यह समझ कर कि शायद वे लोग बाहर कहीं निकल गए हों रामचन्द्र ने कमरे की खिड़की खोल उन लोगों को कई आवाजें दीं पर उनका कहीं पता न लगा. चारों तरफ के कमरे और कोठरियों में तलाश किया और तब बाहर निकल कर घाटी के चारों तरफ घूम-घूम कर भी खोजा पर कहीं भी ये लोग नजर न आए आखिर दोनों ताज्जुब करते हुए मैदान में खड़े हो गए और एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे.

इतना पढ़कर हमारे पाठक यह तो समझ ही गए होंगे कि ऊपर तेरहवें भाग के छठवें और नवें बयान में जो कुछ ताज्जुब की बातें हम लिख आए हैं वह इन्हीं रामचन्द्र, श्यामसुन्दर और गोपाल आदि की करतूत थी और इन्द्रदेव ने जिस औरत को छत पर देखा वह नन्हों थी. पर इस बात का अभी पता न लगा कि यह रामचन्द्र वास्तव में कौन है तथा वह श्यामसुन्दर, गोपाल और बाकी के लोग किसके नौकर या शागिर्द हैं. खैर कभी-न-कभी इसका पता लग ही जायगा. अब हम इनको इसी जगह छोड़ते हैं और पाठकों को एक दूसरे ही अनूठे स्थान की सैर कराते हैं.

7

दिन लगभग तीन पहर से ऊपर ढल चुका है. जंगल, मैदान, पहाड़ और खेत धूप और लू से झुलस रहे हैं और सड़कों पर संध्या के पहिले ही अपना सफर खतम करने की जरूरत रखने वाले मुसाफिरों के सिवाय और कोई चलता-फिरता नजर नहीं आता. शहरों के लोग तरी और ठंडक की खोज में तंग गलियों में बंद चबूतरों या ऊँचे और अंधेरे मकानों की निचली मंजिलों में पड़े हैं और देहात के

तो मैं ही उस राह से बाहर जा सकती हूँ और न अब आपको ही वह राह खुली हुई मिलेगी.

नौज० : (आश्चर्य से) सो क्यों ?

औरत : सो मैं अच्छी तरह जानती हूँ. आज के पहिले भी कई दफे कई नौजवान यहाँ तक पहुँचे और उन्होंने मुझे यहाँ से निकाल ले जाने का दावा किया पर सभी नाकामयाब हुए. हर मर्तबे वह राह जिससे वे यहाँ आए थे उन्हें बन्द मिली जिससे मैं तो क्या वे खुद भी बाहर निकल न सके और आज तक इसी जगह कहीं बन्द अपनी किस्मत को झँख रहे होंगे, वही हालत आपकी भी होगी और यही जान कर मैं कहती हूँ कि अब न तो आप मुझे छुड़ा सकते हैं और न खुद ही इस जगह के बाहर जा सकते हैं.

नौज० : (ताज्जुब से) क्या आज के पहिले भी कई आदमी इस जगह आ चुके हैं ?

औरत : जी हाँ.

नौज० : (सिर हिला कर) नहीं, सो कभी नहीं हो सकता, यह तिलिस्म है और इसके अन्दर किसी का आना बहुत ही कठिन है.

औरत : आपका कहना ठीक हो सकता है मगर मैं भी जो कह रही हूँ वह गलत नहीं है.

नौज० : लेकिन मुझे विश्वास नहीं होता.

औरत : तब लाचारी है, मैं अपनी बात के सबूत में सिवाय इसके और क्या कह सकती हूँ कि आप अगर चाहें तो इस बात की जाँच कर लीजिए कि जिस राह से आप यहाँ आए वह अभी तक खुली है या बन्द हो गई. आप खुद ही जान आएँगे कि मेरा कहना कहाँ तक सही है.

नौज० : खैर अगर वह राह बन्द भी हो गई होगी तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि उसे फिर खोल लूँगा और अगर किसी कारण से वह नहीं ही खुले तो मुझे और भी कितने ही रास्तों का हाल मालूम है जिनमें से किसी को भी खोल कर मैं तुम्हें इस जगह से बाहर ले जा सकता हूँ.

औरत : आपकी बात सुनकर मुझे ताज्जुब होता है. इस तिलिस्म के रास्तों के बारे में इतनी जानकारी रखने वाला अगर कोई हो सकता है तो सिर्फ एक आदमी और केवल वही मुझे यहाँ से छुड़ा भी सकता है. अगर आप ही वह आदमी

हैं तब तो आपका कहना सही है नहीं तो मैं यही कहूँगी कि आप या तो गलत कह रहे हैं और या मुझे धोखा देना चाहते हैं.

नौज० : वह कौन आदमी है ?

औरत : जमानिया के कुंअर गोपालसिंह !

नौज० : (ताज्जुब करता हुआ) तुम क्योंकर जानती हो कि वह तुम्हें यहां से छुड़ा सकते हैं ?

औरत : यह मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ और इसी से पूरे विश्वास के साथ कहती हूँ कि अगर आप कुंअर गोपालसिंह नहीं हैं तो फिर अपने को भी आज से मेरी ही तरह इस तिलिस्म का कैदी समझिए और फिर बाहर की दुनिया पुनः देखने की आशा को हमेशा के लिए तिलांजुली दे दीजिए.

नौज० : (कुछ देर तक चुपचाप कुछ सोचने के बाद) मैं गोपालसिंह ही हूं.

औरत : (सिर हिलाकर) मगर मुझे विश्वास नहीं होता.

नौज० : तब तो तुम्हारी तरह मैं भी कहूँगा कि लाचारी है.

औरत : खैर अगर आप सचमुच कुंअर गोपालसिंह हैं तो इसका सबूत तो बहुत जल्द मिल सकता है, सिवाय उनके और कोई इस बारहदरी के ऊपर नहीं आ सकेगा, अगर आप वे ही हैं तो सीढ़ियाँ चढ़कर मेरे पास आइए.

नौज० : यह क्या मुश्किल है, मैं तो यह करने वाला ही था पर तुम्हारी बातों ने रोक लिया था, मैं अभी आया.

इतना कह उस नौजवान ने बारहदरी की सीढ़ियों पर पैर रक्खा और ऊपर चढ़ने लगा, पर इस काम को जितना सहज उसने समझा हुआ था वैसा न पाया. हम ऊपर लिख आए हैं कि इस बारहदरी की सीढ़ियों पर से भी ऊपर कहीं से बहता हुआ पानी आ रहा था जो नीचे के नाले में मिल जाता था. जैसे ही नौजवान ने पहिली सीढ़ी पर पैर रक्खा वैसे ही उस पानी का जोर बढ़ गया, दूसरी सीढ़ी पर पैर रखते ही जोर और बढ़ा. तीसरी पर जाने से और भी तेजी आई, मगर उस नौजवान ने इसका कुछ खयाल न किया और बराबर ऊपर को चढ़ता ही गया. परन्तु ज्यों-ज्यों वह ऊपर उठता जाता था त्यों-त्यों पानी का वेग बढ़ता जाता था यहाँ तक कि ऊपर से तीन-चार सीढ़ियाँ जब रह गईं तो पानी इतनी जोर से आने लगा कि मालूम होता था मानों एक नदी बहती हुई चली आ रही है जिसके जोर के सामने पैर टिकाना कठिन था. उस नौजवान को यह देख ताज्जुब

गोद में आकर छिप गया जिसने उसे उठा कर अपनी छाती से भरजोर दबा लिया और तब ताज्जुब के साथ चारों तरफ देखते हुए यह जानने की कोशिश करने लगी कि किस चीज को देखकर वह डरा है. मालूम होता है कि अपने मन की बेबसी के कारण वह नौजवान अपने छिपने की जगह से कुछ बाहर निकल पड़ा था क्योंकि सब तरफ से घूमती-फिरती आकर उस औरत की निगाह उसी ओर को रुकी जिधर वह था और वहाँ एक आदमी को छिपा देख उसके मुँह से ताज्जुब और डर की एक आवाज निकल पड़ी. जिस संगमर्मर के चबूतरे के सहारे उठंगी हुई वह पड़ी थी उसका सहारा उसने छोड़ दिया और उठ खड़ी हुई, तब एक निगाह दुबारा उस तरफ डाल घूम कर फुर्ती से चलती हुई उस बारहदरी की तरफ बढ़ी.

नौजवान अपनी गलती समझ गया. अब छिपना फिजूल था. वह पेड़ों की आड़ से बाहर निकल आया और खुद धीरे-धीरे उसी बारहदरी की तरफ बढ़ा. उस औरत ने जो घूम-घूमकर अपने पीछे देखती भी जाती थी उसको पीछा करता पा अपनी चाल तेज कर दी और दौड़ती हुई बारहदरी की सीढ़ियाँ चढ़ उसके ऊपर पहुँच गई जहाँ से वह डर और घबराहट मिली निगाहों से उस नौजवान को देखने लगी जो उसी तरफ को आ रहा था. जब वह पास आने पर भी रुका नहीं बल्कि उसका इरादा सीढ़ियाँ तय कर बारहदरी के ऊपर पहुँचने का मालूम हुआ तो यह सोचकर कि शायद वह ऊपर आ उसको किसी तरह की तकलीफ पहुँचावे उस औरत के मुँह से डर की चीख निकल गई मगर उसी समय उस नौजवान ने कहा, "डरो मत मैं तुम्हारा दुश्मन नहीं हूँ बल्कि तुम्हारी मदद करने के लिए यहाँ आया हूँ."

इतना सुनते ही वह औरत रुक गई और गौर से नौजवान की सूरत देखने लगी मगर मुँह से कुछ न बोली. कुछ ठहरकर नौजवान ने फिर कहा, "तुम्हारे ही लिए बहुत दूर से इस धूप, लू, गर्मी में सफर करता हुआ मैं आ रहा हूँ. तुम डरो नहीं बल्कि अपना हाल मुझसे कहो, मैं सब तरह से तुम्हारी मदद करूँगा."

कुछ डरते-डरते औरत ने कहा, "मैं कैसे समझूँ कि जो कुछ आप कह रहे हैं वह सही है और आपके हाथों से मुझे तकलीफ नहीं मिलेगी? आप कौन हैं, आपका नाम क्या है, आप कहाँ से आ रहे है तथा इस तिलिस्म के अन्दर आप क्योंकर आ पहुंचे?"

नौजवान ने जवाब दिया, "वह सब कुछ मैं बताऊँगा पर पहिले मैं तुम्हारा हाल सुन लेना चाहता हूँ."

एक लम्बी साँस लेकर उस औरत ने कहा, "मुझ बेबस दुखिया का हाल ही क्या सिवाय इसके कि मुद्दत से इस जगह बन्द हूँ और तकलीफें उठा रही हूँ."

नौज० : फिर भी अपना और अपने माता-पिता का नाम, रहने का पता ठिकाना, और किस तरह इस जगह आ फँसी यह सब तो बता ही सकती हो.

औरत : जरूर, मगर इसको बताने से भी फायदा क्या होगा ?

नौज० : मैं कह तो चुका कि तुम्हारी मदद करूँगा और तुम्हें इस जगह से छुड़ाऊँगा.

औरत : अगर वास्तव में यही इच्छा है तो मेरा नाम-पता-परिचय जानने की जरूरत ? मैं चाहे कोई भी होऊँ या किसी की भी लड़की होऊँ !

नौज० : बता देने से क्या कोई हर्ज होगा ?

औरत : जब आप मेरी मदद करना ही चाहते हैं तो सिर्फ एक बेकस, गरीब दुखिया समझ कर कीजिए.

नौज० : खैर अगर तुम नहीं ही बताना चाहती हो तो मैं उसके लिए जिद्द भी नहीं करूँगा. मैं तुम्हें छुड़ाकर जहाँ तुम कहोगी पहुँचा दूंगा और तुमसे इस संबंध में कुछ भी नहीं पूछूंगा, मगर मेरी मदद के लिए इतना तो तुमको बताना होगा कि तुम इस तिलिस्म में जहाँ अनजान का पहुँचना बड़ा ही कठिन है कैसे गिरफ्तार हो गईं या किस राह से यहाँ पहुँचीं ? यह जान लेने से मुझे तुम्हारे छुड़ाने में विशेष कष्ट नहीं करना पड़ेगा.

औरत : अगर मुझे यह विश्वास हो जाय कि आप मुझे यहाँ से छुड़ा लेने की सामर्थ्य रखते हैं तो जरूर यह सब हाल आपको बताऊँगी, मगर यह उतना सहज काम नहीं है जितना शायद आप समझे हुए हैं क्योंकि अगर ऐसा होता तो आज के कहीं पहिले मैं इस कैदखाने से निकल गई होती.

नौज० : अगर तुम्हारी खुद इस जगह रहने की इच्छा न हो जिसे तुम कैदखाना कहती हो पर जो मुझे स्वर्ग का टुकड़ा नजर आ रही है, तो कम-से-कम मुझे इसमें कोई तरद्दुद दिखाई नहीं पड़ता. जिस राह से मैं आया हूँ वह अभी तक खुली है और मेरे साथ-साथ तुम भी बखूबी उसी तरफ निकल जा सकती हो.

औरत : (लाचारी की मुद्रा से सिर हिलाकर) नहीं, सो नहीं हो सकता. न

चबूतरे से उठकर वह नौजवान फिर उन्हीं सीढ़ियों के पास पहुंचा और बोला, "मुझे तुम्हारे पास तक पहुँचने की तरकीब मालूम हो गई!"

उस औरत ने मुस्कुराकर कहा, "मैं यह देखने के लिए उत्सुक हूँ कि आप का कहना कहाँ तक सही है!" इतना कह उसने लापरवाही के साथ एक अंगड़ाई ली और तब अपनी जगह से उठ खड़ी हुई. नौजवान उस जगह से हटकर बारहदरी के पीछे की तरफ चला और वह औरत भी ऊपर घूमती हुई उसे अपनी निगाहों में रक्खे रही.

हम ऊपर कह आए हैं कि इस बारहदरी की कुर्सी जमीन से करीब पुर्सा-भर ऊँची थी और उस पर जाने के लिए एक तरफ पतली सीढ़ियाँ बनी हुई थीं. जब नौजवान उस बारहदरी के ठीक पीछे अर्थात् सीढ़ियों की दूसरी तरफ वाले हिस्से में पहुँचा तो रुक गया और गौर से उस बारहदरी के तरफ देखने लगा. एक पुर्से की ऊँचाई पर जाकर एक छजली उस बाहरदरी के खम्भों की जड़ से लगभग एक बालिश्त नीचे-नीचे चारों तरफ घूम गई थी और इस समय उसी की तरफ उठी हुई नौजवान की आँखें कुछ ढूंढ़ रही थीं तथा आखिर उन्होंने उस चीज को खोज ही निकाला जिसकी तलाश में थीं. वह एक आले का निशान था जो संगमर्मर की सुफेद दीवार में बहुत ही हल्का दिखाई पड़ रहा था. नौजवान उसे देखते ही उसके पास चला गया और उसके नीचे पहुँच दीवार के ऊपर अपना हाथ फेरने लगा. संगमर्मर की दीवार साफ चिकनी सतह पर एक जगह से कुछ उभरी हुई थी जो केवल आँख से देखने से जान न पड़ती थी पर हाथ से टटोलने से उसका पता लगता था. नौजवान ने गौर करके मालूम किया कि एक पत्थर का छोटा तिकोना टुकड़ा कुछ उभरा हुआ है. उसने उसको जोर से दबा दिया और वह करीब दो अंगुल के भीतर धँस गया. इसके साथ ही उस जगह के ऊपर बना हुआ जो आले का निशान था उसका भीतरी हिस्सा आगे की तरफ झूल गया और वहाँ पर डेढ़ हाथ ऊँची और करीब दो हाथ चौड़ी एक सुरंग भी दिखाई पड़ने लगी. इतना कर वह नौजवान उस तरफ से हटा और पुनः बारहदरी के सामने उसकी सीढियों के पास जा पहुँचा. वह औरत भी जो यह देखने के लिए कि यह किधर जाता या क्या करता है उसके साथ-साथ ऊपर ही ऊपर घूम रही थी सीढी के पास पहुंची और उसको वहाँ रुक कर ऊपर की तरफ देखते पा बोली, "यह आपने क्या किया और इसका नतीजा क्या निकलेगा?" नौजवान ने जवाब दिया, "इसका फल यह होगा

कि जो पानी पहिले सीढ़ी की राह गिरकर मुझे ऊपर पहुँचने में रुकावट डालता था वह अब नाली की राह से अलग बाहर जा गिरेगा. मैं अगर चाहूँ तो पानी के इस बहाव को एकदम से रोक भी सकता हूँ पर उसमें कुछ देर लगेगी."

इतना कह उस नौजवान ने सीढ़ी पर पैर रक्खा और ऊपर चढ़ने लगा. उस औरत ने आश्चर्य के साथ देखा कि अब सीढ़ी से गिरने वाले पानी की तेजी बढ़ नहीं रही है बल्कि पहले से भी कम हो गई है, साथ ही बारहदरी के पीछे की तरफ से पानी के गिरने की आवाज आने लगी है. यह देख वह पीछे की तरफ घूमी और वहाँ जाकर देखते ही उसे मालूम हो गया कि जो नाली नौजवान ने खोली थी उसकी राह बड़े जोर से पानी गिर रहा है. कुछ सायत तक वह इस विचित्र बात को देखती रही और तब सीढ़ी की तरफ लौटने के लिए घूमी पर उस नौजवान को अपने पीछे ही खड़ा पाया. वह उसे देखते ही यह कहती हुई उसके पैरों पर गिर पड़ी, "बेशक आप कुंअर साहब के सिवाय और कोई नहीं हैं !" और उसकी आँखों से बेहिसाब आँसू गिरकर उस नौजवान के पैर भिगोने लगे.

राजा गोपालसिंह ने, क्योंकि यह नौजवान वास्तव में वे ही थे, उस औरत को उठाया और दम-दिलासा देकर शान्त किया, तब इसके बाद बोले, "अब तो तुम्हें यह भी विश्वास हो गया होगा कि मैं तुम्हारा दुश्मन नहीं हूँ और साथ ही तुम्हें यहाँ से छुड़ा ले जाने की सामर्थ्य भी रखता हूँ, अस्तु अब तुम बेखटके अपना हाल मुझे सुना सकती हो." उसने जवाब दिया, "बेशक मैं अब सब हाल बेखटके आपको सुना सकती हूँ, मगर वह बहुत लम्बा-चौड़ा किस्सा है और साथ ही कोई सुखद कहानी भी नहीं है. इसलिए अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं इस समय बहुत थोड़े में अपनी कथा सुना दूँ, फिर कभी मौका होने पर खुलासा सुना दूँगी. दूसरे इस बारहदरी के फव्वारों के कारण आपका बदन और कपड़े भी गीले हो रहे हैं, ज्यादा देर तक यहाँ रहने से शायद आपके दुश्मनों की तबीयत कुछ..."

गोपालसिंह ने हँसकर कहा, "नहीं, इस बात का कोई अन्देशा तुम न करो, इस गर्मी, धूप और लू में यह बारहदरी और यहाँ के फव्वारे स्वर्ग-तुल्य मालूम हो रहे हैं, फिर भी मैं देर तक यहाँ रहना पसन्द नहीं करता क्योंकि यह आखिर तो तिलिस्म है जहाँ कदम-कदम पर खतरा है. तुम अपना नाम बताओ और यह

हुआ और कुछ अन्देशा भी मालूम हुआ और वह रुक गया. ऊपर की तरफ वह औरत खड़ी गौर, आशंका, आशा और कौतूहल मिले भाव से देख रही थी कि अब क्या होता है. नौजवान को रुकता पा उसके चेहरे से निराशा की एक झलक निकल पड़ी जिसे नौजवान ने भी लक्ष्य किया और तब हिम्मत कर उसने पुन: एक सीढ़ी पर पैर रक्खा पर वह पैर रखना गजब हो गया. बड़े ही जोर से पानी का एक झोंका नौजवान की तरफ आया और अगर वह तेजी के साथ दो-तीन सीढियाँ नीचे न उतर गया होता तो इसमें शक नहीं कि वह पानी के बहाव के साथ-साथ लुढ़कता-पुढ़कता नीचे आ गिरता और अपने हाथ-पाँव तुड़वा डालता, मगर उसके नीचे आने के साथ ही पानी की तेजी भी कम पड़ गई और नौजवान कुछ सोचता हुआ और भी नीचे उतर गया तो और भी कम होकर करीब-करीब वैसी ही हो गई जैसी कि शुरू में थी. वह सीढ़ियों से हटकर खड़ा हो गया और ताज्जुब के साथ ऊपर की तरफ देखने लगा.

औरत : कहिए अब आपको विश्वास हुआ कि जो कुछ मैं कहती थी वह सही था ?

नौज० : क्या जब कोई ऊपर आना चाहता है तब-तब ऐसा ही होता है ?

औरत : मेरे सिवा जब-जब कोई दूसरा आना चाहता है तब ऐसा ही होता है.

नौज० : मगर तुम बेखटके जब चाहे आ-जा सकती हो ?

औरत : हाँ.

नौज० : अच्छा तो तुम ही नीचे आओ.

औरत : इसके लिए क्षमा करें, जब तक मैं आपका ठीक-ठीक परिचय न पा जाऊँ ऐसा नहीं कर सकती, न-जाने आप कौन हैं और मेरे साथ किस तरह का बर्ताव करें.

नौज० : मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि किसी तरह की चालबाजी तुम्हारे साथ न करूँगा और तुम्हें यहाँ से निकाल कर जहाँ कहोगी पहुँचा दूंगा.

औरत : पहिले जब आपने यह बात कही थी तो मुझे कुछ थोड़ा-बहुत विश्वास हो भी सकता था कि आप सही कहते होंगे पर अब अपनी आँखों से आपकी अभी वाली हालत देखकर मैं भला क्योंकर मान सकती हूँ कि आप मुझे इस तिलिस्म से छुड़ा ले जाने की सामर्थ्य रखते होंगे. जब आप एक मामूली-सी तिलिस्मी कार-

वाई से घबरा कर लौट गए तो यह किस बूते पर कहते हैं कि मुझे छुड़ा लेंगे? मैंने आपसे कहा न कि सिवाय कुँअर गोपालसिंह के और कोई भी मुझे इस जगह के बाहर निकाल नहीं सकता.

नौज० : मगर मैंने भी तो कहा न कि मैं ही गोपालसिंह हूँ.

औरत : (सिर हिलाकर) कदापि नहीं, अगर आप कुँअर साहब होते तो इस तरह सीढ़ियों पर से ही वापस न लौट जाते बल्कि मुझे साथ लेकर नीचे उतरते.

नौज० : क्या तुम उन्हें पहिचानती हो ?

औरत : नहीं.

नौज० : तब उन्हें जान किस तरह सकोगी ?

औरत : उनके करतब से ! अगर आप कहते हैं कि आप वे ही हैं तो इसका सबूत मुझे दीजिए और यहाँ ऊपर तक आकर दिखाइए कि आप कुछ कुदरत रखते हैं तथा वास्तव में कुँअर साहब ही हैं, नहीं तो मैं यही समझूँगी कि आप कोई धूर्त ऐयार हैं और मुझे धोखे में डालकर अपना कोई मतलब सिद्ध करना चाहते हैं.

नौज० : (तैश में आकर) अच्छी बात है, तो ऐसी हालत में जरूरी हो गया कि मैं ऊपर आकर ही तुम्हें बताऊँ कि मैं कौन हूँ !

इतना कह नौजवान कुछ और भी हट गया और कुछ दूरी पर बने हुए संगमर्मर के एक चबूतरे पर जा बैठा. एक छोटी किताब उसके जेब में थी जिसे उसने निकाला और कुछ पन्ने उलट-पुलट करने बाद एक जगह बड़े गौर से पढ़ने लगा. उधर वह औरत भी उसी जगह पहिली सीढ़ी के पास बनी एक छोटी चौकी पर बैठ गई और ठुड्डी हथेली पर रख स्थिर दृष्टि से उसकी तरफ देखने लगी. बारहदरी की छत से गिरने वाले फौवारों की नन्हीं बूंदें उसके बदन से चिपकी जा रही थीं पर उसे इस बात का खयाल न था और वह एकदम स्थिर होकर बैठी विचित्र निगाहों से उस नौजवान की तरफ देख रही थी जो बिना इसकी तरफ एक दफे भी नजर उठाये एकदम उस किताब में डूबा हुआ था.

लगभग घड़ी-भर के वह नौजवान किताब पढ़ने में लगा रहा और इस बीच में उसने एक दफे भी उस औरत की तरफ निगाह न उठाई मगर अब यकायक उसने किताब बन्द कर दी और उसे जेब के हवाले करते हुए सिर उठाकर उस औरत की तरफ देखा जिसकी निगाह एकदम बराबर उसी के ऊपर गिर रही थी.

घड़ियाँ काट रही हूँ. अब तक मैं समझ रही थी कि मेरा कोई भी सन्देश ठिकाने नहीं पहुँचा पर आज आपके आने से जान पड़ा कि ईश्वर को मेरी हालत पर दया आई और आपको मेरा पता लग गया.

गोपाल : हाँ मुझे दोनों ही चीठियाँ मिली थीं.पहिली चीठी पर तो मुझे पूरा विश्वास न हुआ पर दूसरी जब पाई तब शक हुआ और आखिर तुम्हें खोजने निकला. पर एक बात का सन्देह मुझे रह जाता है, तुमने कहा कि दूसरी बार जब तुम अपने भाई के साथ यहाँ से निकलीं तो तिलिस्मी बाग में फिर गिरफ्तार कर ली गईं, पर मुझे तो यह मालूम हुआ कि तुम आप ही आप वहाँ से भाग गईं और फिर नजर न आईं.

औरत : यह आपको किसने कहा ? उस समय क्या आपने किसी को मेरा पता लगाने भेजा था ?

गोपाल : हाँ, तुम्हें दुबारा देखते ही मैंने पहिचान लिया और अपने एक दोस्त को पता लगाने के लिए भेजा पर उसकी जुबानी सुना गया कि तुम तिलिस्म के अन्दर घुसकर गायब हो गईं.

औरत : (अफसोस के साथ) ओह तब तो मुझे बहुत बुरा धोखा हुआ. किसी को अपना पीछा करते देख मैं समझी कि मेरे दुश्मनों ने ही फिर मुझे देख लिया और इसीलिए और भागी मगर कुछ ही दूर जाते-जाते पकड़ ली गई. अगर मुझे मालूम होता कि वह आप ही का बाग था जहाँ तक मैं पहुंच गई थी अथवा यही जान जाती कि आपने ही किसी को मेरी खबर लेने भेजा है तो काहे को भागती या क्यों फिर से इस कैद में ही पड़ती.

गोपाल : तुम जब वहाँ से भागीं तो फिर क्या हुआ ?

औरत : थोड़ी दूर जाने के बाद ही मैं पुनः दुश्मन के हाथ पड़ गई और फिर यहाँ पहुंचा दी गई जैसा कि मैंने आपसे कहा. मेरा भाई भी पकड़ा जाकर किसी दूसरी जगह बन्द कर दिया गया क्योंकि उस दिन के बाद से फिर मैंने उसकी शक्ल नहीं देखी.

गोपाल : तुम उन लोगों को पहिचान सकती हो जिन्होंने मेरे बाग से भागती समय तुम्हें पकड़ा था.

औरत : जी हाँ, नाम यद्यपि नहीं जानती पर सूरत देखकर जरूर पहिचान लूंगी.

गोपाल : अच्छी बात है, उसका बन्दोबस्त किया जायगा. मगर अब चलना चाहिए, ज्यादा देर करना मुनासिब नहीं. तुम्हें मेरे साथ चलने में अब तो कोई आपत्ति नहीं है ?

औरत : (हाथ जोड़ कर) जी कोई भी नहीं, जहाँ आपकी आज्ञा हो मैं बेधड़क चलने को तैयार हूं पर एक प्रार्थना मेरी जरूर थी.

गोपाल : सो क्या ?

औरत : आपने जब यहाँ तक आने का कष्ट उठाया है तो एक बार मेरे भाई का भी कुछ पता लगाने की चेष्टा करें. न-जाने दुबारा कब आपका आना इधर हो, या नहीं भी हो. उस अवस्था में वह बेचारा यहाँ ही पड़ा-पड़ा अपनी जिन्दगी की घड़ियाँ गिना करेगा.

गोपाल : तुम इस तरफ से निश्चिन्त रहो, मैं वादा करता हूँ कि तुम्हारी ही तरह तुम्हारे भाई को भी यहाँ से छुड़ाऊँगा, अगर वह इस तिलिस्म में होगा, लेकिन आज वह काम नहीं हो सकता क्योंकि यहाँ से लौटने का रास्ता बहुत ही बीहड़ और खतरनाक है और कम-से-कम तीन घण्टे इस जगह से बाहर जाने में लगेंगे, तथा इस वक्त संध्या होने में भी ज्यादा बिलम्ब नहीं है.

औरत : जैसी आपकी आज्ञा हो मैं करने को तैयार हूँ, पर यह सुन मुझे ताज्जुब हुआ कि यहाँ से जाने का रास्ता तीन घण्टे का समय लेगा. मुझे जब मेरा भाई छुड़ा कर ले गया था तो मुश्किल से आध घण्टे में हम लोग आपके तिलिस्मी बाग में पहुँच गए थे. अगर आप वहाँ ही जाना चाहते हैं और किसी दूसरी जगह नहीं तो वह स्थान यहाँ से ज्यादा दूर नहीं है.

गोपाल : आधे घण्टे में मेरे तिलिस्मी बाग में पहुँच गई थी ! नहीं ऐसा नहीं हो सकता, मुझे वहाँ से यहाँ आने में कई घण्टे लग गए और मैं सुबह का चला होने पर भी धूप और गर्मी से परेशान इस वक्त यहाँ पहुँचा था. अवश्य ही पहिले-पहल आने के कारण ऐसा हुआ और अब कुछ जल्दी आ-जा सकूँगा पर तब भी किसी हालत से दो-ढाई घण्टे से कम का रास्ता तो नहीं ही होगा.

औरत : जो आप कहते हैं ठीक ही होगा पर मुझे ताज्जुब जरूर है, क्या बताऊँ मेरा भाई यहाँ नहीं है नहीं तो वह हम लोगों को जल्दी पहुँचा दे सकता था.

गोपाल : (आश्चर्य करते हुए) तुम कुछ बता सकती हो कि किस रास्ते से

भी कहो कि किस सबब से यहाँ आईं, बाकी हाल मैं किसी निश्चिन्ती के मौके पर सुनूंगा."

औरत पीछे रक्खी हुई एक चौकी की तरफ बढ़कर बोली, "तो आप इस चौकी पर आकर बैठ जाएँ, यहाँ पानी नहीं पड़ता है, और मैं संक्षेप में अपना हाल कह सुनाती हूं."

बारहदरी की सतह के बीचोंबीच में तीन-चार हाथ का एक बहुत ही खूबसूरत कुंड बना हुआ था जो बहुत गहरा नहीं जान पड़ता था और जिसके चारों कोनों पर चार छोटी-छोटी संगमर्मर की चौकियाँ बनी हुई थीं. इन्हीं में से एक की तरफ उस औरत ने इशारा किया था. गोपालसिंह उसके कहे मुताबिक उस चौकी पर जाकर बैठ गए और वह औरत हाथ जोड़ सामने खड़ी हो गई. गोपालसिंह ने पूछा, "तुम कौन हो और किसकी लड़की हो ?"

औरत : मैं रोहतासगढ़ की रहने वाली और वहाँ के नामी महाजन गोविन्ददास की लड़की हूँ.

गोपाल : रोहतासगढ़ की रहने वाली ! तब यहां कैसे आ पहुंची ?

औरत : वहाँ के कुमार दिग्विजयसिंह की बुरी नजर की बदौलत ! उन्होंने न-जाने मेरी फूटी शक्ल में क्या देखा कि मुझ पर आशिक हो गए और मुझे अपने महल में डालना चाहा. मेरी जात दूसरी थी इससे खुले आम न तो वे इस काम को कर ही सकते थे और न मेरे माँ-बाप ही इस बात को मंजूर कर सकते थे, अस्तु उन्होंने अपने बदमाशों द्वारा मुझे मेरे घर से चुरा मंगवाया और अपने एक बाग में रखवा दिया. जब मैंने उनका बुरा प्रस्ताव स्वीकार न किया तो पहिले तो खफा होकर जान से मार डालने की धमकी दी और तब भी जब मैं न मानी तो तिलिस्म में बन्द कर दिया. एक मुद्दत से मैं इसी कैद में पड़ी हूं और ईश्वर से मनाया करती हूं कि या तो मुझे मौत दे दे और या किसी दयालु को भेजे जो मुझे इस कैद से छुड़ावे.

इतना कहकर वह रोने लग गई. गोपालसिंह ने दम-दिलासा देकर उसे शान्त किया और तब पूछा, "क्या दो दफे मेरे तिलिस्मी बाग में तुम्हीं ने आकर अपने चक्रव्यूह में कैद होने का हाल चीठी द्वारा बताया था ?"

बड़ी मुश्किल से उस औरत ने अपने को सम्हाला तब कहा, "जी हाँ, मुझे खोजता हुआ मेरा भाई न-जाने किस तरह यहाँ तक आ पहुँचा और उसकी

ज़ुबानी मुझे मालूम हुआ कि यह जमानिया के तिलिस्म का चक्रव्यूह नामक स्थान है जहाँ मैं कैद की गई हूँ. उसको किसी तरह यहाँ का कुछ हाल मालूम हो गया था और उसका विश्वास था कि मुझे लेकर यहाँ से बाहर हो जायगा पर ऐसा न हो सका. उसी की बताई राह से दो बार हम लोग यहाँ से निकल के एक बाग में पहुँचे जो मालूम होता है कि वही है जिसे आप अपना तिलिस्मी बाग कहते हैं, पर हर बार गिरफ्तार हो गए और फिर यहीं पहुँचा दिए गए.

गोपाल : गिरफ्तार करके फिर यहाँ पहुँचा दिए गए ! सो कैसे और किसके द्वारा ?

औरत : दिग्विजयसिंह के कुछ मददगार आपकी रियासत बल्कि आपके महल में मौजूद हैं, मैं समझती हूँ उन्हीं का यह काम होगा.

गोपाल : (और भी ताज्जुब से) क्या तुम उन्हें जानती हो ?

औरत : मैं तो उनका नाम नहीं जानती पर मेरा भाई अवश्य उन्हें पहिचानता था, अफसोस कि इस बार बेचारा किसी दूसरी जगह कैद कर दिया गया नहीं तो···

इतना कहते-कहते उस औरत की आँखें पुनः डबडबा आईं पर कोशिश करके उसने अपने को सम्हाला और कहने लगी—

औरत : अपने भाई के साथ आते-जाते मैंने इतना समझ लिया था कि यह बाग उस जगह से ज्यादा दूर नहीं है. अस्तु पहिली बार मैंने एक पत्र में यह लिख कर कि 'मैं चक्रव्यूह में कैद हूँ' पानी में बहा दिया था कि शायद किसी के हाथ लग जाय, अब मालूम नहीं कि वह चीठी किसी को मिली या नहीं.

गोपाल : हाँ, मुझे वह पुर्जा मिला था, मगर कोई निश्चय न होने के कारण मैं कुछ कर न सका लेकिन उसके कुछ दिन बाद तुम पुनः दिखाई पड़ीं और एक दूसरी चीठी छोड़ गईं.

औरत : जी हाँ, यह ठीक है, मेरे साथ मेरा भाई भी गिरफ्तार कर लिया गया पर न-जाने क्यों कुछ दिन के वास्ते वह पुनः यहाँ पहुँचा दिया गया और उस समय उसने फिर एक उद्योग यहाँ से निकलने का किया. इस बार भी पुनः उसी बाग तक पहुँच हम लोग फिर पकड़ लिए गए पर इस दफे मुझे इतना मौका मिल गया कि वह चीठी लिखकर छोड़ती आ सकूँ. मगर इस दफे मेरा भाई किसी दूसरी जगह भेज दिया गया है और तब से मैं अकेली ही यहाँ पड़ी मुसीबत की

कर मैं बता दूंगा कि कौन हूँ!" इस पर यह बोला, "नहीं, तुम्हें इसी जगह अपना नाम बताना होगा और अगर नहीं बताओगे तो तुम्हारी पूरी तरह से दुर्दशा की जायेगी"—परन्तु मैंने कुछ जवाब न दिया. वह बहुत कुछ बोला-बहका और डरा-धमका कर मुझसे नाम पूछना चाहा पर मैंने एकदम चुप्पी साध ली और निश्चय कर लिया कि चाहे जो कुछ भी हो अपना असल भेद और नाम कदापि न बताऊँगा. आखिर उसका साथी बोला, "आप किस फेर में पड़े हुए हैं. क्या इसके गाल के पीछे का यह दाग देखकर भी आपको सन्देह रह सकता है कि यह दयाराम नहीं है!" इस पर वह पहिला आदमी बोला, "बेशक यह दयाराम ही है, मगर मैं इसके मुँह से यह सुन कर निश्चय कर लेना चाहता था." इसके बाद वह मेरी तरफ घूमा और बोला, "जब तुम दयाराम हो तो यह औरत भी जरूर जमना या सरस्वती होगी?" मेरे कुछ जवाब न देने पर वह बोला, "खैर अब इसका चेहरा भी साफ करके देख लेना चाहिए." यह कह उसने एक शीशी निकाली जिसमें किसी तरह का अर्क था, उस अर्क में से थोड़ा लेकर लगाने के साथ ही जमना के चेहरे का बनावटी रंग साफ हो गया और एक कपड़े से पोछते ही उसकी सूरत निकल आई. उन दोनों ने गौर से उसकी सूरत देखी और कहा, "बेशक यह जमना है." इसके बाद वे पुन: मेरी तरफ झुके और बोले, "सच बताओ कि तुम्हें किसने कैद से छुड़ाया, नहीं तो अभी बोटी-बोटी काट कर फेंक दूंगा" पर मैंने इस बात का भी कुछ जवाब न दिया. सब तरह से कोशिश करके जब वह हार गया तो दोनों ने मिलकर मुझे उठा लिया तथा शेरों वाले कमरे में लाकर उसके बगल में बनी बहुत-सी कोठरियों में से एक के दरवाजे पर पहुँच और एक जगह दिखा कर बोले, "देखो यहाँ पर लिखा हुआ है कि 'इस कोठरी में एक घड़ी से ज्यादा देर तक रहने वाला शेर की खूराक बनेगा'. अगर मेरी बातों का जवाब न दोगे तो मैं तुम्हें बेहोश करके इस कोठरी में डाल दूंगा और तब तुम किसी तरह जीते न बच सकोगे." मगर मैंने तो सोच ही रक्खा था कि चाहे कुछ भी हो जाय पर उन दुष्टों की बातों का उत्तर तो कदापि न दूंगा अस्तु मैंने कुछ भी जवाब न दिया. उसने कई दफे पूछा और मुझे चुप पा अन्त में झल्ला उठा. आखिर उसने जेब में से एक शीशी निकाल कर जबर्दस्ती मुझको सुँघाई जिसके साथ ही मुझे तनोबदन की सुध न रह गई और अब होश में आकर मैं अपने को इस जगह पा रहा हूँ.

सरस्वती : बस तो ठीक है, मैं भी उसी कोठरी में से होकर यहाँ पहुँची हूँ.

आप दोनों को उन लोगों ने उसी कोठरी में डाल दिया था और जब खोजती हुई मैं वहाँ गई तो उस शेर की बदौलत यहाँ तक पहुँची जिसकी हालत का ख्या कर अब भी मैं काँप जाती हूँ.

इतना कह सरस्वती ने अपने यहाँ तक आने का वह सब हाल पूरा-पूरा क सुनाया जो हम ऊपर लिख आये हैं और तब बोली, "इस बाग में खाने के लि मेवे और पीने के लिए पानी की कमी नहीं है. इस समय हमें जरूरी कामों निपट कर उन्हीं पर सन्तोष करना चाहिए तब निश्चिन्त हो बैठ कर यह सोचें कि यहाँ से निकलने की क्या तर्कीब हो सकती है."

तीनों आदमी बारहदरी के बाहर निकले. सरस्वती फल तोड़ लाई और तीन नहर के किनारे बैठ कर उन्हें खाने तथा तरह-तरह की बातें करने लगे.

7

श्यामा को जमीन ही पर छोड़ जब उन आदमियों ने भूतनाथ को घेर लिया तो ए बार थोड़ी देर के लिए वह घबड़ा गया क्योंकि वे सभी आदमी मजबूत और कद् वर तथा लड़ाके मालूम पड़ते थे और इधर भूतनाथ एकदम अकेला और असहा तथा एक ऐसे स्थान में था जिसके बारे में वह कुछ भी नहीं जानता था बल्कि जिसका तिलस्मी होना उसे मालूम हो चुका था, मगर जिस समय भूतनाथ की निगाह बेहोश और बेबस श्यामा पर पड़ी तो उसकी हिम्मत ने फिर जोश मा और उसने कड़क कर कहा, "अगर तुम लोग अपने को बहादुर और लड़ाके लग हो तो एक-एक करके मेरे सामने आओ, यों एक पर इतनों का टूट पड़ना मर्दान नहीं है!" इतना कह और चक्कर खाकर उन आदमियों के घिराव से निकल ग और गौर के साथ देखने लगा कि उसकी इस बात का क्या असर होता है.

भूतनाथ की बात सुन वे आदमी कुछ देर के लिए रुक गये और आपस में कु कानाफूसी करने लगे. इसके बाद उनमें से एक ने जो उनका सरदार मालूम होत था भूतनाथ से कहा, "यद्यपि आपने हम लोगों को न पहिचाना होगा मगर ह लोगों ने आपको बखूबी पहिचान लिया है. आप ऐसे मशहूर ऐयार से हम लो व्यर्थ का बैर नहीं बाँधना चाहते मगर साथ ही यह भी बर्दाश्त नहीं कर सकते कि हमारे काम में कोई बाहरी आदमी दखल दे और हमें नुकसान पहुँचाये. हमलो

अपने मालिक के भेजे हुए किसी खास काम से यहाँ आये हैं और वह काम कर तुरत यहाँ से चले जायेंगे. हमारे जाने के बाद आप यहाँ जो चाहे करें या जब तक चाहे रहें हमें कोई मतलब नहीं, हम बस इतना ही चाहते हैं कि हमें बे-रोक-टोक अपना काम करके यहाँ से चले जाने दें."

भूतनाथ ने उसकी बातें बहुत गौर से सुनीं क्योंकि आवाज के ढंग से उसे वह आदमी कुछ पहिचाना हुआ-सा जान पड़ता था मगर अपनी बोली को इस तरह बदले हुए था कि यकायक पहिचानना मुश्किल था. अस्तु उसे और भी बातों में फँसाने और उसका परिचय लेने की नीयत से भूतनाथ ने कहा, "जिस तरह आप हमारे काम में दखल नहीं दिया चाहते उसी तरह मैं भी आप लोगों के काम में किसी तरह की रुकावट डालना नहीं चाहता. मैं सिर्फ एक मामूली काम के लिये यहाँ आया हूँ और उसे करके तुरत इस जगह के बाहर हो जाऊँगा. मैं उम्मीद करता हूँ कि आप मुझे भी उसी तरह अपना काम कर लेने देंगे जिस तरह मैं आपको अपना काम करने दूँगा."

आदमी : आप यहाँ क्या काम करना चाहते हैं ?

भूत० : (श्यामा की तरफ बताकर) मैं इनसे कुछ बात करने आया था—बात पूरी होते ही चला जाऊँगा.

उस आदमी ने यह सुन अपने साथियों की तरफ देखा और धीरे से कुछ बातें कीं. इसके बाद वह बोला, "क्या आप इसका वादा करते हैं कि सिर्फ दो-चार बातें करके यहाँ से चले जायेंगे ?"

भूत० : वादा तो नहीं कर सकता मगर उम्मीद करता हूँ कि इससे ज्यादा मुझे कुछ करने की जरूरत न पड़ेगी.

आदमी : (सिर हिलाकर) नहीं, सो नहीं हो सकता. अगर आप इस बात की प्रतिज्ञा करें कि दो-चार बातें इस औरत से करके यहाँ से चले जायेंगे तब हम लोग इसे स्वीकार कर सकते हैं.

भूत० : इसका सबब ?

आदमी : इसका सबब यह है कि इस औरत ने एक बहुत बड़ा कसूर किया है और हम लोग अपने मालिक के भेजे हुए इसीलिए आए हैं कि इसे उनके पास ले जायें.

भूत० : आपका मालिक कौन है ?

आदमी : सो बताने की आज्ञा हमको नहीं है.

भूतनाथ उस आदमी से बातें भी करता जाता था और साथ ही साथ नजर बचाता हुआ अपने बटुए में से कुछ निकालता भी जाता था. इतनी देर की बात-चीत ने भूतनाथ को विश्वास करा दिया कि यह आदमी जरूर जान-पहिचान ही का कोई है और आवाज बदल कर बातें कर रहा है. यही नहीं बल्कि शायद उसे अन्दाज से यह भी कुछ-कुछ मालूम हो गया कि यह कौन है—अस्तु अब उसने बातचीत में यों ही समय बरबाद करना व्यर्थ समझा. बटुए में से उसने एक छोटा-सा गेंद और किसी तरह की दवा की एक गोली निकाल ली थी. वह गोली तो उसने अपने मुँह में डाल ली और गेंद को बाँए हाथ में ले दाहिने से खंजर कमर से निकालता हुआ बोला, "जब आप अपने मालिक का नाम तक बताने को तैयार नहीं हैं तो मुझे मालूम होता है कि आप के मन में दगा है. ऐसी हालत में आपसे किसी तरह का वादा करना मैं व्यर्थ समझता हूँ." उस आदमी ने भी यह सुन अपने हाथ का खंजर मजबूती से पकड़ा और अपने आदमियों को कुछ इशारा करके बोला, "तब तो हम लोगों को भी लाचार आप पर हमला करना ही पड़ेगा."

इतना कह वह भूतनाथ की तरफ झपटा और उसके आदमी भी हथियार निकाल-निकाल कर आगे बढ़े मगर भूतनाथ ने उन्हें कुछ भी करने की मोहलत न दी. उसने अपने हाथ वाला गेंद जोर से जमीन पर पटका जो गिरने के साथ ही फूटा और उसमें से बेहोश कर देने वाले बहुत से धुएँ ने निकल कर उसे तथा उस पर हमला करने वाले आदमियों को घेर लिया. यह धुआँ बहुत ही काला था और दम के दम में इस तरह फैल गया कि यहाँ रात की तरह अँधेरा मालूम पड़ने लगा. भूतनाथ इसी अँधेरे में इधर-उधर घूम-फिर कर अपने को बचाता रहा और इसी बीच में धुएँ के असर से उसके दुश्मन बेहोश और बदहवास होकर गिरने लगे.

लगभग आधी घड़ी के बाद जब खिड़कियों और दरवाजों की राह कमरे का धूआँ साफ हो गया तो भूतनाथ ने देखा कि उसके सभी दुश्मन बेहोश होकर इधर-उधर पड़े हुए हैं. धुएँ का असर इतना कारी था कि उसने किसी को कुछ भी करने की मोहलत नहीं दी थी. भूतनाथ यह देख बहुत खुश हुआ. यद्यपि उसने अपने को बेहोशी से बचाने के लिए दवा खा ली थी फिर भी धुएँ ने नाक, आँख

की राह अन्दर पहुँच कर उसका सिर घुमा दिया था. उसने बटुआ खोल कर लखलखा निकाला और उसे अच्छी तरह सूंघ कर अपनी तबीयत साफ करने के बाद बेहोश श्यामा की तरफ हाथ बढ़ाया जो ज्यों-की-त्यों अपनी जगह मुर्दे की तरह पड़ी हुई थी. लखलखे की डिबिया भूतनाथ उसके नाक के साथ लगाया ही चाहता था कि न-जाने क्या सोच कर रुक गया और डिबिया जमीन पर रख उसने बटुए में से एक शीशी निकाली जिसमें किसी तरह का अर्क था. इसमें से थोड़ा लेकर उसने श्यामा के मुँह पर अच्छी तरह मला और तब अपने कपड़े से उसे खूब कस कर पोंछ देने के बाद फिर गौर से उसकी सूरत देखी. सूरत में किसी तरह का फर्क नहीं पड़ा था जिसे देख भूतनाथ बोला, "नहीं, यह इसकी असली सूरत है, किसी तरह का धोखा नहीं." शीशी बन्द कर उसने बटुए में डाल ली और तब लखलखा सुँघाने लगा.

कुछ ही देर की कोशिश में श्यामा की बेहोशी दूर हो गई. उसे लगातार कई छींकें आईं और तब उसने एक अंगड़ाई लेकर आँखें खोल दीं. ताज्जुब की निगाह उसने अपने चारों तरफ डाली और तब कमजोर आवाज में पूछा, "मैं कहाँ हूँ ?" भूतनाथ ने जवाब दिया, "अपने कैदखाने ही में हो मगर तुम्हें छुड़ाने वाला तुम्हारे सामने मौजूद है· उठो होश में आओ और मेरे साथ इस जगह से बाहर निकल चलो."

भूतनाथ की आवाज सुन उस औरत ने चमक कर उसके गले में हाथ डाल दिया और डरे हुए ढंग से बोली, "ओह मेरे प्यारे ! मुझे बचाओ, नहीं वे दुष्ट मुझे जीता न छोड़ेंगे !" भूतनाथ ने दिलासा देते हुए कहा, "डरो नहीं, अब घबराहट की कोई बात नहीं है. तुम्हें तंग करने वाले सब पाजी वह देखो बेहोश पड़े हैं और अभी घंटों तक होश में न आवेंगे. तुम अपने को सम्हालो और उठ खड़े होवो."

उस औरत ने अपने चारों तरफ देखा और उन दुष्टों को बेहोश पड़ा देख खुश होकर उठ बैठी. भूतनाथ ने सहारा देकर उसे खड़ा किया और कहा, "तुम कौन हो, ये लोग कौन हैं, तुमसे इनसे क्या अदावत है, और तुम यहाँ क्योंकर फँसी इत्यादि सैकड़ों बातें मुझे पूछनी हैं मगर यहाँ इसका मौका नहीं है, यहाँ से बाहर होकर वह सब हाल मैं पूछूंगा !"

इतना कह भूतनाथ कमरे के बाहर की तरफ चला, उसके मोढ़े का सहारा

लिए हुए श्यामा उसके साथ हुई.

दोनों प्रेमी उस कमरे के बाहर निकले. अब भूतनाथ ने अपने को एक कमरे में पाया जो पहिले कमरे से बड़ा और आलीशान था और उसमें चारों तरफ बहुत-से दरवाजे दिखाई पड़ रहे थे जो सब के सब इस समय बन्द थे और इसी कारण यहाँ पर कुछ अंधकार था. भूतनाथ यहाँ पहुँच कर रुक गया और कुछ सोचने लगा मगर उसी समय श्यामा बोल उठी, "क्यों खड़े हो गये ! मुझे अभी तक उन कम्बख्तों का डर लगा हुआ है, जल्दी इस जगह के बाहर निकलो तो जान में जान आवे." भूतनाथ बोला, "मैं यह सोच रहा था कि एक बार उन बेहोशों की सूरत साफ कर देख लेता कि वे कौन हैं तब इस जगह से बाहर होता." श्यामा यह सुन बोली, "मुझे उन लोगों का सब हाल मालूम है. बाहर चल कर सब कुछ मैं तुम्हें बता दूँगी मगर इस समय न रुको." भूतनाथ यह सुन कर हँसा और आगे की तरफ बढ़ना ही चलता था कि यकायक एक तरफ से आवाज आई, "ठहरो ठहरो !" जिसे सुन वह चौंक कर ठमक गया और श्यामा तो किसी दुश्मन के होने का खयाल कर इतना डरी कि भूतनाथ के बदन से चिपक गई. भूतनाथ ने उसे दिलासा दिया और तब कमर से खंजर निकाल ही रहा था कि एक तरफ का दरवाजा खुला और वे ही साधू महाशय तेजी से आते दिखाई पड़े जिन्हें कुएँ में से भूतनाथ ने देखा था और जिन्होंने उसे कमन्द दी थी. देखते-देखते वे उसके सामने आकर खड़े हो गये और बोले, "पहिले मेरी दो-चार बातें सुन लो तब इस जगह के बाहर जाने का विचार करो."

साधू महाशय की सूरत देखते ही श्यामा के मुँह से एक चीख निकली और वह बेतहाशा दौड़ कर उनके पैरों पर गिर पड़ी. उसकी आँखों से चौधारे आँसू बहने लगे और वह रोती हुई कहने लगी, "गुरुजी, आप भी अपनी दासी को भूल गये जो इतने दिनों तक कोई खबर न ली."

श्यामा की बात सुन साधू महाराज के आँखों में भी प्रेमाश्रु आ गये. उन्होंने उसे जमीन से उठाया और प्यार के साथ सिर और पीठ पर हाथ फेर कर कहने लगे, "नहीं-नहीं, मैं तुझे भूला बिल्कुल नहीं था मगर लाचार था कि तू ऐसी जगह फँसी हुई थी जहाँ मेरी कोशिश कुछ काम नहीं करती थी. आज जब इस बहादुर ने (भूतनाथ की तरफ इशारा करके) तुम्हें छुड़ाने की कोशिश की बल्कि तिलिस्म का वह हिस्सा खोला तभी मैं यहाँ तक आ सका नहीं तो बिल्कुल बेबस था. यह

कौन आदमी है ?"

श्यामा ने भूतनाथ की तरफ देखा मगर तुरन्त गरदन नीची कर ली और तब कहा, "इनका नाम भूतनाथ ऐयार है, इन्होंने बड़ी बहादुरी से जान पर खेल कर मुझे बचाया है."

साधू ने यह सुन खुश होकर भूतनाथ से कहा, "क्या तुम वही मशहूर भूतनाथ हो जिसके कामों की तारीफ मैं बहुत दिनों से सुन रहा हूँ ?"

भूतनाथ ने "जी हाँ महाराज !" कह कर प्रणाम किया और साधू ने आशीर्वाद दिया. इसके बाद पुनः श्यामा से बोले, "अब तुम्हारा क्या विचार है ? तुम कहाँ जाना चाहती हो ?" श्यामा ने कहा, "जहाँ आप आज्ञा करें वहीं जाऊँ. क्या मेरे माता-पिता का कुछ हाल आपको मालूम है ?"

साधू : तेरी माँ तो तेरी गिरफ्तारी के तीन ही महीने बाद तेरे लिए रोती हुई चल बसी, तेरे पिता भी अरसा हुआ परलोकवासी हो गए, अब कोई भी नहीं बचा जो तुम पर अपना हाथ रक्खे. एक मैं बचा हूँ परन्तु मुझे भी अब इस लोक में ज्यादा दिन के लिए न समझ, मेरा भी अंतकाल आ गया है और मैं शीघ्र ही केदारजी को जा रहा हूँ.

श्यामा यह सुन और अपने माँ-बाप के मरने का हाल जान ज़ार-ज़ार रोने लगी. साधू ने दम-दिलासा देकर उसे शान्त किया और बोले, "तेरा काशी वाला मकान जिसमें अगाध दौलत भरी है खाली पड़ा है और उसकी ताली भी इस समय मेरे पास मौजूद है. मेरी राय में तू फिलहाल उसी में जाकर रह. यदि कुछ दिन बाद तेरा मन चाहा और किसी योग्य व्यक्ति से दिल मिल गया तो उससे शादी कर लीजियो और गृहस्थी करियो. अफसोस कि तू कुँआरी ही रह गई और तेरे माता-पिता चल बसे नहीं तो वे स्वयं ही कुछ प्रबन्ध कर जाते. खैर जो कुछ होता है ईश्वर की मर्जी से होता है. अब तेरा विचार जो हो सो कह, मैं वैसा ही प्रबंध कर दूं ?"

श्यामा यह सुन सिर नीचा किये हुए बहुत देर तक कुछ सोचती रही इसके बाद उसने एक निगाह भूतनाथ पर डाली और तब धीमे स्वर में बोली, "जब मेरा इस संसार में कोई भी नहीं है तो मैं अपने को उसी बहादुर की शरण में डाल देती हूँ जिसने प्राणों पर खेल कर मेरी जान बचाई है ! आज इस घड़ी से मैं अपने को उसी के चरणों की दासी बनाती हूँ. वह मेरी जो गति चाहे करे और जिस

तरह चाहे मुझे रक्खे, मुझे सब तरह से प्रसन्नता होगी और किसी बात में कुछ उज्र न होगा." इतना कह श्यामा ने जमीन पर बैठ कर भूतनाथ के चरणों में सिर नवाया और उसके पैरों की धूल माथे से लगाने के बाद उठकर हाथ जोड़े. बाईं तरफ कुछ पीछे हट कर खड़ी हो गयी. भूतनाथ बड़े ताज्जुब के साथ उसका यह ढंग देख रहा था क्योंकि इसमें यद्यपि शक नहीं कि श्यामा गजब की खूबसूरत थी और उसे देख कर बड़े-बड़े ऋषियों और मुनियों का मन डोल सकता था और इसी कारण भूतनाथ की भी ललचौंही निगाहें उसकी तरफ आज और आज के पहिले भी कई बार किसी दूसरे ढंग पर पड़ चुकी थीं, पर इस समय यकायक इसका यह भाव देख वह भौंचक में पड़ गया और अब क्या करे यही सोचने लगा. उसकी दो स्त्रियाँ पहिले ही मौजूद थीं तथा एक तीसरी और बढ़ा लेने का तरद्दुद वह पूरी तरह समझता था अस्तु वह इस समय इसी उधेड़बुन में पड़ गया कि क्या करे या क्या जवाब दे. इधर साधू महाशय के माथे की सिकुड़नें भी इस बात का पता दे रही थीं कि वे भी श्यामा की बात सुन बड़े गौर में पड़ गए हैं और कुछ निश्चय नहीं कर पाते कि उसे क्या जवाब दें. आखिर कुछ देर बाद उन्होंने कहा, "शास्त्रों में कहा है कि पृथ्वी और रमणी वीरों के ही भोग की वस्तु हैं, अस्तु श्यामा ने भी अगर एक वीर को अपना तन-मन अर्पण करना चाहा तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं. भूतनाथ को मैं इसके लिए भाग्यशाली समझूँगा कि ऐसा रमणीरत्न उसके पास बिना माँगे आया है जो जितना सुन्दर है उतना ही धनवान भी है, परन्तु फिर भी लौकिक रीति के अनुसार मैं कुछ निर्णय करने के पहिले ही इसकी मर्जी भी जान लेना आवश्यक समझता हूँ ! कहो जी भूतनाथ, श्यामा ने जो कुछ कहा है उस सम्बन्ध में तुम्हारी क्या राय है ?"

भूतनाथ यह सुन बोला, "आप बड़े हैं, आपकी जो आज्ञा होगी वह मुझे शिरोधार्य होगी ही फिर भी इतना कह देना चाहता हूँ कि मेरा पेशा ऐयारी का है और ऐयारों की जान हरदम सूली पर टंगी रहती है, किस समय क्या हो जायगा इसे यों तो कोई भी नहीं कह सकता पर एक ऐयार के लिए तो इसका हाल कह सकना एकदम ही असम्भव है. दूसरे, मैं कोई बहुत बड़ा लक्ष्मीपात्र भी नहीं हूँ. मैं स्वयं दूसरे की दी हुई रोटी खाता हूँ और मालिक की आज्ञा बजाने के लिए मुझे हरदम तैयार रहना पड़ता है. फिर मेरे दो विवाह हो चुके हैं और उनसे सन्तति भी है—इस बात को भी आप विचार लें."

साधू : (श्यामा की तरफ देख कर) तूने भूतनाथ की बातें सुनीं ?

श्यामा : (हाथ जोड़ कर नीची निगाह किए हुए) जी हाँ, पर मुझे जवाब में कुछ भी नहीं कहना है. मैं हिन्दू स्त्री हूँ, हिन्दू स्त्री एक बार मन से भी जिसे अपना स्वामी मान लेती है वह उसी घड़ी उसके तन-मन और धन का स्वामी हो जाता है अस्तु ये तो अब मेरे स्वामी हो चुके. मैं पहिले ही कह चुकी और अब फिर कहती हूँ कि ये जिस तरह जहाँ और जैसे मुझे रक्खें मैं वैसे ही रहूंगी, मुझे किसी बात में कोई उज्र न होगा. मेरी सौतें बड़ी बहिनों की तरह मेरी पूज्य होंगी और उनके लड़कों को मैं अपनी जान से ज्यादा मानूंगी. रहा गरीबी-अमीरी का खयाल सो आप कहते ही हैं कि मेरा काशीजी वाला मकान मौजूद है, उसमें दौलत कुछ न कुछ होगी ही, उससे हम लोगों का गुजर अच्छी तरह हो सकता है. दूसरी बात अपने ऐयारी पेशे की इन्होंने कही है, तो उसके सम्बन्ध में मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि अगर आज ये ऐयारी न जानते होते तो मैं इसी तिलिस्म में बन्द सड़ा करती और मेरी लाश को भी कोई न पूछता. यह इन्हीं का काम था कि मुसीबत और आफत की परवाह न कर इन्होंने मुझे इस कैदखाने से छुड़ाया.

साधू : (भूतनाथ से) अब तुम्हें क्या कहना है ?

भूत० : मुझे तब भी कुछ नहीं कहना था और अब भी कुछ नहीं कहना है. आप जो कहें वही मुझे मंजूर है, हाँ, जिसमें पीछे कोई बदमजगी न हो इसलिए मैंने अपना हाल साफ-साफ पहिले ही कह देना मुनासिब समझा.

साधू : तुम्हारे जैसे बहादुर से मुझे ऐसी ही उम्मीद थी और इतना भी तुम समझ रक्खो कि श्यामा जैसी स्त्री बड़े भाग्यशाली को ही मिलती है. यह जैसी सुन्दर है वैसी ही सुशील भी है. इसके गुणों का परिचय तुम्हें आप ही आप लग जायगा, और फिर यह धन से भी भरपूर है. माता-पिता के मर जाने और दुष्टों के फेर में बरसों से पड़े रहने पर भी इसके पास अभी अगाध दौलत है जिसे तुम बेइन्तहा खर्च करके भी एक जन्म में खतम नहीं कर सकते. तुम्हें इन सब बातों का पता धीरे-धीरे स्वयं ही लग जायगा. अच्छा, जब तुम दोनों राजी हो तो मुझे भी इससे बढ़कर और कोई बात नहीं सूझती कि तुम दोनों को विवाह-सूत्र में बाँध एक कर दूं और अपने सिर के एक बहुत बड़े बोझ को सदा के लिए दूर कर दूं. लाओ अपना-अपना हाथ बढ़ाओ.

श्यामा का हाथ लेकर साधू महाशय ने भूतनाथ के हाथ में दे दिया और तब

स्वयं दोनों को पकड़े हुए कुछ मंत्र पढ़ने लगे. जब मंत्र समाप्त हुए तो दोनों के सिर पर हाथ रख उन्होंने आशीर्वाद दिया और कहा, "बस अब तुम दोनों पति-पत्नी हुए ! संसार में उसी तरह रहना और सुख से जीवन बिताना. भूतनाथ, अब तुम अपनी स्त्री को लेकर जहाँ चाहे जाओ और मैं भी बद्रिकाश्रम की यात्रा करता हूँ. पर हाँ, एक बात तो मैं भूल ही गया."

इतना कह साधू महाराज ने अपनी कमर टटोली और एक बड़ी-सी चाभी निकाल कर श्यामा की तरफ बढ़ाते हुए कहा, "यह तेरे काशीजी वाले मकान की चाभी है." श्यामा ने भूतनाथ की तरफ इशारा करके कहा, "जिसकी चीज है उन्हें ही दे दीजिए." जिसे सुन हँसकर साधू महाराज ने वह ताली भूतनाथ की तरफ बढ़ाई जिसने उसे लेकर अपने बटुए में डाल लिया. इसके बाद साधू महात्मा बोले, "मेरे पीछे-पीछे चले आओ तो मैं तुम लोगों को इस जगह से बाहर कर दूं."

साधू महाशय दूसरी तरफ घूमे और भूतनाथ तथा श्यामा उनके पीछे-पीछे रवाना हुए. कई दरवाजों से होकर इन्हें एक लम्बी सुरंग में घुसना पड़ा और जब उसके बाहर हुए तो अपने को घने जंगल में पाया. गौर करने से भूतनाथ को मालूम हुआ कि वह इस जगह पहिले भी कई दफे आ चुका है, पर इस गुफा का मुँह लता आदि से पूरी तरह ढंका होने के कारण असली हाल का कोई गुमान आज तक उसको न हुआ था.

जंगल में पहुँच कर साधू महाशय रुके और बोले, "बस अब मैं तुम लोगों से विदा होता हूँ." जिसे सुन श्यामा उनके पैरों पर गिर पड़ी. देखा-देखी भूतनाथ ने भी उनके चरण छूए और तब दोनों को आशीर्वाद दे साधू महाशय एक तरफ को चले गए. जाती समय श्यामा के एक सवाल के जवाब में कहते गए कि 'यदि हो सका तो एक बार फिर तुझसे मिलूँगा'.

अब भूतनाथ और श्यामा अकेले रह गये. भूतनाथ कुछ देर तक श्यामा की रूप-छटा को देखता रहा और तब उसका हाथ पकड़ कर बोला, "कहो अब क्या विचार है ?" श्यामा ने एक बार निगाह उठा कर उसकी तरफ देखा पर आँखें चार होते ही वह शर्मा गई और सिर नीचा करके बोली, "आपकी जो कुछ आज्ञा हो वह मैं करने को तैयार हूँ, पर मेरा विचार तो यही था कि हम लोग एक बार काशी चलते. वहाँ अपने मकान की कैफियत भी देख ली जाती और मैं कुछ समय तक वहाँ रह कर आराम भी कर लेती, क्योंकि कैद की सख्तियों ने मुझे बहुत

कमजोर कर दिया है."

भूतनाथ ने कहा, "मुझे जरूरी काम से मिर्जापुर जाना है इससे काशी में रह तो न सकूँगा पर हाँ तुम्हें वहाँ तक पहुँचाता हुआ आगे बढ़ जाऊँगा." श्यामा ने जवाब दिया, "खैर यही सही, मगर कम-से-कम एक दिन तो आपको वहाँ जरूर रहना होगा ताकि मैं आपकी सेवा कर अपना जन्म सुफल कर लूँ !"

भूतनाथ ने इसे मंजूर किया और तब दोनों प्रेमी हाथ में हाथ डाले खुशी-खुशी वहाँ से रवाना हुए. भूतनाथ श्यामा को साथ लिए चक्कर काटता हुआ पुनः उसी कूएँ के पास पहुँचा जिसके अन्दर कूद कर वह श्यामा को लाया था. उसका घोड़ा अभी तक उसी जगह खड़ा था. भूतनाथ ने श्यामा को उस पर सवार कराया और तब खुद भी सवार हो काशी का रास्ता लिया. इस समय पौ फट चुकी थी बल्कि सवेरा हो चला था.

भूतनाथ के जाने के थोड़ी देर बाद न-जाने कहाँ से वे पाँचों आदमी भी घूमते-फिरते उसी कूएँ पर आ पहुँचे जिन्होंने भूतनाथ पर हमला किया था तथा जिन्हें वह अपनी कारीगरी से बेहोश करके कूएँ के अन्दर ही छोड़ आया था और इनके वहाँ पहुँचने के थोड़ी देर बाद वे बाबाजी भी वहाँ आ पहुँचे. उन आदमियों ने उन्हें देखकर हाथ जोड़ा और एक आदमी ने आगे बढ़ कर पूछा, "क्या वह काम हो गया ?" बाबाजी ने कहा, "हाँ बखूबी, भूतनाथ श्यामा को लेकर काशी गया. अबकी बार वह पूरी तरह से हम लोगों के जाल में फँसा है और मुझे उम्मीद है कि श्यामा उसे अच्छी तरह से उल्लू बनावेगी."

बाबाजी की बातें सुन उस आदमी ने कहा, "बेशक आपकी कारीगरी ने बड़ा असर किया. अब हम लोगों को क्या आज्ञा होती है ?" बाबाजी ने यह सुन कर जवाब दिया, "तुम लोग भी काशी चले जाओ और छिपे रूप से श्यामा की मदद करो, मगर आज के पाँचवें दिन आधी रात के समय इन्द्रदेव के मकान के दक्खिन की रिछिया पहाड़ी वाली गुफा में मुझसे जरूर मिलना और अपने साथियों को भी वहीं लेते आना."

उस आदमी ने "जो हुक्म" कहा और तब अपने साथियों समेत बाबाजी को प्रणाम कर कूएँ के नीचे उतर गया. उनके जाने के बाद बाबाजी कूएँ के पास गए और कूएँ के अन्दर झुक कर कुछ देर तक न जाने क्या करते रहे, इसके बाद जगत के नीचे उतरे और दक्खिन की तरफ रवाना हो गये.

8

लोहू से सने उस भयानक सर को यकायक अपने सामने पा इन्द्रदेव एकदम चौंक पड़े और घबड़ा कर उसी तरफ देखने लगे परन्तु जल्दी ही उन्होंने अपने होश-हवास दुरुस्त किये और कोठरी के बीचोबीच में पहुँचे. उन्होंने उस सर को बड़े ही गौर से देखा क्योंकि उन्हें गुमान हुआ कि यह कदाचित् उन्हीं के किसी साथी या ऐयार का होगा, पर ऐसा नहीं था और आज से पहिले उस शक्ल को उन्होंने कभी देखा न था. अच्छी तरह गौर करके जब इसका विश्वास कर लिया तो वे कुछ निश्चिंत हुए और तब इस बात को सोचने लगे कि यह सर वहाँ आया किस तरह! इधर-उधर देखते-देखते उनकी निगाह एक कागज के टुकड़े पर पड़ी जो चौकी के नीचे पड़ा हुआ था. उन्होंने उसे उठा लिया और पढ़ा, यह लिखा हुआ था, "तिलिस्मी शैतान अपने दुश्मनों से किस तरह बदला लेता है यही दिखाने के लिए यह सर इस जगह रख दिया गया है. पीछा करने वाले होशियार !"

इन्द्रदेव ने कई बार इस पुर्जे को पढ़ा और देर तक इस लिखावट पर गौर करते रहे पर कुछ समझ न सके, इसका लिखने वाला कौन है. आखिर उनके मुंह से निकला, "खैर, यह तिलिस्मी शैतान चाहे जो कोई भी हो मगर इसमें शक नहीं कि तिलिस्मी मामलों में इसकी जानकारी कम नहीं है. यहाँ तक आ पहुंचने वाला कोई मामूली कदापि नहीं हो सकता, मगर मुझे भी देखना है कि यह कितने पानी में है !"

इन्द्रदेव उस कटे सिर के पास से हटे और कमरे के दक्खिन तरफ की दीवार के पास पहुंचे, इस जगह एक आले में बनी हुई एक छोटी मूर्ति थी जिसका मुंह खुला हुआ था. वही हीरे वाली ताली इन्द्रदेव ने उसके मुँह में डाली और कई बार घुमाया जिसके साथ ही दीवार का एक पत्थर हट गया और सामने रास्ता दिखाई पड़ने लगा. इन्द्रदेव ने मूर्ति के मुँह से ताली निकाली और उस रास्ते के अन्दर घुस गए. भीतर जाते ही यह दरवाजा आप ही बन्द हो गया.

अब जिस जगह इन्द्रदेव ने अपने को पाया वह बहुत बड़े बाग के अन्दर बना हुआ एक दालान था जिसके चारों तरफ तरह-तरह की और भी बहुत सी इमारतें बनी हुई थीं पर इन्द्रदेव किसी तरफ न जाकर उसी दालान में एक तरफ बनी हुई सीढ़ियों की राह ऊपर की मंजिल में चढ़ गए और एक बड़े कमरे में पहुँचे जिसमें

चारों तरफ कितने ही खिड़की और दरवाजे थे जो सभी इस समय बन्द थे मगर ऊपर की तरफ बने हुए कई रोशनदानों की वजह से इतना चांदना आ रहा था कि वहाँ की चीजें साफ दिखाई पड़ सकें. उस कमरे में बहुत-सी विचित्र और ताज्जुब में डालने वाली चीजें दिखाई पड़ रही थीं मगर इन्द्रदेव ने किसी तरफ ध्यान न दिया और सीधे उस बीच वाले संगमर्मर के बहुत बड़े गोल टेबुल के पास चले गये जिस पर काले पत्थर की पच्चीकारी के काम का एक किसी बहुत ही बड़ी इमारत का नक्शा दिखाई पड़ रहा था. यह उस घाटी और उसके साथ की इमारतों का नक्शा था और इसे देख उस पूरे तिलिस्म का अनुमान सहज ही में किया जा सकता था. जगह-जगह बारीक अक्षरों में बहुत-सी लिखावटें भी थीं तथा और भी तरह-तरह के निशान स्थान-स्थान पर बने थे जिनका मतलब जानकारों को ही समझ में आ सकता था. इन्द्रदेव ने और किसी तरफ ध्यान न देकर बीच के एक स्थान पर अंगूठा रक्खा और जोर से दबाया. दबाने के साथ ही खटके की आवाज आई और उसी समय उस नक्शे में दो जगह लगे हुए शीशे के दो छोटे बटन तेजी के साथ चमकने लगे. इन्द्रदेव ने और भी कई जगह अंगूठे से दबाया पर कोई असर न होता देख कर बोले, " बेशक वह तिलिस्मी शैतान अपने साथियों को लेकर निकल गया. इस समय सिर्फ मैं और वह लाश जिसका कटा सिर मैं अभी देखता आ रहा हूँ इस जगह हैं और इसी से सिर्फ दो ही रोशनियाँ दिख रही हैं. अफसोस, तिलिस्मी रास्तों का बन्द करना व्यर्थ हो गया. खैर अब लौटना चाहिए."

इन्द्रदेव ने कोई कारीगरी की जिससे उन दोनों बटनों का चमकना बन्द हो गया. इसके बाद वे बीच वाले दालान में उतर आये और उसी राह से होते हुए जिधर से आये थे उस कमरे में पहुँचे जो कल-पुर्जों से भरा था. उन्होंने किसी पुर्जे को छेड़ा जिससे वह आवाज जो उस इमारत में गूँज रही थी बन्द हो गई. इसके बाद एक सुरंग का मुहाना खोल वे उस स्थान के बाहर हो गये. सुरंग के मुहाने पर उनका एक आदमी घोड़ा लिये मौजूद था. उस आदमी के सुपुर्द कुछ काम कर वे घोड़े पर सवार हुए और तेजी के साथ कैलाश-भवन की तरफ रवाना हो-कर संध्या के पहिले ही वहाँ पहुँच गये.

दूसरे दिन सुबह के समय इन्द्रदेव अपने एकान्त के कमरे में बैठे हुए कोई पुस्तक देख रहे थे जब एक नौकर ने आकर कहा, "अर्जुनसिंहजी आये हैं और

मिलना चाहते हैं." इन्द्रदेव ने कहा, "उन्हें मुलाकाती कमरे में ठहराओ, मैं अभी आया" और जब नौकर चला गया तो वे भी किताब बन्द कर वहाँ से उठ खड़े हुए और यह कहते हुए बाहर की तरफ चले, "यह अर्जुनसिंह कैसे आ पहुँचे? मालूम होता है किसी तरह शिवदत्त के कैद से इन्हें छुट्टी मिल गई."

शायद हमारे पाठक अर्जुनसिंह को भूल गये हों क्योंकि इधर बहुत दिनों से उनका कोई जिक्र नहीं आया है. ये वही अर्जुनसिंह हैं जिनको साथ लेकर इन्दुमति कैलाशभवन से बाहर निकली थीं. इन्होंने ही गौहर को गिरफ्तार किया था, इन्हीं की सुपुर्दगी में मालती ने इन्दुमति को लोहगढ़ी में छोड़ा था, और यही इन्दु के साथ शिवदत्त के सिपाहियों द्वारा पकड़े गये थे[1]. उसके बाद से इनका जिक्र फिर नहीं आया और हम नहीं कह सकते कि अब तक ये कहाँ रहे, हाँ आज हम इन्हें कैलाश भवन में देख रहे हैं. सम्भव है कि इनकी बातचीत से कुछ इनका पिछला हाल हमें मालूम हो जाय.

जिस समय इन्द्रदेव ने उस कमरे में प्रवेश किया उस समय अर्जुनसिंह बेचैनी के साथ इधर-उधर घूम-फिर रहे थे और उनके चेहरे से परेशानी तथा घबराहट झलक रही थी. इन्द्रदेव ने उन्हें देखते ही खुश होकर कहा, "वाह-वाह अर्जुन, तुम तो ऐसा गायब हुए कि कुछ पता ही नहीं! कहो इतने दिन कहाँ रहे और क्या-क्या किया?"

अर्जुन० : मैं अपना पूरा हाल अभी आपको सुनाऊँगा मगर सब के पहिले मैं यह सन्देह दूर कर लेना चाहता हूँ कि हम दोनों में कोई सूरत बदले हुए ऐयार तो नहीं है. आपके इन्द्रदेव होने में तो कोई शक ही नहीं हो सकता पर अपने परिचय के लिये मैं कहता हूँ—'कनकलता'.

इन्द्रदेव : तब मैं कहूँगा—'धूमावती'.

अर्जुन० : बस तब ठीक है, अच्छा अब सुनिए कि मैं इतने दिनों तक कहाँ रहा और क्या करता रहा.

इन्द्रदेव : यह तो मुझे मालूम हो चुका था कि तुम शिवदत्त के ऐयारों के फेर में पड़ गये हो, पर यह जानना चाहता हूँ कि तुम छूटे कैसे? मैं बहुत दिनों से इस फिक्र में था कि किसी तरह तुम्हें छुड़ाऊँ क्योंकि तुमसे कई बहुत जरूरी काम

1. देखिये भूतनाथ बारहवां भाग, सातवें बयान का अन्त.

लेते थे, मगर फुरसत नहीं मिलती थी कि कुछ कर सकूँ.

अर्जुन : आपको कैसे मालूम हुआ कि मैं शिवदत्त की कैद में था ?

इन्द्रदेव : मुझे इन्दुमति की जुवानी मालूम हुआ था जो तुम्हारे साथ ही लोहगढ़ी में गौहर की करतूत से शिवदत्त के ऐयारों द्वारा पकड़ी गई थी. भूतनाथ चालाकी से उसे तो छुड़ा लाया मगर तुम रह ही गए. मैंने जब इन्दुमति की जुवानी तुम्हारा हाल सुना तो तुमको छुड़ाने की फिक्र हुई मगर जैसाकि मैंने कहा एक तो फुरसत नहीं मिलती थी दूसरे इस बात का भी पता नहीं था कि शिवदत्त के उन ऐयारों ने अपना अड्डा कहाँ बनाया हुआ है जो यहाँ आकर इस कदर उपद्रव मचाए हुए हैं. इधर जो कुछ मुसीबतें मुझ पर और राजा गोपाल-सिंह पर आईं वह तो शायद तुम्हें मालूम ही हो चुका होगा.

अर्जुन : हाँ, मैंने वह सब हाल सुना. अफसोस, कुछ कहा नहीं जा सकता कि परमात्मा की क्या मरजी है! खैर मैं अपना हाल बताता हूँ. मैं तब से उसी शिवदत्त की कैद में था. उसके आदमियों ने मुझे एक गुफा में इस तरह बन्द कर रक्खा था कि निकलने का कोई मौका ही नहीं मिलता था. कल आपके आदमी महावीर ने मुझे छुड़ाया तब मैं यहाँ तक आ सका हूँ.

इन्द्रदेव : (ताज्जुब से) महावीर ने तुम्हें छुड़ाया ? सो कैसे और वह खुद अब कहाँ है ? मैंने उसे एक बहुत ही जरूरी काम से भेजा था पर वह लौट कर वापस ही नहीं आया.

अर्जुन : मुझे वह हाल मालूम है. आपने उसे रथ देकर प्रभाकरसिंह की आज्ञानुसार काम करने को भेजा था और उसकी मदद के लिए कई आदमी भी दिए थे.

इन्द्रदेव : हाँ, तब फिर क्या हुआ ? मुझे इसके बाद का हाल कुछ भी मालूम नहीं है.

अर्जुन : जो कुछ मुझे मालूम है सो मैं बताता हूँ. प्रभाकरसिंह ने बड़ी चालाकी से आपकी स्त्री को दुष्ट दारोगा के कब्जे से छुड़ा लिया और जमानिया से बाहर निकल गए. वहाँ महावीर रथ लिए मौजूद था जिस पर प्रभाकरसिंह आपकी स्त्री को लिए सवार हुए और तिलिस्मी घाटी की तरफ रवाना हुए तथा एक आदमी उन्होंने आपकी तरफ यह समाचार देने के लिए भेजा कि वे सर्यू को छुड़ा कर तिलिस्मी घाटी की तरफ जा रहे हैं. भाग्यवश उस समय उसी जंगल

में छिपे हुए शिवदत्त के कई ऐयार मौजूद थे. उन्होंने प्रभाकरसिंह और सर्यू को देख लिया और उस आदमी को जो आपके पास भेजा गया था धोखा दे कुछ हाल भी जान लिया. इसके बाद वे प्रभाकरसिंह और सर्यू को पकड़ने की फिक्र में लगे. जो चार सवार आपके रथ के साथ थे उन्हें उन लोगों ने पकड़ा और तब उनकी सूरत बन खुद रथ के साथ हो गये. मगर न जाने किस तरह प्रभाकरसिंह को कुछ शक हो गया, वे खुद तो सर्यू को लेकर लोहगढ़ी में रह गये और महावीर को अपनी सूरत बना अर्थात वही साधु का सा रूप धरा कर रथ पर भेज दिया. शिवदत्त के आदमियों ने उसी को प्रभाकरसिंह समझा और रथ पर ले भागे. जब डेरे पर पहुँचे और जांच की तो भण्डा फूटा और प्रभाकरसिंह की जगह महावीर को पाकर बहुत झल्लाये मगर कर ही क्या सकते थे. आठ पहर तक महावीर उनकी कैद में रहा. बीच ही में उस आदमी से भी मुलाकात हुई जो आपके पास समाचार देकर भेजा गया था. आज रात किसी चालाकी से उन दोनों ने अपने को छुड़ा लिया और तब मुझे भी कैद से छुट्टी दी. हम लोगों को यह खबर न थी कि आप कहाँ पर हैं अस्तु महावीर तो लोहगढ़ी की तरफ गया, वह दूसरा आदमी जमानिया गया, और मैं इधर को रवाना हुआ. नियत यह थी कि जल्दी से जल्दी आपको सब खबर लग जाय और आप जो मुनासिब समझें सो करें. बारे यहाँ आने पर आपसे मुलाकात हो गई. बस इतना ही तो मेरा हाल है !

इन्द्रदेव बड़े गौर से मगर चुपचाप सब हाल सुन रहे थे. जब अर्जुनसिंह की बात खतम हुई तो वे देर तक कुछ सोचते रहे और इसके बाद बोले, "क्या प्रभाकरसिंह और सर्यू को लोहगढ़ी में ही छोड़ कर महावीर उनकी शक्ल बना कर शिवदत्त के आदमियों के पास आया था ?"

अर्जुन० : हां मगर आपके ढंग से मालूम होता है कि वे अभी तक आपके पास नहीं पहुँचे !

इन्द्रदेव : नहीं, उनकी कुछ भी खबर मुझे नहीं है और मालूम होता है कि या तो दुश्मनों के डर से वे अभी तक लोहगढ़ी के बाहर ही नहीं निकले और या फिर किसी नई मुसीबत में फँस गए.

अर्जुन० : यह घटना परसों की है और जब आज तक वे आपके पास नहीं पहुँचे तो जरूर ऐसी ही कोई बात मालूम होती है. ऐसी हालत में आपको सबसे

पहिले इसी की जाँच करनी चाहिए कि वे लोहगढ़ी में हैं या नहीं.

इन्द्र० : बेशक, और इसके लिए मैं इसी समय वहाँ जाना चाहता हूँ.

अर्जुन० : अगर आज्ञा दीजिए तो मैं आपके साथ चलूँ.

इन्द्र० : नहीं, अभी तुम दूर से चले आ रहे हो और थके-मांदे भी हो, इस समय कुछ देर तक सुस्ताना ही तुम्हारे लिए बहुत अच्छा होगा. तुम अभी यहीं रहो, यहाँ सब तरह का आराम मिलेगा, और मैं लोहगढ़ी जाता हूँ, अगर वहाँ दोनों मिल गये तो उत्तम ही है नहीं तो यहीं लौट कर आऊँगा और तब सलाह करूँगा कि अब क्या करना चाहिए.

अर्जुन० : अच्छी बात है, आप जो कहें मैं वैसा ही करने को तैयार हूँ.

इन्द्रदेव ने अर्जुनसिंह के नहाने-धोने और खाने का प्रबन्ध कर दिया और तब एक तेज़ घोड़े पर सवार हो अकेले ही लोहगढ़ी की तरफ रवाना हो गए.

9

दयाराम और जमना-सरस्वती ने उस बाग और बारहदरी को ही अपना मकान या कैदखाना माना और उसी में अपना समय काटने लगे, क्योंकि कई दिन चारों तरफ अच्छी तरह घूमने और चक्कर लगा लेने के बाद उन्हें विश्वास हो गया कि वह बाग और इसके चारों तरफ की इमारतें तिलिस्मी हैं और इनके बाहर निकलना उन लोगों के लिये असम्भव है.

हम ऊपर लिख आए हैं कि इस बाग में मेवों के पेड़ बहुतायत से थे और पानी का एक चश्मा भी बह रहा था अस्तु इन लोगों को भूखे रहने की नौबत नहीं आ सकती थी, पर हाँ मौसिम की ज्यादतियों की तकलीफ जरूर सहनी पड़ती थी क्योंकि इसमें रहने लायक स्थान सिर्फ बीच में बनी वह बारहदरी मात्र ही थी जो यद्यपि काफी बड़ी तो थी पर चारों तरफ से खुली रहने के कारण न तो गर्मी की लू, न बरसात की बौछार और न जाड़े की बदन ठिठुराने वाली हवा से ही उन्हें बचा सकती थी. फिर भी अपने उद्योग से इन तीनों ने बारहदरी के एक कोने को मिट्टी के ढोंके, पेड़ों को डालियों तथा पत्तों से घेर-घार कर कुछ आड़ बना ली और इसी में अपने कैद के दिन काटने लगे, अस्तु.

इस बाग में रहते-रहते इन्हें महीनों हो गये और धीरे-धीरे महीनों के वर्षों में

परिणत होने की नौबत आ गई. बाहर क्या हो रहा है इसकी इन्हें मुतलक खबर न थी क्योंकि यहाँ किसी भी गैर की सूरत इन्हें दिखाई नहीं पड़ सकती थी और संध्या के बाद ही इस कदर सन्नाटा छा जाता था कि अगर ये लोग तीन आदमी न होकर कोई एक ही होता तो ऐसी अकेली और भयावनी जगह में घबड़ा कर जरूर पागल हो जाता पर ये कई होने की वजह से ही किसी प्रकार अपने दिन काट लेते थे. फिर भी यहाँ की बेकारी और अपनी लाचारी इन्हें बहुत खलती थी और बराबर अपने छूटने की तरकीब सोचा करते थे, मगर लाचार थे कि यहाँ से बाहर होने की तरकीब नहीं दिखाई पड़ती थी.

दोपहर का वक्त है. बारहदरी के सामने की जमीन पर पेड़ों की छोटी-छोटी डालियाँ रख कर और उन्हें बटी हुई घास की रस्सी से बाँध कर एक सीढ़ी बनाने की कोशिश करते हुए दयाराम दिखाई पड़ रहे हैं और उनके बाईं तरफ कुछ हट कर जमना और सरस्वती बैठी हुई हैं जो घास-पात बटोर कर उसकी रस्सियाँ बट रही हैं. काम करने के साथ ही इन तीनों में बातचीत भी हो रही है.

जमना : क्या आपको विश्वास है कि इस रस्सी और सीढ़ी की मदद से आप इस जगह के बाहर हो सकेंगे ?

सरस्वती : अगर बाहर न भी हो सके तो कम-से-कम (हाथ से बता कर) उस मकान तक तो पहुँच ही सकेंगे जो यहाँ से दिखाई दे रहा है. और वहाँ तक अगर हम जा सके तथा उन कमरों में से किसी को खोल सके जो दिखाई पड़ रहे हैं तो यहाँ की बनिस्बत आराम ही से रहेंगे.

जमना : यह क्योंकर कह सकते हैं, मुमकिन है कि वहाँ खाने-पीने की कोई चीज हमें न मिले. यहाँ के मेवे के पेड़ों और इस झरने की बदौलत सब तरह की तकलीफ होने पर भी कम-से-कम भूख-प्यास की तकलीफ हमें नहीं है. वहाँ क्या जाने यह बात होगी कि नहीं.

सरस्वती : अगर मान लिया जाय कि वहाँ खाने-पीने का प्रबन्ध न हो तो भी यह जगह तो बनी ही रहेगी. जिस तरह यहाँ से वहाँ जायेंगे उसी तरह से यहाँ लौट भी आ सकेंगे.

जमना : इसका कौन ठिकाना ! यह तिलिस्मी जमीन है, यहाँ कदम-कदम पर जोखिम है, क्या जाने वहाँ जाकर लौटना मुमकिन हो या न हो.

सरस्वती : खैर तो फिर जो कुछ होगा झेलेंगे, मुसीबत, आफत और जोखिम

तो सभी जगह हैं, क्या पलंग पर पड़े-पड़े आदमी मर नहीं जाते. अगर इस तरह बात-बात पर डरा करें तो कुछ काम ही नहीं हो सकता.

दयाराम अपना काम करते जाते थे और उनकी बातें भी सुनते जाते थे. सरस्वती की आखिरी बात सुन कर वह बोले, "बेशक ऐसा ही है, और इसीलिये उद्योग को इतना महत्व दिया गया है. उच्चाभिलाषी कभी जोखिम या मुसीबत से नहीं डरते और जो डरते हैं वे कुछ नहीं कर सकते. अस्तु हर एक को हर वक्त आफत सहने के लिये तैयार रहना चाहिये. अपनी ही तरफ देखो, हम लोगों ने किसके साथ क्या बुराई की थी ? किसी से कुछ नहीं, फिर भी कैसी मुसीबतें हम लोगों को झेलनी पड़ीं और अब तक भी बराबर उठानी पड़ रही हैं. ये क्या हमने जान-बूझ कर बुलाई हैं ? यह तो आपसे आप हमारे सर पर आ पड़ी हैं और हमें झेलनी ही पड़ेंगी, हम चाहें या न चाहें. इसी तरह हर एक नये काम में होता है, अगर उसके द्वारा हम पर कोई आफत आने वाली है तो आकर ही रहेगी पर बहुत हालतों में यही देखा जाता है कि उद्योगशीलों की परमात्मा भी सहायता करता है, अस्तु कोशिश से बाज न आना चाहिये, फल चाहे जो हो."

जमना : जी हाँ, यह तो कहना ठीक है मगर आदमी को अपनी बुद्धि का भी साथ कभी न छोड़ना चाहिये. अगर हम जान-बूझ कर आग छूएँगे तो हमारा हाथ जरूर ही जलेगा.

दयाराम इसका कुछ जवाब देना ही चाहते थे कि यकायक रुक गये और अपने सामने की इमारत की तरफ गौर से देख कर बोले, "यह क्या ! वहाँ कोई औरत देख रहा हूँ या मेरी आँखें मुझे धोखा दे रही हैं ! !"

जमना और सरस्वती ने भी यह सुन ताज्जुब से उसी तरफ देखा और साथ ही उनके मुँह से भी एक आश्चर्य की आवाज निकल गई. हम ऊपर लिख आये हैं कि जिस बाग में ये लोग थे उसके उत्तर और पूरब के कोने में काले पत्थर का एक ऊँचा बुर्ज था जिसके सिरे पर से लोहे का एक खंभा ऊपर की तरफ निकला हुआ था जिसके साथ बहुत-सी तारें बंधी हुई थीं. इस समय उसी बुर्ज या बारहदरी पर खड़ी हुई एक औरत इन लोगों को दिखाई पड़ी जो एकटक इन्हीं की तरफ देख रही थी.

कुछ देर के बाद वह उधर से घूमी और पूरब की तरफ मुड़ी. मालूम होता है कि उधर कोई आश्चर्य की चीज उसे दिखाई पड़ी क्योंकि उधर देखते ही वह चौंक

पड़ी और एक तेज निगाह उस तरफ डालते ही हट कर आँखों की ओट हो गई.

उसके हटते ही दयाराम अपनी जगह से उठ खड़े हुए और यह कह कि 'मैं उस तरफ जाकर देखता हूँ कि यह क्या मामला है और यह औरत कौन है'— बाग के उसी कोने की तरफ चले जिधर वह बुर्ज था. बात-की-बात में वे उस जगह पहुँच गए और तब उस बुर्ज की तरफ बड़े गौर से देखने लगे मगर किसी की सूरत दिखाई न पड़ी. आखिर उन्होंने जोर से पुकार कर कहा, "हम लोग बरसों से यहां बन्द कैदी हैं, क्या वह जो अभी दिखाई पड़ी थीं हमारी कुछ मदद कर सकती हैं." कई बार जोर-जोर से उन्होंने पुकारा और आवाजें दीं मगर सब व्यर्थ हुआ. बाग की चारदीवारी के साथ-साथ वे चारों तरफ घूम भी आये मगर कहीं किसी की भी शक्ल दिखाई न पड़ी, लाचार वे पुनः उसी जगह लौट आये जहाँ जमना-सरस्वती को छोड़ गए थे और उनसे बोले, "मैंने कई आवाजें दीं मगर कोई जवाब न मिला, न-मालूम वह कौन औरत थी!" बहुत देर तक वे लोग उसी औरत के बारे में बातें करते रहे और अन्त में संध्या हो जाने पर अपने मामूली कामों में लगे परंतु इतना इन लोगों ने निश्चय कर लिया कि यदि कभी वह सीढ़ी और रस्सा बन गया जो वे लोग तैयार कर रहे हैं तो एक बार जरूर उस जगह तक पहुँचने की कोशिश करेंगे जहाँ वह औरत दिखाई पड़ी थी. सम्भव है कि वहाँ से बाहर निकलने की कोई सूरत निकल आये.

आधी रात का समय है. जमना, सरस्वती और दयाराम उस दालान में बेखबर सोये हुए हैं. चन्द्रमा अभी पेड़ की ओट से निकला है. यकायक कहीं से भारी धमाका और एक चीख की आवाज उस जगह के सन्नाटे को तोड़ती हुई गूंज उठी जिसने औरों को नहीं मगर सरस्वती की कमजोर नींद तुरत तोड़ दी. करवट बदल कर वह उठ बैठी और ताज्जुब के साथ चारों तरफ देखने लगी. यकायक उसकी निगाह उसी बारहदरी की तरफ चली गई जहाँ दिन को वह औरत दिखाई पड़ी थी, और यह देख सरस्वती को बड़ा ही ताज्जुब हुआ कि उसके ऊपर जो खम्भा था उसके सिरे पर से बेतरह तेज रोशनी निकल रही है. गौर करने से सरस्वती को मालूम हुआ कि उसके सिरे पर जो चिड़िया की शक्ल बनी हुई है उसी की आँखों में से वह रोशनी निकल रही थी. सरस्वती ने सोचा कि जरूर अब कोई विचित्र बात देखने में आवेगी और इसी नीयत से उसने पास ही नींद में बेखबर पड़े हुए जमना और दयाराम को उठाना चाहा मगर उसी समय यकायक

वह रोशनी जिस तरह दिखाई पड़ी थी उसी तरह बुझ भी गई, अस्तु सरस्वती रुक गई और इस बात की राह देखने लगी कि यदि कोई और नई बात हो तो उन लोगों को जगावे नहीं तो सुबह इसका जिक्र कर देगी, मगर उसने अपनी निगाह उसी तरफ रक्खी.

थोड़ी देर के बाद सरस्वती को बाग के पूरब तरफ कुछ रोशनी दिखाई पड़ी और गौर करने से मालूम हुआ कि यह उस इमारत में से आ रही है जिसके अंदर खुशनुमा बाग बना हुआ है. चूँकि उस जगह बाग की चहारदीवारी में बहुत-सी खिड़कियाँ थीं जिनकी राह उस इमारत के भीतर का काफी हिस्सा दिखाई पड़ सकता था अस्तु सरस्वती को यह उम्मीद हुई कि वहाँ जाने पर कोई-न-कोई नई बात देखेगी. वह उठ खड़ी हुई और कदम दबाए तथा पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाये हुए उसी तरफ चली.

थोड़ी ही देर में सरस्वती उस जगह पहुँच गई और उन कई दरवाजों में से एक की राह भीतर की तरफ देखने लगी. हम पहिले लिख आये हैं कि इस तरफ एक लम्बी-चौड़ी इमारत थी जिसके कई दरवाजे बाग की तरफ पड़ते थे जिसमें लोहे के मोटे छड़ लगे रहने के कारण यद्यपि बाग में से किसी आदमी का अन्दर जाना असम्भव था मगर दरवाजे खुले रहने की हालत में खड़ा आदमी भीतर का हाल बहुत कुछ देख सकता था. इस समय सरस्वती ने उन्हीं में से एक दरवाजे की राह अन्दर जो कुछ देखा वह एक कौतूहलप्रद घटना थी.

सरस्वती ने देखा कि भीतर के संगमर्मर के आंगन के बीच बावली और उसके चारों तरफ का बनावटी बाग इस समय रोशनी से जगमग हो रहे हैं जो किस चीज की है यह वह देख नहीं सकती थी क्योंकि वह रोशनी आड़ में पड़ती थी मगर फिर भी अन्दाज से सरस्वती यह समझ सकती थी कि रोशनी कुछ ऊँचे पर और उसी दीवार के साथ लगी किसी चीज की थी जिसके बाहर वह खड़ी थी और साथ ही इतनी तेज थी कि वहाँ का एक-एक पत्ता साफ नजर आ रहा था. इस रोशनी में सरस्वती वहाँ की हर एक चीज खूब गौर से देखने लगी. यह जान उसे ताज्जुब हुआ कि उस बनावटी बाग की हर एक चीज हरकत कर रही है. पेड़ों की पत्तियाँ और टहनियाँ हिल रही थीं मानों मन्द हवा उसमें से बह रही हो, उन पर बैठने वाली बनावटी चिड़ियें इधर से उधर फुदक रही थीं और कभी-कभी कोई नाजुक चिड़िया किसी टहनी पर बैठ कर मस्तानी आवाज में चहकने

भी लग जाती थी. नीचे जो तरह-तरह के बनावटी जानवर बने हुए थे उनमें से भी कई ठीक असली जानवरों की तरह घूम-फिर रहे थे, कहीं ऊँची घास में दबता हुआ आगे बढ़ने वाला चीता दिखता था तो कहीं पेड़ों की डालियाँ तोड़ता हुआ हाथी, कहीं हरी घास चरते हुए हरिन घूमते थे तो कहीं फन काढ़े हुए सांप. गरज कि इस समय वह छोटा बनावटी बाग या जंगल किसी असली जंगल का नमूना बन रहा था. सरस्वती बड़े गौर और ताज्जुब से यह देख रही थी और साथ ही साथ इस बात को भी जानने की कोशिश कर रही थी कि इन सब का सबब क्या है क्योंकि अभी तक यद्यपि सैंकड़ों दफे उन लोगों ने यह जगह तथा यह बनावटी बाग देखा था पर आज तक कभी यह अजीब बात नहीं देखी थी.

सब तरफ से घूमती-फिरती सरस्वती की निगाह उस औरत की तरफ गई जो एक कोने में तीर-कमान लिए खड़ी बनाई गई थी. यद्यपि आज तक कई बार देखने पर भी उसका एक ही भाव और स्थिर आकृति देख कर सरस्वती को निश्चय हो चुका था कि और चीजों की तरह वह औरत भी बनावटी है पर इस समय वह भी चलती-फिरती नजर आ रही थी. उसने अपनी कमान पर का तीर तरकस में डाल लिया था और कमान बांह में पहिन कर सिर नीचा किये इस तरह इधर से उधर टहल रही थी मानो किसी बड़ी ही भारी फिक्र में पड़ी हुई हो. सरस्वती के देखते ही देखते उसने कई चक्कर उस बनावटी बाग में लगाये और अन्त में एक ऐसी जगह जाकर खड़ी हो गई जहाँ पत्थर और कंकड़ों के ढोकों से एक छोटा बनावटी पहाड़ बना कर पहाड़ी दृश्य दिखलाया गया था. इस नकली पहाड़ी के एक बगल में एक तंग गुफा का मुँह दिखाई पड़ रहा था जिसके मुहाने पर पहुँचकर वह और रुक गई और कुछ देर तक बेचैनी के साथ इधर-उधर देखने के बाद उसी गुफा के अन्दर घुस गयी.

लगभग आधी घड़ी के बाद सरस्वती ने पुनः उस औरत को उस गुफा के बाहर निकलते देखा मगर इस समय वह अकेली न थी बल्कि उसके साथ एक औरत और थी. इस नई औरत का कद, पहिरावा और चालढाल भी उस पहिली ही औरत की तरह था और यकायक देखकर इसके बारे में भी शक हो सकता था कि यह असली है या बनावटी. मगर सरस्वती ने यह विश्वास कर लिया कि पहली औरत की तरह यह दूसरी भी बनावटी है और इस नकली बाग की किसी तिलिस्मी कार्रवाई के सबब से हरकत कर रही है. वे दोनों औरतें घूमती-फिरती

सरस्वती के सामने कुछ दूर पर आकर रुक गईं और आपुस में कुछ बातचीत करने लगीं. आवाज यद्यपि बहुत पतली और धीमी थी मगर कुछ देर बाद सरस्वती को उसका मतलब समझ में आने लगा और वह गौर से उनकी बातें सुनने लगी.

एक औरत : तो क्या सचमुच इस तिलिस्म की उम्र समाप्त हो गई ?

दूसरी : हाँ, क्योंकि इसका तोड़ने वाला आ पहुँचा.

पहिली : मगर अब हम लोगों की क्या गति होगी ?

दूसरी : या तो हमें अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा और या किसी कैद में सड़ते हुए जिन्दगी बितानी होगी.

पहिली : अब इससे बचने का क्या कोई उपाय नहीं है ? हमलोग अगर मारे गए या कैद हो गए तो फिर उन लोगों की हिफाजत कौन करेगा जो हमारे सुपुर्द किये गये हैं !

दूसरी : इसका तो अब एक ही उपाय है.

पहिली : वह क्या ?

दूसरी : तिलिस्म तोड़ने वाले को जरूरी होगा कि वह यहाँ आवे और उस शेर की आँख में तीर मारे जो उस झाड़ी में खड़ा है. अगर वह तीर निशाने पर लगा तो वह शेर उस बावली वाले बारहसिंघे पर हमला करेगा जिसके मारे जाते ही बावली सूख जायेगी और बाहर जाने का रास्ता निकल आवेगा. अगर ऐसा हुआ तो हम लोग कहीं के भी न रहेंगे, मगर ऐसा होने के पहिले-पहिले ही अगर हम लोग तीर मार कर उस तिलिस्म तोड़ने वाले को जख्मी कर सकें जो यहाँ आकर यह सब उपद्रव करेगा तो मुमकिन है कि उसका तीर बहक जाय और निशाने पर न लगे, तब वह खुद इस तिलिस्म में फंस जायगा और हमारा कैदी बनेगा.

पहिली : हाँ यह तर्कीब तो अच्छी है, फिर ऐसा ही करो, तुम्हारे पास तो तीर-कमान मौजूद ही हैं, मैं भी ले आती हूँ. हम दोनों मिल कर तीर चलावें तो जरूर कामयाबी होगी.

दूसरी : हाँ जरूर. उस गुफा में से तुम भी एक कमान और कुछ तीर ले आओ, मैं यहीं हूँ.

पहिली औरत ने जवाब में सिर हिलाया और पीछे लौट कर उसी गुफा में घुस गई जिसके अन्दर से वह निकली थी.

सरस्वती इन लोगों की बात सुन कर बड़े फेर में पड़ गई. उसने सोचा कि अगर वास्तव में कोई आदमी तिलिस्म तोड़ने आ रहा है और उसके हाथ से यह तिलिस्म टूट सकेगा तो इसमें शक नहीं कि हमलोगों को भी कैद से छुट्टी मिलेगी मगर ये दोनों कम्बख्त तो उसके काम में बाधा देती दिखाई पड़ती हैं. और अगर ईश्वर न करे इनका कहना ठीक निकला और इन्होंने उसे जख्मी कर दिया तो हम लोगों का छूटना असम्भव हो जाएगा. अस्तु इन्हें उस काम से रोकने के लिए कोई तर्कीब करनी चाहिए. वह बेचैनी के साथ चारों तरफ देखने और सोचने लगी कि क्या किया जा सकता है.

यकायक ऊपर की तरफ से किसी के ताली बजाने की आवाज सुनाई पड़ी. सरस्वती ने चौंककर ऊपर देखा तो एक काली शक्ल दिखाई पड़ी जो ऊपर की मंजिल से किसी खिड़की या दरवाजे की राह नीचे झाँक रही थी. इसका हाथ-पैर और तमाम बदन बल्कि मुँह तक काले कपड़ों से इस तरह ढँका हुआ था कि सरस्वती यह भी नहीं जान सकी कि यह औरत है या मर्द मगर वह काली शक्ल भी सिर्फ कुछ ही देर के लिए इसे दिखाई पड़ी. सरस्वती को अपनी तरफ देखते पा उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया जिसमें कोई कागज था और उसे नीचे की तरफ फेंक वहाँ से हट गई. सरस्वती कुछ देर तक इस आशा में ऊपर देखती रही कि शायद वह शक्ल फिर दिखाई पड़े मगर जब कोई नहीं दिखा तो उसने वह पुर्जा उठा लिया और खोल कर देखा. जल्दी में लिखा हुआ टेढ़ा-मेढ़ा एक छोटा-सा मजमून उसे दिखाई पड़ा जिसे कमरे के अन्दर की रोशनी की मदद से उसने कुछ ही कोशिश में पढ़ लिया, यह लिखा हुआ था, "तुम लोग सब कोई उस पूरब तरफ वाले चबूतरे पर चले जाओ जिस पर शेर की मूरत बनी हुई है, खबरदार! यहाँ एक पल भी न रुको!"

सरस्वती कई बार उस मजमून को पढ़ गई मगर लिखावट पर खूब गौर करने पर भी वह न जान सकी कि यह पुर्जा किसका लिखा हुआ है. वह इस सोच में पड़ गई कि इसके लिखे अनुसार उसका यहाँ से चले जाना उचित होगा या इसी जगह रुक उन दोनों औरतों की धोखेबाजी से तिलिस्म तोड़ने वाले को होशियार करना मुनासिब होगा. वह इसी उधेड़बुन में पड़ी हुई थी कि यकायक इमारत के अन्दर कहीं से शोरगुल की आवाज आने लगी जो इस तरह की थी मानों बहुत-से कल-पुरजे कहीं चल रहे हों. यह आवाज सुनते ही वह समझ गई कि कोई नई

तिलिस्मी कार्रवाई अब शुरू हुआ ही चाहती है.

क्या करे, रुके या जाकर दयाराम और जमुना को होशियार करे, आदि बातें सरस्वती खड़ी सोच ही रही थी कि ऊपरी तरफ से चुटकी की आवाज आई और उधर देखने से वही काली शक्ल पुनः दिखाई पड़ी जो इस समय हाथ के इशारे से उसे वहाँ से चले जाने को कह रही थी. मगर सरस्वती ने उसे देख धीमी आवाज में कहा, "अगर आप इस तिलिस्म को तोड़ने आये हैं तो उन दोनों औरतों से होशियार रहियेगा जिनको मैं यहाँ से देख रही हूँ और जो धोखे में आपके ऊपर वार करेंगी !" सरस्वती की यह बात सुन वह काली शक्ल खिलखिला कर हँसी और एक बार फिर उसे हट जाने का इशारा कर पीछे हटकर गायब हो गई. सरस्वती ने ऊपर से दरवाजा बन्द होने की आवाज सुनी और वह घूमी ही थी कि किसी ने उसके कंधे पर हाथ रक्खा. उसने चौंककर देखा तो दयाराम और जमुना को पास खड़े पाया. दयाराम ने उससे पूछा, "तुम यहाँ कब से खड़ी हो और यह आवाज कैसी हो रही है ?" बहुत ही संक्षेप में सरस्वती ने सब हाल सुनाया और काली शक्ल से पुर्जा पाने का हाल कह वह कागज भी दयाराम के हाथ में दे दिया. दयाराम यह पढ़ने के लिए कमरे की तरफ बढ़ ही रहे थे कि यकायक वह भारी आवाज जो चारों तरफ फैल रही थी बहुत तेज होकर बन्द हो गई और दरवाजा भी एक झोंके के साथ बन्द हो गया जिसकी राह सरस्वती भीतर का हाल देख रही थी. जरा देर के लिए सन्नाटा हो गया और तब किसी औरत के चिल्लाने की आवाज आई जिसके साथ एक शेर की भयानक गरज भी मिली हुई थी. इस आवाज का गूँजना अभी बन्द नहीं हुआ था कि एकाएक उस मकान की दीवारें और वहाँ की जमीन इस तरह झोंके खाने लगी मानों भूचाल आया हो. दयाराम ने यह देखते ही कहा, "अब यहाँ ठहरना मुनासिब नहीं है, हमें वहीं चले जाना चाहिए जहाँ जाने को वह काली शक्ल कह गई है !"

पाठकों को याद होगा कि इस बाग में जगह-जगह बहुत-से चबूतरे बने हुए थे जिनके बीचोबीच में एक-एक खंभा था और उस पर किसी जानवर की मूरत बैठाई हुई थी. बीच वाले दालान के दाहिने तरफ काले पत्थर का एक चबूतरा था जिस पर कोई दो हाथ ऊँचे खंभे पर एक कद्दावर शेर की मूरत बनी हुई थी. जमना, सरस्वती और दयाराम उस इमारत के पास से हट कर तेजी के साथ इसी चबूतरे पर आ पहुँचे और उस मूरत के पास खड़े होकर उस इमारत की तरफ

देखने लगे. इमारत का हिलना अभी तक बन्द नहीं हुआ था और वह ऐसे जोर-जोर से झोंके खा रही थी कि मालूम होता था कि दम-के-दम में जमीन पर गिर-कर बरबाद हो जायेगी. तरह-तरह की विचित्र और डरावनी आवाजें उसके अन्दर से आ रही थीं और उसके हिलने की धमक से इतनी दूर का यह चौतरा भी डगमगा रहा था. थोड़ी देर बाद इमारत का हिलना तो कुछ कम हो गया मगर उसके अन्दर से आग के बड़े-बड़े शोले निकल कर ऊपर की तरफ उठने लगे.

दयाराम, जमुना और सरस्वती इमारत का यह विचित्र तमाशा देख ही रहे थे कि उनके पैरों में एक तरह की झुनझुनी-सी आने लगी जो शीघ्र ही यहाँ तक बढ़ी कि उनका खड़ा रहना मुश्किल हो गया. कुछ देर तक तो उन लोगों ने अपने को सम्भाला, पर आखिर लाचार हो गये और जमीन पर बैठ जाना पड़ा. उसी समय उन्हें मालूम हुआ कि वह चबूतरा धीरे-धीरे घूम रहा है. यह देख उन्हें डर मालूम हुआ और उन्होंने उस पर से उतर जाना चाहा पर उनके हाथ-पाँव बेकार हो गये थे और वे अपनी जगह से एक कदम भी हटने से लाचार थे.

चबूतरे के घूमने की तेजी धीरे-धीरे बढ़ने लगी और अन्त में यहाँ तक बढ़ी कि सर में चक्कर आने के सबब में तीनों आदमी बेहोश हो गए. यकायक उस इमारत की तरफ से एक बड़ी भयानक आवाज आई, मालूम हुआ जैसे वह समूची इमारत फूट गई हो. आग की एक बड़ी ऊँची लपट आसमान की तरफ उठी और उसी समय वह चबूतरा जिस पर ये तीनों आदमी थे एक भारी आवाज के साथ जमीन के अन्दर धंस गया.

10

जिस समय महाबीर की जुबानी प्रभाकरसिंह को मालूम हुआ कि उनके साथ वाले चारों सवार पकड़ लिए गए और रथ के साथ अब जो सवार हैं वे कोई दूसरे ही हैं और शायद उन्हें गिरफ्तार करने के लिए आए हैं तो एक बार तो थोड़ी देर के लिए वे घबड़ा गए मगर शीघ्र ही उन्होंने अपने को चैतन्य किया और यह भी सोच निकाला कि अब क्या करना मुनासिब होगा.

अगर वे अकेले होते तो प्रभाकरसिंह इन चार क्या सौ सिपाहियों को भी कुछ न समझते और जरूरत पड़ती तो लड़-भिड़ कर निकल जाने की हिम्मत रखते

मगर कमजोर सर्यू के सबब से वे ऐसा करने से लाचार थे अस्तु इस समय किसी तरह इन लोगों को धोखा देकर वहाँ से हटा देना ही उन्हें बहुत जरूरी मालूम हो रहा था और इसकी उन्होंने बहुत अच्छी तर्कीब भी सोच निकाली. लोहगढ़ी के पीछे की तरफ महावीर को ले जाकर वे एक आड़ की जगह में पहुँचे और तब उन्होंने महावीर को अपनी सूरत बना लेने को कहा. महावीर जो वास्तव में इन्द्रदेव का ऐयार था उनका मतलब समझ गया और बात-की-बात में उसने अपनी सूरत प्रभाकरसिंह की-सी बना ली. पाठकों को याद होगा कि प्रभाकरसिंह एक साधु का वेष धारण करके दारोगा के पास गये और सर्यू को छुड़ा लाये थे अस्तु महावीर भी देखते-देखते साधू बन गया और प्रभाकरसिंह की पोशाक पहिन ठीक उन्हीं की तरह हो गया. उस समय प्रभाकरसिंह ने अपना चेहरा धोकर साफ कर लिया और महावीर के कपड़े खुद पहिन कर बोले, "बस अब तुम इसी ठाठ में जाकर उस रथ पर बैठ जाओ और जहाँ वे लोग ले जाँय बेउज्र चले जाओ. उन लोगों के हट जाने पर मैं सर्यू मासी को सहज में निकाल ले जाऊँगा और तुम भी यह जान सकोगे कि वे लोग कौन हैं. किसी बात की फिक्र न करना और न किसी तरह का डर मानना. मैं बहुत जल्द जहाँ कहीं भी तुम रहोगे खोज निकालूँगा और अगर तुम कैद हो गये तो छुड़ा भी लूँगा." महावीर ने सुन कर कहा, "आप मेरे वास्ते किसी तरह की फिक्र न करिए, इस समय सबसे जरूरी बात बहूजी की रक्षा करना है सो उन्हीं की आप फिक्र करिए, मैं अपना बचाव आप ही कर लूँगा." प्रभाकरसिंह ने दो-चार बातें महावीर को और समझाईं और तब उसे रथ तथा सवारों की तरफ भेज कर आप लोहगढ़ी के अन्दर चले गए जहाँ सर्यू को छोड़ गए थे. बेचारी सर्यू उसी जगह बैठी हुई थी जहाँ प्रभाकरसिंह उसे छोड़ गए थे. प्रभाकरसिंह ने उसे सब हाल सुना कर दम-दिलासा दिया और कहा, "अब बाकी रात इसी जगह बिता देना मुनासिब है, कल किसी समय यहाँ से निकल चलेंगे." जो कुछ रात बच गई थी दोनों ने बातचीत में बिता दी और सुबह होने पर जरूरी कामों से निपटने तथा स्नान-ध्यान आदि की फिक्र में लगे.

हम पहिले लिख चुके हैं कि लोहगढ़ी की यह इमारत बाहर से जैसी छोटी, सादा और मामूली मालूम होती थी भीतर से वैसी नहीं थी क्योंकि इसका बहुत बड़ा हिस्सा जमीन के अन्दर था और सुरंगों और तहखानों की राह वहाँ जाना

पड़ता था. हम यह भी लिख आए हैं कि लोहगढ़ी की मुख्य इमारत एक छोटे बाग के अन्दर थी जिसे चारों तरफ से लोहे की ऊँची दीवारों ने घेरा हुआ था. इस बाग में पानी के लिए एक बावली भी बनी हुई थी. सर्यू और प्रभाकरसिंह ने जरूरी कामों से निपट इसी बावली में स्नान किया और बाग में जो एकाध फल के पेड़ थे उन्हीं के फल खाकर कुछ आहार भी किया. इसके बाद अपने कपड़े सूखने को डाल दिये और एक जगह बैठ कर आपस में सलाह करने लगे कि किस तरह यहाँ से बाहर होना चाहिए.

प्रभाकरसिंह को यह मालूम था कि यह लोहगढ़ी जमानिया के तिलिस्म का हिस्सा है जिसकी शाखें दूर-दूर तक फैली हुई हैं तथा यह भी मालूम था कि वहां से भीतर ही भीतर एक सुरंग इन्द्रदेव की तिलिस्मी घाटी और दूसरी उस घाटी में गई हुई है जिसमें उन्हें तथा दयाराम आदि को इन्द्रदेव ने रक्खा था परन्तु वे उसका हाल सिर्फ उतना ही जानते थे जितना इन्द्रदेव की जुबानी उन्होंने सुना था. पूरा हाल वे नहीं जानते थे और इससे उन सुरंगों से काम भी नहीं ले सकते थे अस्तु इस समय उन्होंने यही निश्चय किया कि लोहगढ़ी के बाहर निकलें और अगर किसी दुश्मन का खौफ न हो तो सर्यू को लेकर बाहर ही बाहर इन्द्रदेव के पास पहुँच जाँय. यद्यपि वे जानते थे कि ऐसा करने से कमजोर सर्यू को तकलीफ होगी पर इसके सिवाय और चारा ही क्या था. लोहगढ़ी में खाने-पीने का कोई ऐसा सामान नहीं मिल सकता था कि जिसके भरोसे दस-पाँच दिन यहाँ काटते और इन्द्रदेव या किसी और की मदद की राह देखते. अस्तु उन्होंने सर्यू को वहीं बैठने को कहा और यह कह कर कि मैं बाहर की टोह लेने जाता हूँ खुद लोहगढ़ी के बाहर निकलने की फिक्र में लगे.

अभी प्रभाकरसिंह ने पहिला दर्वाजा खोला था और उसे टप कर दूसरे दर्वाजे को खोलने की फिक्र कर ही रहे थे कि उनके कानों में किसी के चीखने की आवाज आई. वे चौंक पड़े और गौर करने लगे कि यह आवाज किसकी है और कहाँ से आई. उसी समय पुनः चीखने की आवाज आई और इस बार उन्हें निश्चय हो गया कि आवाज सर्यू की ही है. वे घबड़ा कर लौटे, और फुर्ती से दरवाजा खोल पुनः लोहगढ़ी के बाग में वापस आए. बावली के पास एक पेड़ के नीचे सर्यू को बैठे छोड़ गए थे, वह जगह अब खाली थी और सर्यू का कहीं पता न था. यह देख उनका कलेजा धड़क उठा और वे बेचैनी के साथ चारों तरफ देखने और सर्यू

को खोजने लगे. बाग में कहीं सर्यू दिखाई न पड़ी अस्तु वे बीच वाली इमारत में पहुँचे और इसके दालानों, कमरों और कोठरियों में सर्यू की तलाश करने लगे. सर्यू तो कहीं दिखाई न पड़ी मगर एक कोठरी में उसके हाथ की चूड़ियों के कुछ टूटे हुए टुकड़े जरूर दिखाई पड़े जिन्हें प्रभाकरसिंह ने उठा लिया और गौर से देख कर कहा, "बेशक ये मासीजी की ही हैं! तब जरूर वह इधर से ही कहीं गई हैं!"

प्रभाकरसिंह ने तेज निगाह से उस कोठरी के चारों तरफ देखना शुरू किया. जब उनकी निगाह बाईं तरफ के कोने में पहुँची तो यकायक पत्थर की दो सिल्लियों के बीच में दबे और कुछ बाहर निकले हुए किसी कपड़े का एक कोना उन्हें दिखाई पड़ा. उसी जगह एक दर्वाजे के किस्म का चौकोर निशान भी दिखाई पड़ने से प्रभाकरसिंह समझ गए कि यहाँ कोई गुप्त सुरंग है जिसकी राह दुश्मन सर्यू को ले भागा है, भागती समय कपड़े का कोना इस जगह दब कर रह गया है. इसके साथ ही उन्हें यह भी खयाल हुआ कि मुमकिन है कि कपड़ा फट जाने के कारण जिस तरह यह सिल्ली ठीक नहीं बैठी और दरवाजे का निशान दिखाई पड़ रहा है उसी तरह खटका भी न बैठा हो और दवराजा भी खुला रह गया हो. यह सोच ये उस जगह के पास पहुँचे और गौर से अच्छी तरह देखभाल कर इस सिल्ली को पैर से ठोकर मारना शुरू किया. पाँच ही सात ठोकरें खाने के बाद एक सिल्ली दीवार से अलग होकर नीचे को झुक गई और वहाँ पर नीचे उतरने की सीढ़ियाँ दिखाई देने लगीं.

प्रभाकरसिंह जिस समय साधु बन कर दारोगा के पास गये थे उस समय कपड़ों में छिपा कर एक तलवार भी लेते गये थे. वह तलवार अभी तक उनके पास मौजूद थी और इसके इलावे वह विचित्र डण्डा भी उनके पास था जिसकी अद्भुत करामात ने दारोगा को अचम्भे में डाल दिया था और जिसे महाबीर को न दे उन्होंने अपने पास ही रक्खा था. इस समय प्रभाकरसिंह ने दाहिने हाथ में तो वह तलवार पकड़ी और कमर में उस डंडे को खोंस कर बेधड़क नीचे उतर गये. उनका खयाल था कि वे अपने को किसी तहखाने में पावेंगे और सर्यू तथा उसके दुश्मनों को भी वहीं देखेंगे मगर ऐसा न था, सिर्फ एक लम्बी और तंग सुरंग थी जो बहुत दूर तक गई मालूम होती थी मगर जगह-जगह रोशनदान बने रहने की वजह से उसमें अँधेरा नहीं था. इसी वजह से जमीन पर पड़ा हुआ वह कपड़ा

भी उन्हें दिखाई पड़ गया जिसका कोना उन्हें बाहर नजर आया था. यह एक दुपट्टा था और पहिले कभी उन्होंने इसे देखा न था इससे कह नहीं सकते थे कि किसका था पर इतना इन्होंने निश्चय कर लिया कि जरूर यह उसी का होगा जो सर्यू को ले भागा है. उन्होंने उसे वहीं छोड़ा और तेजी के साथ सुरंग में आगे बढ़े.

उस लम्बी, पतली और पेचीली सुरंग में प्रभाकरसिंह बहुत दूर तक चले गये मगर कहीं किसी की सूरत दिखाई न पड़ी, न तो सर्यू का ही पता लगा और न उसको पकड़ ले जाने वाला ही दिखाई पड़ा. उन्हें खयाल हुआ कि मुमकिन है कि सर्यू इधर न लाई गई हो और उन्हें धोखा हुआ हो, साथ ही यह खयाल भी आया कि इस सुरंग में अगर दोनों तरफ से दुश्मन ने उन्हें घेर लिया तो वे बड़ी मुश्किल में पड़ जायेंगे. अस्तु वे बड़े पशोपेश में पड़ गए और एक जगह रुककर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए. आखिर बहुत कुछ सोच-विचार कर उन्होंने आगे ही बढ़ने का निश्चय किया और होशियारी के साथ टोह लेते हुए जाने लगे. लगभग दो सौ कदम के और गए होंगे कि यकायक रुक जाना पड़ा क्योंकि इस जगह आकर सुरंग कुछ चौड़ी हो गई थी और सामने दो रास्ते नजर आ रहे थे जिनमें से एक बाईं तरफ चला गया था और दूसरा दाहिनी तरफ. प्रभाकरसिंह उसी जगह रुक गये और सोचने लगे कि अब किधर जाना मुनासिब होगा.

सर्यू को इस तरह ले भगाने वाला वास्तव में हेलासिंह था. अपना सामान घाटी में रख मुन्दर और अपने साथी सहित वह लौट रहा था जब लोहगढ़ी में पहुँचने पर एक पेड़ के नीचे बैठी हुई सर्यू यकायक उसे दिखाई पड़ गई. उसे देखते ही हेलासिंह ने ताज्जुब से कहा, "यह तो शायद इन्द्रदेव की स्त्री सर्यू है!" मुन्दर ने भी उसे देख कर पहिचाना और कहा, "हां है तो बेशक ऐसा ही, मगर यह यहां आई क्योंकर? इसे तो दारोगा साहब बड़ी हिफाजत से छिपाए हुए थे?" हेलासिंह ने कहा, "मालूम होता है किसी तरह उनकी कैद से छूट कर भाग आई या किसी ने इसे छुड़ा दिया है. इसका छूट जाना हम लोगों के हक में बहुत ही खराब होगा क्योंकि दामोदरसिंह ने हमारी कमेटी के सब कागजात इसी के सुपुर्द किये थे और यह उन्हें पढ़ भी चुकी है." मुन्दर ने यह सुन कर कहा, "तब क्या करना चाहिए?" हेलासिंह बोला, "इस समय यह अकेली मालूम होती है

और इसका कोई साथी कहीं दिखाई नहीं पड़ता. बेहतर होगा कि इसे यहीं गिरफ्तार कर लिया जाय और कहीं कैद करके तब हमलोग बाहर निकलें." मुन्दर ने यह बात मंजूर की और तब उसे उसी जगह रुकने को कह हेलासिंह अपने साथी को लिए सर्यू के पास जा पहुँचा. इस समय उसने अपने चेहरे पर नकाब डाली हुई थी.

यकायक अपने सामने दो आदमियों को देख सर्यू चीख उठी पर इन दुष्टों ने इसका कुछ भी खयाल न किया और जबर्दस्ती उसे पकड़ कर मकान के अन्दर ले गए जहाँ बेहोशी की दवा देकर वह बेहोश कर दी गई क्योंकि हेलासिंह को डर था कि उसकी चीखें सुन कर उसका कोई साथी अगर होगा तो जरूर आ पहुँचेगा और हुआ भी वैसा ही. प्रभाकरसिंह सर्यू की चीख सुन कर लौट आये मगर उनकी आहट पाते ही ये दोनों सर्यू को लिए उसी सुरंग में उतर गये जिसकी राह अभी-अभी यहाँ आये थे. जल्दी-जल्दी रास्ता बन्द करने और किसी निरापद स्थान में पहुँचने की धुन में हेलासिंह का दुपट्टा वहाँ ही फँसा रह गया और वे लोग आगे बढ़ गये.

बेहोश सर्यू को लिए ये तीनों बड़ी तेजी से रवाना हुए और लगभग एक घंटे तक लगातार चले जाने के बाद हेलासिंह एक नई ही राह से किसी ऐसी जगह जा पहुँचा जहाँ अभी तक मुन्दर न आई थी. यह एक बहुत बड़ा बाग था जिसके चारों तरफ बहुत-सी इमारतें दिखाई पड़ रही थीं और बीचोबीच में एक बहुत बड़ा दालान था. सब लोग वहीं जाकर खड़े हो गये और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए.

ये लोग खड़े बातचीत कर ही रहे थे कि यकायक मुन्दर की निगाह सामने जा पड़ी जिधर बाग के दूसरे सिरे पर इमारतों का एक लम्बा सिलसिला दूर तक चला गया था. उसने देखा कि एक खुले हुए दरवाजे की राह एक आदमी बाहर निकला और पास ही पेड़ों की झुरमुट में जाकर गायब हो गया. वह चौंक पड़ी और घबड़ा कर हेलासिंह से बोली, "वह देखिए एक आदमी अभी-अभी उस दरवाजे से निकल कर उधर गया है." हेलासिंह ने घूम कर उधर देखा मगर किसी को न पाकर बोला, "तुम्हारा शक होगा, मेरे सिवाय भला कौन यहाँ आ सकता है!" मुन्दर बोली, "नहीं, मेरी आँखें मुझे ऐसा धोखा कभी नहीं दे सकतीं, वह जरूर कोई आदमी ही था, देखिए वह दूसरा आदमी निकला!"

सचमुच एक दूसरा आदमी उसी दरवाजे के बाहर निकला और उन्हीं पेड़ों की झुरमुट में जाकर गायब हो गया. हेलासिंह को बड़ा ताज्जुब और कुछ डर भी मालूम हुआ. वह घबराहट के साथ बोला, "बड़ी विचित्र बात है, ये लोग न-जाने कौन हैं जो इस तिलिस्मी घाटी में आ पहुँचे हैं!" मुन्दर बोली, "कहीं वे यहाँ आकर हम लोगों को तकलीफ न पहुँचावें!" हेलासिंह ने कहा, "कौन ठिकाना, हमें तो रंग-कुरंग दिखाई पड़ता है." हेलासिंह और उसकी देखा-देखी उसके साथी ने भी तलवार निकाल ली और ताज्जुब तथा घबराहट से उसी तरफ देखने लगे. उनके देखते ही देखते और भी कई आदमी उसी रास्ते से बाहर निकले और पेड़ों की ओट में जाकर गायब हो गये.

आखिर हेलासिंह ने कहा, "मुझे यहाँ रहना मुनासिब नहीं मालूम होता. कौन ठिकाना वे सब यहाँ आ जाँय और हम लोगों को परेशान करें." यह सुन मुन्दर बोली, "क्या यहाँ कोई ऐसी जगह नहीं है जहाँ छिप कर हम लोग उनसे बच सकें?" हेलासिंह कुछ सोचता हुआ बोला, "हाँ है तो सही मगर—अच्छा अगर—हाँ ठीक है, तुम मेरे साथ आओ." उसने बेहोश सर्यू को उसी जगह छोड़ा और अपने आदमी को उसकी हिफाजत करने के लिये कह मुन्दर को लिए किसी तरफ को चला गया.

हेलासिंह और मुन्दर को गये देर हो गई मगर दोनों में से कोई भी लौट कर न आया. इस बीच बेहोश सर्यू होश में आने के लक्षण प्रकट करने लगी जिसकी कुलबुलाहट देख उसकी निगहबानी करने वाला वह आदमी घबराया और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए. आखिर वह इस फिक्र में उठा कि इधर-उधर घूम कर हेलासिंह का पता लगावे जिसकी बहुत ही कम उम्मीद थी क्योंकि इस तिलिस्मी इमारत के गुप्त स्थानों में से किसी को खोज निकालना उसके जैसे अन-जान का काम न था, फिर भी न-जाने क्या सोच कर वह उठ खड़ा हुआ और उधर की तरफ उसने एक कदम बढ़ाया ही था जिधर हेलासिंह और मुन्दर गये थे कि उसको सामने से आते हुए प्रभाकरसिंह दिखाई पड़े जो हाथ में नंगी तलवार लिए हुए थे. बहादुर प्रभाकरसिंह को देखते ही वह इतना डरा कि एक पल भी न रुक सका और पीछे भाग कर पेड़ों की झुरमुट में पहुँच उसने अपने को छिपा लिया.

हम नहीं कह सकते कि प्रभाकरसिंह की निगाह इस आदमी पर पड़ी या नहीं

पर सर्यू को वहाँ पड़ा देख कर वे बहुत ही प्रसन्न हुए. उन्होंने उसकी बेहोशी दूर करने की कोशिश की जिससे कुछ ही देर में वह होश में आकर उठ बैठी. प्रभाकरसिंह ने उससे सब हाल पूछा और उसने जो कुछ हुआ था सब कह सुनाया.

यही समय था जब किसी दूसरे स्थान से मालती ने प्रभाकरसिंह को देखा था. किस तरह हेलासिंह ने प्रभाकरसिंह पर हमला किया, कैसे वह हार कर भागा, किस प्रकार एक भयानक सूरत के तिलिस्मी शैतान ने प्रभाकरसिंह को लड़ने के लिए ललकारा और अन्त में उन्हें परास्त करके जमीन पर पछाड़ दिया यह हाल हम ऊपर लिख आए हैं. अस्तु अब यहाँ हम उसके आगे का हाल लिखते हैं.

शैतान को प्रभाकरसिंह की जान लेने पर उतारू देख कर मालती के मुँह से एक चीख निकल गई जिसे उसने भी सुन लिया और खिड़की में से झाँकती हुई मालती को देख गुस्से के साथ उस तरफ बढ़ा. उसे अपनी तरफ आता देख मालती बदहवास हो गई मगर उस कम्बख्त शैतान ने इसका कोई भी खयाल न किया. जब वह उस खिड़की के पास पहुँचा जहाँ मालती थी तो किसी तर्कीब से उसने उस दीवार में एक रास्ता पैदा किया और दूसरी तरफ जा पहुँचा. बेहोश मालती को उठा कर उसने अपने कंधे पर डाल लिया और तब वापस लौट कर वहाँ पहुँचा जहाँ प्रभाकरसिंह को छोड़ गया था. उन्हें भी उसने उठा कर दूसरे कंधे पर रख लिया और तब एक तरफ का रास्ता लिया.

न-जाने उस शैतान के बदन में कितनी ताकत थी कि दो-दो आदमियों के बोझ को वह एक मामूली तरह से उठाये हुए था. उन दोनों आदमियों को लिए यह बाग को पार कर उस इमारत के पास पहुँचा जो पूरब तरफ बनी हुई थी और जिसका सिलसिला दूर तक चला गया था. यहाँ आकर वह कुछ देर के लिए रुका और तब कुछ सोच एक तरफ को घूमा. बाईं तरफ एक बड़ा दालान और उसके बाद एक कमरा बना हुआ था. तिलिस्मी शैतान उसी दालान में पहुँचा और खड़ा होकर कुछ सोचने लगा.

इस समय अगर सरस्वती यहाँ होती तो इस बाग को जरूर पहिचान लेती क्योंकि यह वही मोरों वाला कमरा था जहाँ जमना और दयाराम को खोजती हुई वह आई थी[1] और जिसके अन्दर की एक कोठरी में से बेहोश होकर वह उस बाग

1. देखिए भूतनाथ दसवाँ भाग, सातवाँ बयान.

में पहुँची थी जिसका हाल ऊपर के बयान में लिखा जा चुका है. सरस्वती को वह भीतर वाला बड़ा कमरा खुला हुआ मिला था मगर इस समय वह बन्द था और शैतान उसी के बाहर वाले दालान में प्रभाकरसिंह और मालती को कंधे पर लिए खड़ा कुछ सोच रहा था.

आखिर कुछ देर के सोच-विचार के बाद शैतान ने उन दोनों को उतार कर जमीन पर रख दिया और आप बीच वाले दरवाजे के पास आया. दरवाजे के ऊपरी तरफ एक आला था जिसमें किसी धातु की शेर की छोटी-सी मूरत बनी हुई थी. शैतान ने हाथ बढ़ा कर उस मूरत का सिर पकड़ लिया और जोर से अपनी तरफ खींचा, हल्की आवाज हुई और साथ ही दरवाजा खुल गया.

एक लम्बा-चौड़ा आलीशान कमरा दिखाई पड़ा जिसकी भारी गोल छत मोटे-मोटे चालीस खंभों पर रक्खी हुई थी. बीचोबीच एक सिंहासन काले पत्थर का बना हुआ रक्खा था जिसके चारों तरफ चार कद्दावर और भयानक शेर काले ही पत्थर के बने हुए बैठाये गये थे जो इतने ऊँचे थे कि आदमी का हाथ मुश्किल से उनके सिर तक पहुँच सकता था. इन शेरों के सिर पर किसी धातु के बने चार उकाब थे जिन्होंने अपनी चोंच में उन शेरों का एक-एक कान पकड़ा हुआ था. उस कमरे के भीतर मुख्य सामान बस यही था, हाँ उसके तीनों तरफ बहुत-सी कोठरियाँ जरूर थीं जिनमें कुछ के दरवाजे खुले हुए थे और कुछ के बन्द.

शैतान ने इस कमरे का दरवाजा खोल कर बेहोश मालती और प्रभाकरसिंह को पुनः उठा लिया और लिए हुए कमरे के अन्दर चला गया. उन दोनों को उसने बीच वाले सिंहासन पर रख दिया और खुद भी उसी पर खड़े होकर बाईं तरफ वाले शेर की तरफ झुका, उसके सिर पर बैठे हुए उकाब की गरदन पकड़ ली और नीचे की तरफ झुकाई. वह कुछ झुक कर रुक गई और साथ ही शेर के मुँह से गुर्राने की आवाज आने लगी. शैतान वहाँ से हट उस सिंहासन के बीचो-बीच जा बैठा.

यकायक वह शेर एक दहाड़ मार कर उठ बैठा और इसके साथ ही बाकी के तीनों शेरों के मुँह से भी गरजने की आवाज आने लगी मगर शैतान ने इसका कुछ भी खयाल न किया. उसने झुक कर सिंहासन के नीचे का कोई खटका दबाया जिसके साथ ही एक आवाज हुई और सिंहासन तेजी से जमीन के अन्दर धंस गया.

थोड़ी देर बाद एक झटके के साथ वह सिंहासन रुका. उस जगह घोर अंधकार था और हाथ को हाथ नहीं दिखाई पड़ता था मगर उस शैतान ने अन्दाज ही से टटोल कर बेहोश मालती और प्रभाकरसिंह को उठा लिया और सिंहासन पर से उतर पड़ा. उसके उतरते ही सिंहासन पुनः ऊपर को चला गया और शैतान ने टटोलते हुए एक तरफ का रास्ता लिया.

लगभग पचास कदम जाने के बाद शैतान रुका. इस जगह एक दरवाजा था जिसे किसी तर्कीब से उसने खोला. उसके दूसरी तरफ जाने के बाद एक कमरा दिखाई पड़ा, इसे भी पार करने के बाद पुनः एक दरवाजा मिला और उसके खोलते ही इस जगह चाँदना आने लगा क्योंकि सामने दालान और उसके बाद बाग था जहाँ से दिन की रोशनी उस कमरे में बखूबी आ रही थी.

दरवाजा खुलते ही उस कमरे की भयानक हालत दिखाई पड़ी. चारों तरफ की जगह हड्डियों से भरी हुई थी जिसके बीच जगह-जगह पड़ी हुई आदमियों और जानवरों की खोपड़ियाँ बड़ी ही भयानक मालूम हो रही थीं. ऐसा मालूम होता था मानों यह उस भयानक तिलिस्मी शैतान के रहने का घर हो और वह इन्हीं हड्डियों को चबा कर जीता हो. कोठरी की दीवारों के साथ भी तरह-तरह के जानवरों के हड्डियों के ढांचे खड़े थे और चारों कोनों में चार मनुष्यों के कंकाल ठीक उसी सूरत के खड़े थे जैसी कि खुद उस शैतान की थी. कोठरी के बीचोबीच में कूएँ की तरह का एक गहरा गड्ढा दिखाई पड़ रहा था जिसमें से बदबू निकल रही थी और कभी-कभी आग की लपटें भी दिखाई पड़ जाती थीं, और इस गड्ढे के ठीक ऊपर एक मजबूत जंजीर लटक रही थी जिसके एक सिरे के साथ एक बड़ा-सा देग बंधा हुआ था और दूसरा सिरा छत की एक कड़ी में से होता हुआ दीवार के साथ खड़ी कुछ हड्डियों के साथ बँधा हुआ था. शैतान ने वहाँ पहुँच कर अपना बोझ अर्थात् मालती और प्रभाकरसिंह को जमीन पर रख दिया और दम लेने लगा.

शैतान को इस भयानक कोठरी में आये कुछ ही देर हुई होगी कि यकायक चारों कोनों में खड़े वे चारों आदमियों के हड्डी के ढाँचे कुछ अजीब तरह से हिलने लगे और उनके जबड़े इस तरह हरकत करने लगे मानों वे कुछ कहना चाहते हों मगर आवाज न निकलती हो. आखिर एक ढाँचा हिलता-डुलता अपनी जगह से खड़खड़ाता हुआ शैतान की तरफ बढ़ा और उसकी देखादेखी बाकी के तीनों ढाँचे

भी खड़खड़ करते हुए उसी तरह बढ़ने लगे. बिना हड्डी-माँस के उन चार नर-कंकालों का इस तरह चलना और उनकी हड्डियों का खड़खड़ाना ऐसा भयानक था कि और कोई देखता तो मारे डर के उसी दम उसकी जान निकल जाती मगर उस शैतान पर इसका कोई भी असर न हुआ, वह उन्हें देख कर जोर से हँस पड़ा और बोला, "लो, आज बहुत दिन बाद तुम लोगों के लिए खूराक आई है !"

एक ढांचे के मुँह से भयानक स्वर में निकला, "क्या इन लोगों को हमारे भोजन के लिए ही लाए हैं ?" तिलिस्मी शैतान ने जवाब दिया, "हाँ." जिस पर एक दूसरा ढाँचा बोल उठा, "ये सब कौन हैं ?" शैतान ने जवाब दिया, "ये दोनों प्रभाकरसिंह और मालती हैं जिनकी खोज में हम लोग बहुत दिनों से परेशान थे." इसे सुनते ही वे चारों बोल उठे—"ओह, तब तो इन्हें जल्दी ही ठिकाने लगाना चाहिए."

शैतान ने हँस कर कहा, "घबराओ नहीं, मैं अभी इन्हें ठिकाने पहुँचाता हूँ" और तब वहाँ से हटकर बीच वाले गड्हे के पास आया, एक बार झाँक कर उसने देखा और तब पास ही से थोड़ी-सी हड्डियाँ बटोर कर उसके अन्दर फेंकीं. हड्डियों के फेंकते ही भीतर से आग की एक लपट निकली जो कोठरी की छत तक पहुँची और फिर शान्त हो गई. अब शैतान ने वह सिक्कड़ खोला जिसके साथ वह देग बंधा हुआ था और देग को कुछ नीचा करने के बाद वह सिक्कड़ अपने साथी एक ढाँचे के हाथ में पकड़ा दिया. इसके बाद वह मालती और प्रभाकरसिंह के पास आया और बारी-बारी से एक-एक को उठा कर उसने उसी देग में डाल दिया.

तिलिस्मी शैतान ने अब सिक्कड़ पकड़ लिया और देग को धीरे-धीरे उस अग्निकुण्ड में उतारने लगा तथा बाकी के ढाँचों ने हड्डियाँ उठा-उठा कर उस कूएँ में फेंकनी शुरू कीं जिसके साथ ही भीतर से आग की लपट के बाद लपट निकलने लगी जिन्होंने उस देग को चारों तरफ से घेर लिया. चिरायंध मिली हुई बदबू से वह कोठरी भर गई और वहाँ इतनी गर्मी हो गई कि खड़ा रहना मुश्किल हो गया.

।। चौदहवाँ भाग समाप्त ।।

पन्द्रहवाँ भाग

1

श्यामा को लिए हुए जब भूतनाथ उसके बताए हुए ठिकाने पर काशी पहुँचा तो उसने अपने को एक अंधेरी और सुनसान गली के अन्दर बने हुए एक बन्द मकान के दरवाजे पर पाया. श्यामा की इच्छानुसार बाबाजी की दी हुई ताली से भूतनाथ ने मकान का ताला खोला और दोनों व्यक्ति अन्दर घुसे.

अन्दर पहुँच कर भूतनाथ ने उस मकान को बहुत ही बड़ा कुशादा और आलीशान पाया और उसकी सजावट भी बहुत ऊँचे दर्जे की देखी. इस अँधेरी और तंग गली में इतने बड़े और इस तरह के आलीशान मकान के पाने की कोई भी उम्मीद न हो सकती थी अस्तु वह कुछ ताज्जुब और उत्कण्ठा से श्यामा के साथ-साथ उस मकान में घूम-घूम कर उसके हर हिस्से को देखने लगा. श्यामा उस बड़े मकान के हर एक कोने से बखूबी वाकिफ जान पड़ती थी और उसकी बातचीत से भूतनाथ को यह भी मालूम हुआ कि यह उसका पैतृक मकान है और उस भयानक तिलिस्म में फँसने के पहिले वह इसी में रहती थी. मकान गर्द, धूल और गन्दगी से एकदम साफ था और ऐसा मालूम होता था मानों अभी-अभी कोई इसकी सफाई करके गया है.

भूतनाथ इस मकान को देख कर बहुत ही खुश हुआ और खास कर तब तो उसकी प्रसन्नता का कोई पारावार ही न रहा जब कई कोठरियाँ और तहखाने खोल-खोल कर श्यामा ने वह अगाध दौलत भी उसे दिखलाई जो उनमें भरी हुई थी और जिसका श्यामा के कथनानुसार अब भूतनाथ ही मालिक था. सामानों में से यहाँ किसी की कमी न थी अस्तु उन दोनों ने बहुत जल्द जरूरी कामों से छुट्टी पा ली और भूतनाथ संध्या-पूजा के काम में तथा श्यामा रसोई बनाने की धुन में लगी.

इसमें कोई शक नहीं कि श्यामा ने ठीक उसी तरह अपना कर्तव्यपालन किया जैसाकि एक सती स्त्री को करना चाहिए. भूतनाथ उसकी बातचीत और चाल-

व्यवहार से बहुत ही प्रसन्न हुआ और अपनी किस्मत को सराहने लगा जिसने उसे ऐसी सुन्दर स्त्री के साथ-साथ इतना अगाध धन भी दिया था. श्यामा की सेवा सुश्रूषा से मोहित हो वह एक दिन के बजाय तीन दिन तक उसके साथ उसी जगह रह गया और चौथे दिन भी बड़ी मुश्किल से तब श्यामा ने उसे छुट्टी दी जब भूतनाथ ने वादा किया कि वह कुछ बहुत ही जरूरी काम निपटा कर दूसरे ही दिन अवश्य वापस आ जायगा. उसने श्यामा से यह भी कहा कि वह बहुत जल्द कई नौकर और मजदूरनियाँ उसकी खिदमत के लिए भेज देगा और इसे श्यामा ने खुशी-खुशी मंजूर किया. दोपहर के कुछ पहिले ही भूतनाथ श्यामा के मकान के बाहर हो गया और श्यामा वहाँ अकेली रह गई.

कुछ देर तक श्यामा इधर-उधर घूमती रही और तब अपने सोने के कमरे में पहुँच कर फर्श पर बैठ गई. एक पेटी में से उसने लिखने का सामान निकाला और पत्र लिखने लगी. यह पत्र बहुत लम्बा-चौड़ा था और श्यामा ने इसे बड़े ध्यान से ठहर-ठहर और रुक-रुक कर बड़े सोच-विचार के बाद लिखा और पूरा किया. चीठी समाप्त होने पर वह उसे पुनः शुरू से आखीर तक पढ़ गई और तब उसे एक बड़े लिफाफे में बन्द कर उसके जोड़ पर मुहर कर दी. चीठी का मजमून क्या था यह तो हम जान न सके पर लिफाफे का पता देखने से मालूम हुआ कि वह जमानिया के दारोगा साहब के नाम थी.

मुश्किल से श्यामा ने यह काम खतम किया था कि बाहर से किसी के कुण्डा खटखटाने की आवाज आई जिसे सुनते ही श्यामा चौंक उठी. वह पत्र उसने उसी पेटी में बन्द कर दिया और तब एक खिड़की के पास पहुँची जहाँ से देखने पर मकान का बाहरी सदर दरवाजा बखूबी दिखाई पड़ता था. श्यामा ने देखा कि दो आदमी दरवाजे पर खड़े हैं जो चाल-ढाल से ऐयार मालूम होते हैं और जिन्हें शायद वह पहिचानती भी थी क्योंकि उन्हें देखते ही उसने एक विचित्र तरह से सीटी बजाई. सीटी की आवाज सुनते ही उन लोगों ने ऊपर की तरफ देखा और श्यामा को झाँकते पाकर सीटी ही के इशारे में कुछ जवाब दिया. श्यामा ने उसे सुन खड़े रहने का इशारा किया और तब नीचे उतर दरवाजा खोल उन्हें भीतर कर लिया. उन दोनों में से एक आदमी तो वहीं रह गया मगर दूसरे को लिए श्यामा ऊपर की मंजिल की एक दुछती में जा बैठी और बातें करने लगी.

श्यामा : कहो साधोराम, कुशल से तो हो ?

साधो० : (हाथ जोड़ कर) आपकी दया से सब कुशल है.

श्यामा : वह काम हो गया जिसके लिए तुम लोग आये थे ?

साधो० : जी हाँ, वह तो कभी का हो गया. रामदेई गिरफ्तार करके जमानिया भेज दी गई और आजकल उसकी गद्दी पर नागरजी विराज रही हैं.

श्यामा : (मुस्कुरा कर) अच्छा ही हुआ, वह रामदेई की गद्दी अच्छी तरह सम्हालने लायक भी है. अब उम्मीद है तुम लोगों का बाकी काम भी बखूबी हो जायगा.

साधो० : देखिये, आशा तो बहुत कुछ है. आप अपनी तरफ का कुछ हाल-चाल सुनाइये, भूतनाथ को तो थोड़ी देर हुई मैंने अपने घर की तरफ जाते देखा था.

श्यामा : हाँ वह एक दिन की छुट्टी लेकर गया है और कल आने को कह गया है.

साधो० : मालूम होता है वह अच्छी तरह आपके चंगुल में फँस गया है.

श्यामा : हाँ ऐसी ही बात है मगर वह है बड़ा धूर्त, मुझे उससे डर ही लगा रहता है.

साधो० : इसमें तो शक नहीं, मगर मुझे विश्वास है कि आपके सामने उसकी चालाकी काम न आवेगी.

श्यामा : देखो क्या होता है, मैं तो तब खुश होऊँ जब मेरा काम पूरा हो और बाबाजी से जो प्रतिज्ञा मैं करके आई हूँ उसे पूरा कर पाऊँ. इतना जरूर है कि शुरू अच्छे शगुन से हुआ है और भूतनाथ को मुझ पर पूरा विश्वास हो गया है. मैं उम्मीद करती हूँ कि अगर नागर ने अपना काम ठीक तरह से पूरा किया तो मुझे भी जरूर सफलता मिलेगी.

साधो० : नागरजी भी पूरी कोशिश में लगी हुई हैं, मगर मुश्किल इतनी ही हो गई है कि भूतनाथ के लड़के नानक को कुछ शक हो गया है और वह इस फिराक में लग गया है कि हम लोगों के भेद का पता लगाये.

श्यामा : (चौंक कर) तुम लोगों के भेद का पता लगाये ! तब क्या उसे मालूम हो गया है कि उसकी माँ कैद हो गई और उसकी जगह नागर उसके घर पर हुकूमत कर रही है ?

साधो० : मैं ठीक-ठीक तो नहीं कह सकता मगर इतना जरूर है कि उसे

पता लग गया है कि उसके यहाँ कुछ चालाकी हो रही है. बात यह हुई कि जब हम लोग रामदेई को लेकर भागे उसी समय नागरजी रामदेई बनकर उसकी जगह पर जा बैठीं मगर नानक ने किसी तरह हमारे आदमियों को भागते देख लिया और पीछा किया. इस सम्बन्ध में कितना कुछ उसे मालूम हुआ है सो तो मैं नहीं कह सकता परन्तु नागरजी की जुबानी इतना सुनने में आया कि वह लौटकर उनसे बहुत कुछ पूछताछ करता था. कुशल यही हुई कि नागरजी को भी मालूम हो गया कि नानक ने हम लोगों का पीछा किया है और उन्होंने कुछ ऐसा जाल रचा कि घर लौटकर नानक कुछ भी शक का मौका पा न सका, फिर भी हम लोगों को डर बना ही हुआ है.

श्यामा : यद्यपि नानक अभी लौंडा और पूरा बेवकूफ है फिर भी उसको काबू में रखना होगा. अगर उसने भूतनाथ के कान में कुछ भी सुनगुनी डाल दी तो मुश्किल हो जायगी. तुम लोगों ने नानक के लिए क्या प्रबन्ध किया ?

साधो० : जी अभी तक तो कुछ भी नहीं मगर शीघ्र ही कुछ जरूर हो जायगा. आपको शायद रामखिलावनसिंह का नाम याद होगा जिससे पहिले ...

श्यामा : हाँ-हाँ, वही रामखिलावनसिंह जिसकी जमींदारी चुनार की तरफ है और जो पहिले मेरे ...

साधो० : जी हाँ वही.

श्यामा : उसको मैं खूब जानती हूँ और उम्मीद है कि वह भी मुझे भूला न होगा. उससे क्या ?

साधो० : उसके रिश्ते की एक गूंगी और बहरी लड़की है जो उसी के पास रहती है. उसका नाम रामभोली है. हम लोगों को पता लगा है कि इस रामभोली पर नानक बुरी तरह से आशिक है और उसके लिए जान देता है. उसी रामभोली के जरिये शायद हम लोग नानक को राह पर ला सकेंगे.

श्यामा : हाँ यह तर्कीब हो सकती है. तुम जो कुछ कर रहे हो वह तो करते ही रहो मैं भी इसके सम्बन्ध में कोशिश करूँगी और जहाँ तक हो सकेगा तुम लोगों की मदद करूँगी. लेकिन मैं यह चाहती हूँ कि एक बार नागर से मिल लूं चूंकि हम लोगों का काम करीब-करीब एक-सा ही है इससे हम लोगों के आपुस में सलाह करके चलने मे काम जल्दी पूरा होगा.

साधो० : बहुत ठीक है, मैं नागरजी से मिलकर सब प्रबन्ध कर लूंगा और

आपको खबर दूँगा, प्राय: दूसरे-तीसरे मैं उनसे अवश्य मिल लेता हूँ क्योंकि उस मकान के कई नौकर-मजदूरनियों को भी हम लोगों ने पकड़ लिया है और उनकी जगह अपने आदमी भरती कर दिए हैं. इधर दो-चार रोज भूतनाथ यहाँ रहेगा मगर उसके चले जाने के बाद फिर कोई असुविधा न रहेगी. आपसे तो मैं रोज ही मिल लिया करूँगा और जो कुछ कामकाज हो बजा लाया करूँगा.

श्यामा : हाँ, जरूर मिल लिया करो. इधर तुम्हारा कोई आदमी जमानिया तो नहीं जाने वाला है ?

साधो० : जी हाँ क्यों, बराबर ही आदमी आते-जाते रहते हैं. क्या कोई काम है ?

श्यामा : एक बहुत ही गुप्त और जरूरी चीठी दारोगा साहब के पास भेजनी है, किसी विश्वासी आदमी से उनके पास भेजवाओ और जवाब मँगाकर मुझे दो.

साधो० : बहुत खूब, दे दीजिए ! उम्मीद है परसों तक जवाब आपको मिल जायगा !

श्यामा ने वह चीठी जो कुछ ही देर पहिले लिखी थी साधोराम को दे दी तब कुछ और भी बातें समझाने बुझाने के बाद उसे बिदा किया.

2

संध्या होने में कुछ ही देर बाकी थी जब प्रभाकरसिंह को होश आई और उन्होंने आँख खोलकर अपने चारों तरफ देखा.

उन्होंने देखा कि वे एक बड़े ही विचित्र और डरावने स्थान में जमीन पर पड़े हुए हैं. एक काले पत्थर का बना हुआ बहुत बड़ा कमरा है जिसका पूरा फर्श जानवरों तथा आदमियों की हड्डियों से भरा हुआ है और दीवारों के साथ-साथ बहुत-से हड्डियों के ढाँचों की कतार कमरे को चारों तरफ से घेरे हुए है जिनमें आदमी के तथा और भी सभी प्रकार के जानवरों के ढाँचे हैं और जो देखने में बड़े डरावने मालूम होते हैं. कमरे के बीचोबीच में एक कुण्ड है जिसमें तेज आँच सुलग रही है मगर वह लकड़ी या कोयले की नहीं है बल्कि किसी और ही चीज की है क्योंकि उसकी लपट नीलापन लिए हुए पीले रंग की है और उसमें से धूआँ इतना

बेहिसाब निकल रहा है कि समूचा कमरा भर रहा है. उस आँच के अन्दर भी बहुत-सी हड्डियाँ पड़ी हुई सुलग रही हैं जिनसे एक तरह की बदबू निकल कर चारों तरफ फैल रही है, अगर कमरे की छत में एक बहुत बड़ा छेद न होता और उसकी राह बहुत-सा धूआँ बराबर निकला न जा रहा होता तो इसमें सन्देह नहीं कि कमरे में पलभर के लिए भी रहना मुश्किल हो जाता. घूमती हुई प्रभाकरसिंह की निगाह यकायक मालती पर पड़ी जो उनसे कुछ ही दूरी पर बेहोश पड़ी हुई थी. वे उसे देखते ही चौंक पड़े और उसके पास पहुँच कर उसे होश में लाने की फिक्र करने लगे.

थोड़ी देर की कोशिश में ही मालती को होश आ गया. वह उठ कर बैठ गई मगर अपने चारों तरफ का डरावना सामान देखते ही उसके मुँह से चीख निकल गई और उसने डर से आँखें बन्द कर लीं. प्रभाकरसिंह ने दिलासा देकर उसे शान्त किया और पूछा, "मालती, तुम यहाँ कैसे आ पहुँचीं ?"

मालती : मेरा हाल बहुत लम्बा-चौड़ा है जिसे सुनाने के लिए समय चाहिए, आप मुझे बताइये कि यह कौन-सी जगह है और हमलोग यहाँ कैसे आ पहुँचे ?

प्रभा० : मैं इस बारे में सिवाय इसके और कुछ नहीं कह सकता कि यह शायद उसी तिलिस्मी शैतान के रहने की जगह है जिससे लड़कर मैं बेहोश हुआ था. ऐसी डरावनी और गन्दी जगह आज तक मैंने कहीं देखी नहीं.

मालती : हाँ देखिये न हड्डियों से समूचा कमरा भरा हुआ है, कहीं पैर रखने की जगह नहीं है, हमलोग हड्डियों ही पर बैठे हुए हैं, (चारों तरफ की दीवाल दिखाकर) और यह देखिये जानवरों की हड्डियों का अजायबघर ही यहाँ मौजूद है, शायद ही कोई जानवर ऐसा हो जिसका ढाँचा यहाँ मौजूद न हो. न-जाने इतनी हड्डियाँ यहाँ कैसे इकट्ठी हो गई हैं !

प्रभा० : (हंसकर) शायद उस तिलिस्मी शैतान ने जिन जानवरों को खाया है उनकी हड्डियाँ यहाँ जमा कर रक्खी हैं ताकि कभी खूराक न मिले तो इन हड्डियों को ही चबा कर वह पेट भर ले !

मालती : (काँप कर) आप हँस रहे हैं और मेरी डर के मारे जान सूख रही है. किसी तरह यहाँ से निकलने की फिक्र करिये. यहाँ अगर थोड़ी देर और मैं रहूँगी तो जरूर पागल हो जाऊँगी.

प्रभा० : बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता, चारों तरफ की

दीवार साफ चिकनी है जिसमें एक भी दरवाजा नहीं है, सिर्फ ऊपर की तरफ चार रोशनदान हैं और या फिर वह बीचवाला छेद है जिसमें से धूआँ बाहर जा रहा है, मगर वहाँ तक पहुँचना असम्भव है.

मालती : इस अग्निकुण्ड की आँच अगर बुझ सके तो देखा जाय शायद इसके अन्दर से कोई रास्ता हो.

प्रभा० : हो सकता है, मगर इसकी आग बुझाई किस तरह जाय !

मालती : यह आँच है किस तरह की ? इसका रंग देखिए कैसा है ! मालूम पड़ता है मानो किसी मसाले की आग हो, तमाशा यह देखिए कि ये हड्डियाँ भी उस आँच में सूखी लकड़ी की तरह जल रही हैं. (एक हड्डी उठा और कुण्ड में फेंक कर) यह देखिए काठ की तरह जलने लगी. मगर यह क्या !

मालती ने जो हड्डी आग में फेंकी वह एक बार तो भभक कर जल उठी मगर उसके बाद ही लपट कम हो गई और एक तरह का पानी-सा उसमें से निकल कर बहने लगा मानों वह हड्डी न होकर कोई और ही चीज हो. मालती और प्रभाकरसिंह ने ताज्जुब के साथ यह हाल देखा, तब और भी बहुत-सी हड्डियाँ उठा कर कुण्ड में फेंकी. फेंकते ही आँच एक बार तो तेज हुई मगर तुरन्त ही कम हो गई और उन हड्डियों से निकलने वाले पानी ने आग को ढंक कर उसकी तेजी एकदम कम कर दी.

प्रभाकरसिंह ने खुश होकर कहा, "यह तो बड़ी विचित्र बात है. मालूम होता है ये हड्डियाँ नहीं हैं बल्कि कोई दूसरा ही मसाला है, अगर ज्यादा डाला जाय तो सम्भव है कि आँच एकदम बुझ जाय."

वास्तव में यही बात थी. ढेर की ढेर हड्डियाँ एक साथ ही कुण्ड में डाल दी गईं जिसके थोड़ी देर बाद आँच बिल्कुल बुझ गई. ये दोनों आदमी थोड़ी देर तक तो राह देखते रहे इसके बाद हिम्मत करके प्रभाकरसिंह उस कुण्ड में उतर गए और उसमें भरी अधजली हड्डियाँ निकाल-निकाल कर बाहर फेंकने लगे. मालती ने भी हाथ बटाया और थोड़ी ही देर में वह कुण्ड एक दम साफ हो गया. 'उस समय उसके तह में दरवाजे का निशान दिखाई पड़ा जिसके ऊपर एक पत्थर की सिल्ली रक्खी हुई थी. बीच में लगी कड़ी की मदद से प्रभाकरसिंह ने उस सिल्ली को उठाकर अलग रख दिया और तब नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ दिखाई दीं. प्रभाकरसिंह ने झाँक कर नीचे की तरफ देखा, एक पतली सुरंग दिखाई दी जिसके

दूसरे सिरे पर रोशनी मालूम पड़ती थी, उन्होंने मालती से यह हाल कहा और तब दोनों आदमी उसकी राह उतरने को तैयार हो गये. आगे-आगे प्रभाकरसिंह और उनके पीछे-पीछे मालती सीढ़ियाँ उतर कर उस सुरंग में चल पड़े.

लगभग बीस या पचीस कदम जाकर सुरंग समाप्त हो गई और इन दोनों ने अपने को एक छोटे बाग में पाया जिसके चारों तरफ कई तरह की इमारतें और बीच में एक बारहदरी थी. ये लोग उस बारहदरी में जा पहुँचे और उस काले और सफेद पत्थर के बने फर्श पर बैठ कर बातें करने लगे.

प्रभा० : उस भयानक जगह के बाहर तो हो गए मगर अब यहाँ से निकलने की सूरत मिलनी चाहिए. यह न-जाने कौन-सी जगह है ?

मालती : मुझे तो यह उसी लोहगढ़ी का ही भाग मालूम होता है. (सामने की तरफ उंगली उठाकर) वह देखिए, दीवार के पीछे ऊँचा धरहरा दिखाई पड़ रहा है जिसके ऊपर एक उकाब-सा बना हुआ है, अगर मेरी आँखें मुझे धोखा नहीं दे रही हैं तो वह उसी बारहदरी के सिरे पर बना हुआ है जिसमें होश में आने पर मैंने अपने को पाया था. ऐसी हालत में वह बाग भी इस जगह के आस-पास ही में कहीं होगा जहाँ आपने सर्यू चाची को छोड़ा था या जहाँ उस तिलिस्मी शैतान से आपकी लड़ाई हुई थी.

प्रभा० : (ताज्जुब से) तुमने वह हाल कहाँ से देखा ?

मालती : उसी बाग में से जिसमें वह खंभेवाली बारहदरी बनी हुई है.

प्रभा० : मैं तुम्हारा पूरा हाल सुनने को व्याकुल हूँ. इस समय संध्या हो गई है और रात में किसी तरह की कार्रवाई करना संभव भी नहीं है अस्तु हम लोगों को जरूरी कामों से निपटकर इस बारहदरी को ही अपना ठिकाना बनाना चाहिये, उस समय मैं तुम्हें अपना किस्सा सुनाऊँगा और तुम भी अपना हाल मुझे सुनाना जब से कि मुझसे अलग हुई हो.

मालती : अच्छी बात है. (देखकर) मालूम होता है वहाँ कोई नहर है. अगर ऐसा है तो हमलोगों को कम-से-कम पानी की तकलीफ न होगी.

दोनों उठ खड़े हुए और उस छोटी नहर के किनारे पहुँचे जो इस बाग के बीचोबीच में से बह रही थी. दोनों ने जरूरी कामों से छुट्टी पाई और नहर के किनारे के मेवों के दरख्तों से अपनी भूख भी शान्त की, इसके बाद उसी बारहदरी में आकर बैठे और बातें करने लगे.

रात घण्टे भर से ऊपर जा चुकी है, मालती ने अपना हाल सुना कर अभी समाप्त किया है और प्रभाकरसिंह अपना किस्सा शुरू करने ही वाले हैं. यकायक इसी समय सामने के पेड़ों में एक रोशनी दिखाई पड़ी जिसने इन दोनों का ध्यान अपनी तरफ खींचा और ये बातें करना बन्द कर उसी तरफ को देखने लगे. ऐसा जान पड़ता था, मानों कोई आदमी हाथ में बत्ती लिए इधर-उधर घूम रहा हो. थोड़ी देर बाद वह रोशनी गायब हो गई मगर तुरन्त ही बाग के दूसरी तरफ दिखाई पड़ी जिधर कुछ इमारतें बनी हुई थीं. इस तरफ पेड़ कम होने के कारण इन दोनों ने साफ देख लिया कि एक सुफेदपोश हाथ में बत्ती लिए एक दरवाजे के सामने खड़ा कुछ कर रहा है. थोड़ी ही देर में वह दरवाजा खुल गया और सुफेदपोश ने अन्दर घुस उसे भीतर से बन्द कर लिया.

मालती : यह कौन आदमी हो सकता है ?

प्रभा० : मालूम नहीं, मगर रंग-ढंग से जान पड़ता है कि यह इस स्थान से बखूबी वाकिफ है.

मालती : देखिए वह फिर बाहर निकला !

एक-दूसरे दरवाजे की राह वह सुफेदपोश पुनः बाग में निकल आया और तब तेजी के साथ चलता हुआ उस नहर के किनारे जा पहुँचा. यहाँ पहुँच कर वह रुका और तब जमीन पर बैठ कुछ करने लगा.

प्रभाकरसिंह ने यह देखकर कहा, "वहाँ चलकर पता लगाना चाहिए कि वह कौन है और क्या कर रहा है."

मालती : कहीं वह कम्बख्त वही तिलिस्मी शैतान न हो!

प्रभा० : अगर वह तिलिस्मी शैतान होगा तो उसे हमारे इस जगह होने की पूरी खबर होगी और हम उससे किसी तरह भी अपने को बचा नहीं सकते, मगर मेरा दिल कहता है कि वह तिलिस्मी शैतान नहीं बल्कि कोई दूसरा ही है जिसे हम लोगों के यहाँ होने की कुछ भी खबर नहीं है.

मालती : अच्छी बात है, पेड़ों की आड़ में छिपते हुए हम लोग उसके पास पहुँच कर कम-से-कम इतना पता तो लगा ही सकते हैं कि वह क्या कर रहा है.

दोनों आदमी उठ खड़े हुए और पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाते हुए दबे कदम उसी तरफ बढ़े जिधर वह सुफेदपोश था. उससे लगभग बीस कदम के फासले पर एक बड़े जामुन के पेड़ की आड़ में ये दोनों जा खड़े हुए और देखने

लगे. पीठ घूमी रहने के कारण उसकी शकल तो ये लोग देख न सके मगर यह मालूम हो गया कि वह जमीन में एक गड्हा खोद रहा है. इन लोगों के देखते-देखते उसने कोई हाथ भर गहरा गड्ढा जमीन में खोदा और तब उसके अन्दर कोई चीज रख उसे पाटने लगा. जब गड्ढा पट गया तो पैर से पीट-पीट कर जमीन बराबर कर दी और तब रोशनी लिए उसी तरफ को लौट गया जिधर से आया था. बाईं तरफ की इमारत में बने एक दरवाजे के अन्दर घुस कर उसने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया और इन लोगों की आँखों से ओट हो गया.

मालती : वहाँ पर जाकर देखना चाहिए कि उसने जमीन में कौन-सी चीज गाड़ी है.

प्रभा० : यही मेरी भी इच्छा है.

दोनों आदमी उसी जगह पहुँचे. प्रभाकरसिंह जल्दी-जल्दी जमीन खोदने और मालती चारों तरफ इस निगाह से चौकन्नी होकर देखने लगी कि यह आदमी पुनः लौट कर काम में विघ्न न डाले. तुरन्त ही का खोदा गड्ढा होने के कारण प्रभाकरसिंह ने उस जगह की मिट्टी शीघ्र ही निकाल ली और तब उन्हें एक छोटी-सी गठरी दिखाई पड़ी. वह गठरी बाहर निकाल उन्होंने गड्ढे को पुनः पाट दिया और दोनों आदमी उस बारहदरी में लौट आए.

प्रभाकरसिंह की कमर में एक छोटा-सा बटुआ था जिसमें उन्होंने कुछ बहुत-ही जरूरी वह सामान रक्खा हुआ था जो इन्द्रदेव ने उन्हें दारोगा के मकान में जाती समय दिया था. इस समय उसमें से उन्होंने चाँदी की एक छोटी-सी डिबिया निकाली और उसका कोई खटका दबाया. साथ ही उस डिबिया का एक हिस्सा चमकने लगा और इतनी रोशनी पैदा हो गई कि यह देखा जा सके कि उस गठरी में क्या है. डिबिया मालती के हाथ में देकर प्रभाकरसिंह ने वह गठरी खोली जो किसी तरह के रोगनी कपड़े में बँधी हुई थी और साथ ही चौंक पड़े. उसके अन्दर एक दूसरी छोटी गठरी थी जिसका कपड़ा खून से एकदम तर मालूम होता था और उसीको देखकर प्रभाकरसिंह चौंके थे. मालती भी इसे देखकर झिझक गई मगर प्रभाकरसिंह ने हिम्मत कर उस खून से सने कपड़े को खोल डाला, उसके अन्दर से जो चीज निकली वह और भी डरावनी थी यानी वह किसी की खोपड़ी थी जिस पर चमड़े या माँस का नाम-निशान भी न था मगर और सब तरह से बिलकुल दुरुस्त थी और उसके नीचे चाँदी का एक डिब्बा था. प्रभाकरसिंह ने

झोपड़ी एक तरफ रख दी और उस डिब्बे को देखने लगे जो मजबूती के साथ एकदम बन्द था.

यकायक मालती चौंकी और बोल उठी, "ओह इस डिब्बे को तो मैं पहिचानती हूँ. लाइए मुझे दीजिए, मैं इसे खोल दूँ !" प्रभाकरसिंह ने यह सुन ताज्जुब करते हुए वह डिब्बा मालती के हाथ में दे दिया जिसने एक दफे गौर से उसे देखा और तब "वेशक वही है" कहकर जोर से उठाकर जमीन पर पटक दिया. पटकने के साथ ही उस डिब्बे का ऊपरी हिस्सा दो टुकड़े होकर खुल गया और भीतर भोजपत्र पर लिखी एक पुस्तक तथा सोने की एक चाभी दिखाई देने लगी. यह चाभी करीब छः अंगुल के लम्बी और वह पुस्तक जिस पर चाँदी की सुन्दर जिल्द बनी हुई थी लगभग एक बालिश्त के लम्बी और दस-बारह अंगुल चौड़ी होगी. इस पुस्तक और चाभी को देखते ही मालती खुशी के मारे चीख उठी और बोली, 'वाह इन चीजों को इस तरह यहाँ पाने की तो कभी स्वप्न में भी आशा नहीं हो सकती थी !"

प्रभा० : (ताज्जुब से) यह किताब कैसी है और चाभी कहाँ की है ?

मालती : इन्द्रदेवजी की जुबानी मालूम हुआ था कि यह किताब लोहगढ़ी के भेदों का खजाना है और चाभी वहाँ के तिलिस्म की है. अपना हाल कहती समय मैंने कहा था कि कुछ आदमियों को एक गठरी गाड़ते देख मैं उसे उठा लाई थी और उसमें से एक चाँदी का डिब्बा निकला था जिसे खोलकर इन्द्रदेवजी ने कई चीजें निकाली थीं.

प्रभा० : हाँ, तो क्या यह डिब्बा वही है ?

मालती : जी हाँ.

प्रभा० : तब तो यह बड़ी अनमोल चीज है. हम लोगों को यह पुस्तक आदि से अन्त तक पढ़ जानी चाहिए. सम्भव है इसकी सहायता से हम लोग तिलिस्म को तोड़ सकें या और कुछ नहीं तो कम-से-कम इसके बाहर निकल सकें.

मालती : बेशक यही बात है.

कुछ देर तक इन दोनों में और बातचीत होती रही और इसके बाद यह निश्चय करके कि रात इसी दालान में काटी जाय सुबह होने पर देखा जाएगा, दोनों ने वहीं लम्बी तानी. सोने से पहिले सक्षेप में प्रभाकरसिंह ने मालती को अपना कुल किस्सा भी सुना दिया.

मौसमी फूलों की खुशबू से भरी हुई सुबह की ठंडी-ठंडी हवा मस्ती पैदा कर रही है. प्रभाकरसिंह दो-चार करवटें बदलकर उठना चाहते हैं पर आलस्य उठने की इजाजत नहीं देता. यकायक इसी समय कहीं से दौड़ती हुई मालती वहाँ आई और उन्हें जगाती हुई बोली, "उठिये उठिये, एक बड़े ताज्जुब की बात अभी मैंने देखी है."

प्रभाकरसिंह चौंक कर उठ बैठे और कुछ घबड़ाए हुए से बोले, "क्या है ? क्या है ?"

मालती : जिस तरह के तिलिस्मी शैतान ने हम लोगों को कैद किया था वैसे ही तीन-चार शैतानों को अभी उस दरवाजे से निकलकर उस तरफ जाते मैंने देखा है. बहुत मुमकिन है कि वे लोग कुछ उपद्रव करें. हम लोगों को होशियार हो जाना चाहिए.

यह सुनते ही प्रभाकरसिंह ने कहा, "जरूर ! वे लोग किधर गए हैं ?" मालती के हाथ से बताने पर वे खड़े हुए और अपना सामान बटोर उधर चलने को तैयार हो गए जिधर मालती ने बताया था. उनकी तलवार तिलिस्मी शैतान से लड़ कर टूट चुकी थी मगर वह करामाती डण्डा जो इन्द्रदेव ने दिया था अभी तक उनके पास मौजूद था जिसे उन्होंने हाथ में लिया और तिलिस्मी किताब जेब में रक्खी. वह सिर जो किताब के संग पाया था वहीं छोड़ा और मालती को लिए पेड़ों की आड़ देते हुए उस तरफ बढ़े जिधर मालती ने बताया था.

कुछ दूर जाने के बाद पेड़ों की आड़ में से प्रभाकरसिंह को कमर भर ऊँचा एक चबूतरा दिखाई पड़ा. इस समय इसी चबूतरे पर प्रभाकरसिंह को ठीक उसी सूरत-शकल के चार शैतान दिखाई पड़े जिस तरह के एक से लड़ कर वे जक उठा चुके थे. इस समय वे चारों इस तरह खड़े थे मानों आपस में कुछ बातें कर रहे हों मगर उनका मुंह दूसरी ओर और पीठ इन दोनों की तरफ थी जिससे उनकी बातें सुनना कठिन था. प्रभाकरसिंह ने यह देख मालती से कहा, "तुम यहीं ठहरो, मैं जरा पास जाकर सुनना चाहता हूँ कि वे क्या बातें कर रहे हैं."

यह सुनते ही मालती घबड़ा कर बोली, "नहीं-नहीं, हम लोगों को यहाँ से भाग कर अपनी जान बचानी चाहिए न कि उनके पास जाकर जोखिम में पड़ना. चलिए हम लोग कहीं छिप रहें या कोई रास्ता मिले तो किसी तरफ निकल जायँ."

प्रभाकरसिंह ने यह सुन कहा, "एक तो हम लोग यहाँ से भाग कर नहीं जा

सकते, दूसरे मैं उनकी निगाह बचाता हुआ वहाँ तक जाऊँगा. अगर वे लोग अभी तक हम लोगों को देख नहीं पाए हैं तो अब देख न सकेंगे इसका मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, मुझे उनकी बात सुनने का बहुत कौतूहल हो रहा है क्योंकि मेरा दिल गवाही देता है कि वहाँ जाने से जरूर कोई-न-कोई मतलब की बात सुन पड़ेगी. तुम बिलकुल न डरो और मुझे जाने दो.

मालती : अगर ऐसी बात है तो मैं भी आपके साथ ही चलती हूँ.

लाचार प्रभाकरसिंह मालती को लिए हुए ही आगे की तरफ बढ़ने पर मजबूर हुए. पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाते और बहुत ही दबाकर कदम रखते हुए वे थोड़ी देर में उस चबूतरे के इतने पास पहुँच गये कि इन शैतानों की बातें कुछ-कछ सुनाई पड़ने लगीं. ये दोनों भी सुनने लगे.

एक शैतान : तो क्या हम लोग अब प्रभाकरसिंह को पकड़ नहीं सकते ?

दूसरा : नहीं, क्या तुम नहीं जानते कि जिसके पास तिलिस्म की चाभी हो उसे हम लोग हाथ नहीं लगा सकते ! उसे हाथ लगाना तो दूर हम लोगों को अपने बचाव का इन्तजाम करना चाहिए क्योंकि अगर उसने तिलिस्म तोड़ने के काम में हाथ लगा दिया तो सबसे पहिले हमीं मारे जायेंगे !

तीसरा : सो क्यों ? हम लोग क्यों मारे जायेंगे ?

चौथा : क्योंकि हमीं लोग इस तिलिस्म के पहरेदार हैं और बिना हमको मारे वह तिलिस्म तोड़ नहीं सकता.

पहिला : तो क्या ऐसी कोई तरकीब नहीं है जिससे हम लोग अपनी-अपनी जान बचा सकें.

दूसरा : (कुछ सोच कर) बस सिर्फ एक तरकीब हो सकती है.

सब : वह क्या ?

पहिले शैतान ने धीरे-से कुछ कहा जिसे सभों ने बड़े गौर से सुना और तब एक साथ ही खुश होकर बोल उठे, "ठीक है, ठीक है, बस यही तरकीब करनी चाहिए." उन लोगों में धीरे-धीरे कुछ बातें हुईं जिन्हें प्रभाकरसिंह सुन न सके और तब वे सब के सब वहाँ से चलने को तैयार हुए. यह सोचकर कि ये सब कहीं हमारी ही तरफ न आवें प्रभाकरसिंह और मालती फुरती से दूसरी तरफ हटकर एक झाड़ी के अन्दर जा छिपे मगर उन लोगों की शकल फिर न दिखाई पड़ी. जब बहुत देर गुजर गई तो ताज्जुब करते हुए प्रभाकरसिंह झाड़ी के बाहर निकले.

चारों तरफ सन्नाटा था और कहीं कोई दिखाई नहीं पड़ रहा था. अच्छी तरह देखभाल कर अन्त में विश्वास कर लेना पड़ा कि वे चारों शैतान किसी दूसरी तरफ निकल गये.

प्रभाकरसिंह और मालती में कुछ देर तक बातें होकर अन्त में यह स्थिर हुआ कि जरूरी कामों से छुट्टी पाकर सबसे पहिले उस तिलिस्मी किताब को पढ़ डालना चाहिए इसके बाद ही किसी काम में हाथ लगाना ठीक होगा. यह निश्चय कर वे दोनों वहाँ से हटे और जरूरी कामों से निपटने की फिक्र में पड़े.

3

सुबह का समय है. इन्द्रदेव के कैलाश-भवन से चारों तरफ के पहाड़ियों की विचित्र छटा बड़ी सुहावनी नजर आ रही है. इन्द्रदेव अभी स्नान-पूजा आदि से निवृत्त होकर उठे हैं और अपने बैठने के कमरे की एक खिड़की के सामने खड़े होकर उस प्राकृतिक दृश्य को देख रहे थे जब एक चोबदार ने आकर कहा, "भूतनाथ ऐयार आये हैं."

भूतनाथ का नाम सुनकर इन्द्रदेव चौंके और बोले, "उन्हें नीचे वाले बैठक में लाओ, मैं वहीं चलता हूँ!" "जो हुक्म" कहता हुआ वह चोबदार चला गया और इन्द्रदेव वहाँ से हटकर महल के अन्दर चले गए. थोड़ी देर बाद जब वे नीचे पहुँचे तो भूतनाथ को बैठा पाया जो उन्हें देखते ही उठ खड़ा हुआ. इन्द्रदेव ने बड़े प्रेम से उससे मुलाकात की और तब दोनों आदमी गद्दी पर जा बैठे.

इन्द्र० : कहो जी गदाधरसिंह, इस बार तो बहुत दिनों पर आये.

भूत० : जी हाँ, तरद्दुदों और फिक्रों में मैं इस तरह डूबा हुआ था और अब तक डूबा हुआ हूँ कि किसी तरह फुरसत ही नहीं मिलती, मगर कई जरूरी खबरें आपको देनी थीं इससे आना ही पड़ा.

इन्द्र० : वे खबरें क्या हैं ?

भूत० : पहिली बात तो उस गुप्त कमेटी के सम्बन्ध में है. यह तो आपको भी पता लग ही गया होगा कि उसके कर्ता-धर्ता जमानिया के दारोगा साहब हैं.

इन्द्र० : हाँ सन्देह तो जरूर ही मुझे है पर इसका कोई पक्का सबूत अभी तक मेरी आँखों के सामने से नहीं गुजरा. क्या तुम्हें इस बात का पूरी तरह से विश्वास

हो गया ?

भूत०: जी हाँ, और इन कागजों को पढ़ने से आपको भी किसी तरह का शक न रह जायगा.

भूतनाथ ने अपनी जेब में हाथ डाला और कुछ कागजात निकाल कर सामने रख दिया. इन्द्रदेव ने उन कागजों को सरसरी निगाह से देखा और तब यकायक चौंककर बोल उठे, "हैं, ये कागजात तुम्हारे हाथ कैसे लग गये!"

भूत० : (मुस्कुरा कर) इन्हें मैं खास उस कमेटी के दफ्तर से लूट लाया हूँ, उस समय शायद आप भी वहाँ मौजूद थे जब कुछ लोगों ने कमेटी पर डाका डाला और बहुत-सा सामान लूट ले गये थे.

इन्द्र० : (मुस्कुराकर) अच्छा तो वह तुम्हारा ही काम था! मुझे उसी समय सन्देह हुआ था परन्तु तब कुछ बोलना या छेड़ना मुनासिब न समझा (फिर से कागजों को देखकर) ये कागज तो बड़े ही कीमती हैं, ये अगर गोपालसिंह को दिखला दिये जाएं तो वे एकदम ही इस कमेटी को जड़से नाश करके अपने दुश्मनों से हमेशा के लिए बेफिक्र हो सकते हैं. तुम ये कागज मुझे सिर्फ दिखाने को ही लाये हो या मैं इनसे कुछ काम ले सकता हूँ ?

भूत० : आप मालिक हैं जो चाहें कर सकते हैं, पर कुछ सबब ऐसे आ पड़े जिनसे मैं अभी यह मुनासिब नहीं समझता कि राजा गोपालसिंह इन कागजों को देखें.

इन्द्र० : (ताज्जुब से) वे सबब क्या हैं ?

भूत० : यह भी मैं बयान करूँगा मगर पहले कई दूसरी जरूरी बातें आपको सुना दूं. आप शायद इन्दिरा से तो मिल ही चुके होंगे ?

इन्द्र० : हाँ बलभद्रसिंह स्वयं मेरे पास आये थे और सब हाल मुझसे कहकर तुम्हारी बहुत तारीफ करते थे. इसके बाद मैं उनके साथ उनके घर जाकर इन्दिरा से मिल भी आया मगर उसे अपने यहाँ लाया नहीं, क्योंकि मैंने देखा कि अपने घर लाने की बनिस्बत उसे कुछ समय तक बलभद्रसिंह के पास छोड़ देना ही मुनासिब होगा, ऐसा करने से दुश्मनों को सन्देह न होगा और मैं भी घर की चिन्ता छोड़ बाहर रह कर पूरी बेफिक्री के साथ काम कर सकूँगा. इसके सम्बन्ध में धन्यवाद का पत्र लेकर मेरा शागिर्द आज ही तुम्हारे पास जाने वाला था.

भूत०: यह तो आप मुझे शर्मिन्दा करने की बातें करने लगे, या शायद आपने

अभी तक पूरे दिल से मुझे माफ नहीं किया और अभी भी मुझ पर शक की निगाहें ही डाल रहे हैं. क्या अपनी ही लड़की को दुश्मनों के हाथ से छुड़ाना किसी पर अहसान करना है ?

इन्द्र० : नहीं, सो तो नहीं है, खैर जैसा तुम समझो, अच्छा और क्या बात है?

भूत० : आपकी सर्यू तो आपके पास पहुँच ही गई होंगी ? मैंने उन्हें भी छुड़ाने का उद्योग किया था पर यह सुना कि आपका ऐयार उन्हें दारोगा के घर से ले गया अस्तु चुप रह गया.

इन्द्र० : नहीं, सर्यू तो मेरे यहाँ नहीं पहुँची.

भूत० : वह आपके यहाँ नहीं पहुँचीं ? क्या सिद्ध बाबाजी बनकर आपका कोई आदमी उन्हें दारोगा साहब के मकान से नहीं निकाल लाया?

इन्द्र० : एक आदमी गया जरूर था मगर वह दुश्मनों के फेर में पड़ गया और सर्यू भी कहीं गायब हो गई. तब से अब तक मैं उसको ढूँढ़ रहा हूँ लेकिन कुछ पता नहीं लगता है.

भूत० : (ताज्जुब से) अच्छा ! यह बात मुझे कुछ भी मालूम नहीं. अच्छा मैं पुनः उद्योग करूँगा और अगर दारोगा के कब्जे में वह होंगी तो जरूर निकाल लाऊँगा.

इन्द्र० : जरूर ऐसा करना क्योंकि तुम इस सम्बन्ध में मुझसे कहीं ज्यादा काम कर सकते हो. हाँ, खूब खयाल आया, क्या बलभद्रसिंह को तुमने कहा था कि उनकी जान के पीछे दुश्मन लगे हुए हैं जो यह भी चाहते हैं कि गोपालसिंह के साथ लक्ष्मीदेवी की शादी न होने पावे.

भूत० : जी हाँ, मैंने उनसे कहा था और मुझे उम्मीद है कि आप भी उन्हें बहुत होशियार कर देंगे. उनकी और उनके रिश्तेदारों की जान बहुत खतरे में है और अफसोस यह कि मेरे होशियार कर देने पर भी वे सम्हले नहीं हैं.

इन्द्र० : आखिर बात क्या है सो तो बताओ !

भूत० : असल बात तो वही है जो शायद आपको भी मालूम ही होगी यानी दारोगा साहब चाहते हैं कि उनके परममित्र हेलासिंह की लड़की मुन्दर से गोपालसिंह की शादी हो जाय ताकि वह राजरानी बन जाय.

इन्द्र० : हैं ! यह क्या तुम ठीक कह रहे हो ?

भूत० : बिलकुल ठीक, मगर क्या आपको इसकी खबर नहीं ?

इन्द्र० : मैंने उड़ती हुई कुछ ऐसी खबर बेशक सुनी थी मगर यह सोच कर ध्यान नहीं दिया था कि ऐसा कभी सम्भव नहीं हो सकता. यह सोचने का केवल यही कारण न था कि दारोगा साहब अपने मालिक राजा गोपालसिंह के साथ ऐसा दगा नहीं करेंगे, बल्कि यह भी था कि बलभद्रसिंह दारोगा साहब के बड़े पुराने दोस्त हैं और उनकी बेटी को दारोगा अपनी बेटी की तरह समझता है.

भूत० : यह सब उस की धूर्तता है. मुझे ठीक-ठीक मालूम हो चुका है कि दारोगा लक्ष्मी देवी की जान लेना चाहता है बल्कि यहाँ तक चाहता है कि बलभद्र-सिंह, उनकी स्त्री, लड़कियाँ और लड़के सभी यमलोक को सिधार जायं, और इस बात का बहुत सच्चा सबूत मेरे पास मौजूद है !

इतना कह भूतनाथ ने अपना बटुआ खोला और उस में से कोई चीज खोजने लगा मगर शायद न पाकर थोड़ी देर बाद बोला, "अफसोस, उन कागजों को मैं घर ही छोड़ आया ! खैर इस चीठी से भी आपको विश्वास हो जायगा कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ बहुत ठीक कह रहा हूँ."

कह कर भूतनाथ ने एक कागज जो चीठी की तरह मोड़ा हुआ था बटुए से निकाल कर इन्द्रदेव के हाथ में दे दिया, उन्होंने उसे गौर से पढ़ा, यह लिखा हुआ था :—

"मेरे भाग्यशाली मित्र हेलासिंह,

मुबारक हो, आज हमारी जहरीली मिठाई बलभद्रसिंह के घर में जा पहुँची. इसका जो कुछ नतीजा देखूँगा अगली चीठी में लिखूंगा. वास्तव में तुम किस्मत-वर हो.

—वही भूतनाथ"

चीठी का मजमून पढ़ कर इन्द्रदेव के चेहरे पर चिन्ता की एक छाया दौड़ गई और वे ताज्जुब से भूतनाथ का मुँह देखने लगे.

भूत० : इस चीठी की लिखावट से ही आप समझ गये होंगे कि इसका लिखने वाला कौन है !

इन्द्र० : बखूबी !

भूत० : और जिस मिठाई की तरफ इशारा है उसने बलभद्रसिंह के घर में पहुँच कर क्या किया होगा इसे भी आप समझ ही सकते हैं.

इन्द्र० : बहुत ही अच्छी तरह !

भूत० : अस्तु अब आपको इस बात में भी सन्देह न रह गया होगा कि बलभद्रसिंह कैसी आफत में फँस गये हैं.

इन्द्र० : नहीं, अब मुझे कोई संदेह नहीं रहा. तुमने बहुत अच्छा किया जो मुझे इस बात की खबर दी. मैं बलभद्रसिंह को अच्छी तरह होशियार कर दूंगा और खुद भी जहाँ तक हो सकेगा उनके बचाव का बन्दोबस्त करूँगा, मगर तुम इतना सुन कर निश्चिन्त न हो जाओ. बलभद्रसिंह हमारा-तुम्हारा लंगोटिया दोस्त है और उस पर किसी तरह की मुसीबत आने से हम सभी को कष्ट होगा. तुम्हें इस विषय में जब कभी जो कुछ भी मालूम हो बराबर मुझे बताते रहना.

भूत० : बहुत खूब, मगर इस संबंध में इतनी प्रार्थना मेरी है कि जिन लोगों को धोखे में डाल कर मैंने इस भेद का पता पाया है उन्हें यह न मालूम हो कि मैं उनका भण्डा फोड़ रहा हूँ, नहीं तो वे केवल मेरे दुश्मन ही न हो जाएँगे बल्कि भविष्य में उन लोगों की नई कार्रवाई के जानने का रास्ता भी बंद हो जायेगा.

इन्द्र० : नहीं नहीं, इस बात से तुम पूरी तरह से निश्चित रहो, मैं ऐसी कोई भी कार्रवाई न करूँगा जिससे तुम्हें जरा भी तरद्दुद उठाना पड़े.

भूत० : यह तो मुझे विश्वास है. अच्छा अब अगर आप नाराज न हों तो आपसे एक बात पूछूं.

इन्द्र० : (ताज्जुब से) ऐसी कौन-सी बात हो सकती है जिसके पूछने से मैं नाराज हो जाऊँगा ! तुम जो कुछ पूछना चाहते हो खुशी से पूछो.

भूत० : क्या आपके कब्जे में या आपके इस मकान के आसपास लोहगढ़ी नामक कोई तिलिस्म है ?

इन्द्र० : (चौंक कर) लोहगढ़ी !

भूत० : जी हाँ, लोहगढ़ी !

इन्द्र० : यह नाम तुमने कहाँ और किससे सुना ?

भूत० : जमानिया के दारोगा साहब से.

इन्द्र० : (कुछ सोच कर) हाँ, इस नाम का एक तिलिस्म है जरूर परंतु मुझे उससे कोई संवंध नहीं और न वह मेरे कब्जे में ही है. वह जमानिया तिलिस्म की एक शाखा है और जहाँ तक मुझे खबर है उसका भेद इस समय हेलासिंह के कब्जे में है. मगर तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो ? लोहगढ़ी से तुमसे क्या मतलब ?

भूत० : (कुछ हिचकता हुआ) मैंने उसके बारे में कुछ विचित्र बातें सुनी हैं.

इन्द्र० : क्या ?

भूत० : पर उन्हें मैं आपसे बयान करते डरता हूँ.

इन्द्र० : (हँस कर) मुझे कुछ रंग बेढब दिखाई पड़ता है. आखिर मामला क्या है जो तुम इस तरह की बातें कह कर मेरा कौतूहल बढ़ा रहे हो ! कुछ साफ-साफ कहो भी तो !

भूत० : अच्छा तो मैं साफ-साफ ही कहता हूँ. मुझे खबर लगी है कि उसी तिलिस्म में दयाराम कैद हैं !

इन्द्र० : (हँस कर) वाह, यह भी खूब कही ! दयाराम का इन्तकाल हुए तो बरसों हो गये और इसे तुम बखूबी जानते हो, फिर इस खबर पर तुम्हें विश्वास क्योंकर हो गया ! भला इसे भी कोई मान सकता है कि दयाराम जीते हैं और किसी तिलिस्म में कैद हैं ?

भूत : मुझे पक्की तौर पर यह बात मालूम हुई है बल्कि कहने वाले ने तो यहाँ तक कहा है कि उसी में इस समय जमना, सरस्वती आदि भी कैद हैं.

इन्द्र० : खैर जमना, सरस्वती का कहीं होना तो मैं मान सकता हूँ क्योंकि वे बहुत दिनों से गायब हैं और मैं अभी तक उनकी खोज में परेशान हूँ, मगर दयाराम के जिन्दा और किसी तिलिस्म में होने की बात पर मैं किसी तरह विश्वास नहीं कर सकता. तुमने एक बार पहिले भी इसी तरह की खबर सुनाई थी जिस पर मैंने बहुत कुछ खोज की और परेशानी भी उठाई मगर नतीजा कुछ न निकला और अन्त में वह खबर झूठी निकली. आज फिर वही बात तुम्हारे मुँह से सुन रहा हूँ ! मैं समझता हूँ कि इस तरह की खबरें परेशान करने के लिए ही कोई तुम्हें देता है बल्कि संभव है कि तुम्हारे दारोगा साहब के ही ये मंत्र फूँके हुए हों.

भूत० : इस दफे तो बेशक दारोगा ने ही यह बात मुझसे कही और यहाँ तक जोर देकर कही है कि मुझे उसका कहना मान लेना पड़ा है. उसने तो यहाँ तक कहा कि वह अपने साथ ले जाकर उन लोगों को वहाँ दिखा सकता है.

इन्द्र० : तब तो मैं अवश्य कहूँगा कि जरूर उसके साथ जाओ और देखो कि उसके कहने में कहाँ तक सचाई है. यद्यपि दयाराम को जीता देख कर मुझसे ज्यादा प्रसन्नता शायद किसी को भी नहीं होगी पर यों ही झूठमूठ मृगतष्णा पर दौड़ना मैं बिल्कुल व्यर्थ समझता हूँ, हाँ इतना जरूर कहूँगा कि अगर कोई दयाराम दारोगा साहब तुम्हारे सामने पेश करें तो इस बात का अच्छी तरह निश्चय कर

लेना कि वे सचमुच ही दयाराम हैं और दारोगा का कोई ऐयार नहीं क्योंकि ताज्जुब नहीं कि दारोगा किसी झूठे दयाराम को तुम्हें दिखलाकर अपना कोई काम साधने की फिक्र में हो.

भूत० : नहीं नहीं, मैं ऐसी गलती कदापि नहीं कर सकता. क्या आप समझते हैं कि दयाराम को सामने पाकर भी मैं उनके पहिचानने में भूल कर जाऊँगा !

इन्द्र० : नहीं नहीं, सो तो मैं नहीं समझता पर अपना खयाल तुम पर जाहिर कर दिया, क्योंकि दारोगा साहब के लिये कोई बात भी मुश्किल नहीं है. मगर भूतनाथ, मुझे शक होता है कि इस विषय में तुम मुझे सब बातें साफ-साफ नहीं कहते हो, जरूर कुछ छिपा रहे हो.

भूत० : (जिसका चेहरा इन्द्रदेव की यह बात सुन कर कुछ उतर-सा गया) नहीं नहीं, ऐसा तो नहीं है, मैं तो सब कुछ साफ-साफ आपसे कह रहा हूँ और मुझे विश्वास है कि मेरी बातों में कहीं भी झूठ की गंध आपने न पाई होगी.

इन्द्र० : नहीं नहीं, मैं झूठ कहने का दोष तुम पर नहीं लगा रहा हूँ, मैं सिर्फ इतना ही कह रहा हूँ कि इस बारे में तुम कुछ मुझसे छिपा रहे हो.

भूत० : ऐसा शक आपको क्यों होता है ?

इन्द्र० : बस यों ही ! दारोगा तुम्हें दयाराम के जीते होने की खबर दे, लोहगढ़ी में उनका होना बतावे जो खास उसके मित्र के कब्जे में है, और उसका संबंध मुझसे जोड़े, ये सब ऐसी बातें हैं जो यकायक मन में नहीं धंसती. अगर दयाराम वास्तव में मरे नहीं और जीते होकर कहीं कैद में हैं तो दारोगा सबसे पहिला आदमी है जिसके हक में उनका छूटना जहर का काम करेगा, तुम्हारे लिये उनका प्रकट हो जाना जितना अच्छा है दारोगा के हक में उनका मरे रहना वैसा ही उत्तम है और इस बात को वह अच्छी तरह समझता भी है फिर भी वह तुम्हें ऐसी खबर देता है इससे मुझे ताज्जुब होता है. या तो उसके मन में कुछ कपट है और या फिर किसी कारण से बहुत लाचार हो गया है ऐसा मुझे जान पड़ता है.

भूत० : जी हाँ, वह बड़ी लाचारी में पड़ गया है और तभी उसने यह भेद बताया. मैंने आपसे कहा न कि उसकी सभा से इन्दिरा वाला कलमदान मैं ही लूट लाया था. उस कलमदान में जो कुछ है वह तो आप बखूबी जानते ही हैं अस्तु उसके लिये दारोगा जहाँ तक व्याकुल हो थोड़ा है, उसी को वापस पाने के लिये वह सब कुछ करने को तैयार है और तभी उसने यह खबर दी है.

इन्द्र० : वह अगर दयाराम को जीते-जागते तुम्हें दिखा दे तो क्या तुम वह कलमदान उसे वापस कर दोगे ?

भूत० : सिर्फ दयाराम को दिखा देने का ही सवाल नहीं है. उससे बीस हजार अशर्फी मैंने इसके लिये वसूल की है और यह इकरारनामा भी लिखा लिया है कि भविष्य में राजागोपालसिंह या आपसे अथवा आपकी स्त्री और लड़की आदि से किसी प्रकार का भी बुरा बर्ताव न करेगा. देखिये यह इकरारनामा मौजूद है.

कहकर भूतनाथ ने एक कागज बटुए से निकालकर इन्द्रदेव के हाथ में दिया जिसे वे सरसरी निगाह से पढ़ गये और तब उसे वापस करते हुए बोले, "मालूम होता है कि इस इकरारनामे और दयाराम को दिखा देने के वादे पर विश्वास करके तुम वह कलमदान दारोगा को वापस कर देना चाहते हो !

भूत० : जी हाँ, बल्कि मैंने वापस कर दिया. मगर क्या आप समझते हैं कि वह अपना वादा पूरा न करेगा ?

इन्द्र० : (चौंक कर) हैं ! वापस कर दिया !!

भूत० : (सुस्त होकर) जी हाँ, मगर क्या आपकी निगाह में यह अच्छा नहीं हुआ ?

इन्द्रदेव ने एक लम्बी साँस ली और किसी चिन्ता में पड़ कर सिर झुका लिया. भूतनाथ आश्चर्य और दुःख से उनकी सूरत देखने लगा, क्योंकि इन्द्रदेव का चेहरा देख उसे ऐसा मालूम हुआ मानों उन्हें कोई बड़ा गहरा दुःख हुआ है. भूतनाथ कुछ देर तक उनका मुँह देखता रहा और जब वे कुछ न बोले तो धीरे से बोला, "मालूम होता है, वह कलमदान लौटाकर मैंने गलती की !"

इन्द्रदेव ने एक दुःख-भरी निगाह भूतनाथ पर डाली और फिर एक ठंडी साँस लेकर कहा, "गदाधरसिंह, तुम्हारे ऐसा जमाना देखे हुआ ऐयार भी ऐसी भूल करेगा यह मुझे स्वप्न में भी गुमान नहीं हो सकता था. क्या तुम समझते हो कि वह दारोगा जिसने अपने माता-पिता के साथ घात किया, भाइयों के साथ दगा की, मालिक को जहन्नुम में मिलाया और जमाने भर की बुराइयों का पुतला बना रहा वही मौका पड़ने पर इस इकरारनामे का खयाल करेगा ! क्या तुम समझते हो कि अगर कभी मुझे, मेरी स्त्री, लड़की या गोपालसिंह को इस दुनिया से उठा देना उसकी निगाह में जरूरी हो जायेगा तो वह इस कागज के टुकड़े का खयाल करेगा और अपने इरादे से बाज रहेगा ? अगर तुमने ऐसा समझा है तो बड़ी भारी भूल

की है और कभी-न-कभी इसका फल तुम्हें बहुत ही भयानक रूप से उठाना पड़ेगा. जब तुमने बीस हजार अशर्फी और यह इकरारनामा लेकर कलमदान लौटा दिया तो जरूर यह भी वादा कर दिया होगा कि अब तुम इस संबंध में उसके साथ किसी तरह की दुश्मनी का बर्ताव न करोगे और उसके इन ऐबों पर पर्दा डाल दोगे. ठीक है, तुम्हारी सूरत कह रही है कि तुमने यह वादा किया है ! तब जरूर है कि तुम अपनी तरफ से कोई ऐसी बात न करोगे जिससे उसके ऊपर किसी तरह की आँच आवे. मगर दारोगा को—अगर कभी उसने हम लोगों के साथ दुश्मनी की जरूरत देखी तो इस तरह का तरद्दुद कोई भी न होगा और वह बेखटके जो कुछ भी चाहेगा कर गुजरेगा. अफसोस भूतनाथ, तुम्हारी लालच ने बहुत बुरा किया. तुमने यह काम बहुत ही नासमझी का किया और किसी-न-किसी दिन इसका नतीजा तुम्हें भोगना पड़ेगा. उस समय तुम्हें मेरी बात याद आयेगी और तुम समझोगे कि तुमने कैसी भयानक गलती की है !"

इतना कह कर इन्द्रदेव चुप हो गये और गर्दन झुका के कुछ सोचने लगे. भूतनाथ भी उनकी बातें सुन कर सन्न हो गया और उसने भी अपना सिर झुका लिया. सच तो यह है कि उसे भी अपनी भूल मालूम हो गई थी और वह जान गया था कि लालच में पड़ कर कलमदान लौटा देने का बहुत बुरा असर होगा. उसे अपनी इस भूल पर अफसोस होने लगा और वह यहाँ तक दुःखी हुआ कि उसकी आँखों से आँसू की बूंदें टपकने लगीं.

थोड़ी देर तक इन्द्रदेव चुपचाप कुछ सोचते रहे इसके बाद उन्होंने सिर उठाया और भूतनाथ की हालत देखकर कहा, "खैर अब अफसोस करने से क्या फायदा ? जो कुछ होना था वह तो हो गया. तुम मेरे दोस्त हो, सैकड़ों दफे अपनी जुबान से मैंने तुम्हें दोस्त कहा है और तुम्हारे पचासों कसूर माफ किये हैं. इस बार भी वही होगा ! जो कुछ तुम कर आये उसे मैं मंजूर करता हूँ. अब मैं दारोगा को एकदम से ही भूल जाता हूँ और अपनी स्त्री और लड़की का भी ध्यान भुला देता हूं. अब चाहे उन पर कैसी आफत क्यों न आवे और दारोगा के सबब से मुझे स्वयं भी चाहे कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े मगर मैं दारोगा के विरुद्ध कोई कार्रवाई न करूँगा क्योंकि तुम, जो मेरे दोस्त हो, उसका कसूर माफ कर चुके हो. आज से इस सम्बन्ध में मैं कभी दारोगा का नाम भी अपनी जुबान से न निकालूंगा और न अपनी स्त्री के विषय में ही किसी से कुछ कहूँगा. तुम्हें जो कुछ करना हो

बेधड़क करो और मेरा कुछ भी खयाल न करो, दारोगा को अब मेरी तरफ से कुछ भी डरने की जरूरत नहीं, वह जो चाहे करे और तुम्हारे जो मन में आवे सो तुम करो, मैं किसी भी बात में दखल न दूंगा. जो कुछ दारोगा ने मेरे मित्रों और प्रेमियों के साथ किया था उसके लिये मैंने सोचा था कि उसे ऐसी सजा दूंगा कि गली के कुत्तों को भी उसकी हालत पर रहम आवेगा, पर मालूम होता है ईश्वर को यह मंजूर नहीं कि उसके कर्मों का फल उसे मेरे हाथों से मिलता, जब तुम उसे छोड़ चुके तो मैंने भी उसे माफ किया. तुम अगर चाहो तो भले ही उससे कह दो कि इन्द्रदेव को इन बातों की कुछ भी खबर नहीं है. मैं भी अपने को ऐसा ही बनाये रहूँगा कि उसे किसी तरह का शक न होने पावेगा और वह मुझे निरा उल्लू ही समझता रहेगा. मैं अब अपना न्याय ईश्वर के हाथों सौंपता हूँ. वह सर्वशक्तिमान जो चाहे करे मुझे सब मंजूर होगा. मगर भूतनाथ, मैं यह कहने से बाज न आऊँगा कि तुम्हारी लालच और तृष्णा ने मुझे चौपट कर दिया."

कहते हुए इन्द्रदेव की आँखें डबडबा आईं और उन्होंने बहुत मुश्किल से अपने को रोका. भूतनाथ की हालत भी बहुत ही खराब थी. उसकी आँखों से चौधारे आँसू बह रहे थे और उसकी सूरत बतला रही थी कि उसे अपनी करनी पर बड़ा ही सख्त अफसोस हो रहा है.

यकायक अपना बटुआ उठा कर भूतनाथ खड़ा हो गया. इन्द्रदेव ताज्जुब से उसकी सूरत देखने लगे मगर वह बोला, "मेरे दोस्त, मुझे माफ करो ! सचमुच मैंने बड़ी भारी भूल की ! मैं जाता हूँ और जिस तरह से भी हो अभी वह कलम-दान वापस लेकर तुम्हें देता हूँ. अब मैं भी दारोगा को कभी न छोड़ूंगा और जो कुछ उससे पाया है वह सब वापस करके उसे ऐसी सजा दूंगा कि वह भी याद करेगा !"

इतना कह भूतनाथ दरवाजे की तरफ बढ़ा मगर उसी समय लपककर इन्द्रदेव ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "यह क्या ! तुम चले कहाँ ? क्या तुम समझते हो कि मैंने जो कुछ तुम्हें कहा है वह ताने के तौर पर कहा है ? नहीं नहीं, मैंने अपने दिल की बातें तुम्हें कहीं जिन्हें अब कोई वापस नहीं ले सकता. अब तो जो होना है हो चुका. अब तो जो कुछ तुमने और मैंने किया और कहा उसमें से कुछ भी वापस नहीं होगा. जो कुछ हो चुका उसके बखिलाफ हममें से कोई भी अब कह और कर न सकेगा. आओ और अपनी जगह पर बैठो."

इन्द्रदेव ने जबर्दस्ती खींच कर भूतनाथ को अपनी जगह पर ला बिठाया, दोनों दोस्त कुछ देर तक चुपचाप सिर नीचा किये बैठे रहे. इसके बाद भूतनाथ बोला, "मेरे दोस्त-मुझे माफ करना ! मुझसे वास्तव में ऐसी भूल हो गई जिसका मुझे जन्मभर पछतावा रहेगा. मैं खूब जानता हूँ कि तुमने अब तक किस प्रकार मेरी गलतियों को क्षमा किया है और बराबर मुझे सुधारने का ही उद्योग करते रहे हो ! तुम्हारी सहनशीलता की हद नहीं है. सचमुच तुम्हारे दिल की गहराई की थाह मैंने आज तक पाई न थी. असल तो यों है कि कम्बख्त दारोगा ने मुझे उल्लू बनाया ! उसने ऐसी-ऐसी बातें कहीं कि थोड़ी देर के लिये मैं सचमुच यह समझ बैठा कि तुम मेरे साथ दगा कर रहे हो. अब मुझे साफ-साफ कह देने में भी संकोच नहीं है कि दारोगा ने मुझसे यह कहा कि दयाराम को तुम्हींने कैद किया, तुम्हीं ने उसके मारे जाने का इलजाम मेरे सिर पर थोपा और अब तुम्हीं ने उन्हें तिलिस्म में कैद कर रक्खा है. अब जो वह बातें खयाल करता हूँ तो मुझे ताज्जुब होता है कि उस समय मेरी अक्ल कहाँ चरने चली गई थी ! मगर मेरे दोस्त, मुझे एक बार फिर मौका दो कि मैं अपने मुँह की कालिख धो सकूं. मुझे इजाजत दो कि जाऊँ और वह कलमदान वापस लाऊँ."

इन्द्र० : यह विचार अब बिल्कुल छोड़ दो. जो कुछ होना था वह हो चुका. तुम भी मर्द हो और मैं भी मर्द हूँ. मर्दों की जुबान से जो निकल गया वह फिर वापस नहीं लौट सकता.

भूत०: ठीक है, मगर मेरे लिये यह बात लागू नहीं, जिसकी जिन्दगी ही दगा, फरेब, झूठ और लालच में बीती है. न-जाने कितने वादे मैंने किये और तोड़े. तुम इसे भी उसी लम्बी फिहरिस्त में जाने दो और मुझे एकबार अपने मन वाली कर लेने दो.

इन्द्र० : नहीं-नहीं गदाधरसिंह, इसका अब तुम खयाल भी न करना, मैं तुम्हें तुम्हारी इष्टदेवी भगवती दुर्गा की शपथ देता हूँ कि इस संबंध में अब कोई बात तुम कदापि न करना. जो हुआ हो गया, अब उसका अफसोस ही क्या है ! दुनिया में यह सब हुआ ही करता है और इसके लिये अफसोस करना भूल है.

भूत० : मगर भूल को सुधारना भी तो मनुष्य का ही कर्त्तव्य है.

इन्द्र० : बेशक, और भूल को अगर तुम सुधारना ही चाहते हो तो सिर्फ यही कर सकते हो कि ऐसी भूल पुनः न करो. बस यही तुम्हारे लिये सबसे बड़ा

प्रायश्चित होगा.

भूतनाथ ने बहुत कुछ कहा मगर इन्द्रदेव ने एक न मानी. आखिर लाचार भूतनाथ ने उसका जिक्र छोड़ दिया. दोनों में थोड़ी देर तक कुछ बातें होती रहीं जिसके बाद भूतनाथ उठ खड़ा हुआ. इन्द्रदेव भी उठ खड़े हुए और उसे दरवाजे तक पहुँचा गये. उसे विदा करते हुए भी उनके शब्द ये ही थे, "खबरदार भूतनाथ, मेरी कसम का खयाल रखना !"

भूतनाथ ने कुछ जवाब न दिया क्योंकि उसका गला भरा हुआ और आँखें डबडबाई हुई थीं. जिस समय वह लम्बे-लम्बे डग मारता हुआ पहाड़ी के नीचे उतर रहा था उसके कपड़े आँखों से गिरे आँसुओं की बदौलत तर हो रहे थे.

4

तिलिस्मी शैतान जिस समय प्रभाकरसिंह और मालती को लेकर चला गया तो वहाँ सन्नाटा हो गया. सिर्फ बेचारी सर्यू बेहोश और बदहवास अकेली उसी जगह पड़ी रह गई.

शैतान को गये देर हो गई और उसके लौट आने का डर कम हो गया तो धीरे-धीरे हेलासिंह उन पेड़ों की झुरमुट के बाहर निकला जिसके अन्दर वह प्रभाकरसिंह की तलवार के डर से भागकर जान बचाने के लिये छिप गया था. डरता और उस भयानक शैतान के डर से अभी तक काँपता हुआ धीरे-धीरे चारों तरफ देखता-भालता उस दालान की तरफ बढ़ा जिधर सर्यू पड़ी हुई थी. वहाँ पहुँच जब उसने निश्चय कर लिया कि सर्यू अभी तक बेहोश है और किसी गैर की निगाहें उस पर पड़ नहीं रही हैं तो उसका डर कुछ दूर हुआ और उसने जेब से एक सीटी निकाल किसी खास इशारे के साथ मगर बहुत धीरे-धीरे बजानी शुरू की. इस सीटी की आवाज सुनते ही मुन्दर भी, जो कहीं छिपी हुई थी, आड़ से निकलकर वहाँ आ पहुँची और थोड़ी ही देर बाद हेलासिंह का वह आदमी भी आ गया जो प्रभाकरसिंह को जाते देख डरकर भाग गया था. ये तीनों बेईमान सर्यू के चारों तरफ खड़े हो गये और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये.

ज्यादा देर करने का मौका न था और उस तिलिस्मी शैतान का भी डर मौजूद था अस्तु यही निश्चय किया गया कि सयूँ की गठरी बाँध कर यहाँ से ले

चला जाय और लोहगढ़ी में पहुँचकर तब आगे की कार्रवाई स्थिर की जाय. चूंकि प्रभाकरसिंह को इन लोगों के सामने ही तिलिस्मी शैतान उठा ले गया था अस्तु उनका डर दूर हो चुका था और किसी अन्य दुश्मन का खयाल न था अस्तु इन लोगों ने सर्यू को उठा लिया और बेफिक्री के साथ उसी सुरंग की राह लोहगढ़ी की तरफ लौटे.

लगभग आधी सुरंग ये तय कर चुके होंगे कि सामने से किसी के पैरों की आहट सुनाई पड़ी. डर के मारे इन लोगों का कलेजा बाँसों उछलने लगा और सब के सब वहीं ठिठक गये क्योंकि तिलिस्मी शैतान का डर इनकी नस-नस में समा गया था, मगर थोड़ी ही देर बाद जब सिर्फ एक नकाबपोश को सामने की तरफ से आते देखा तो डर कुछ कम हुआ. मुन्दर और उस आदमी को सर्यू के साथ वहीं छोड़ हिम्मत के साथ तलवार हाथ में लिये हेलासिंह आगे बढ़ गया और उसने नकाबपोश के पास पहुँचकर, जो खुद भी इन लोगों को अपने सामने पा ठिठक गया था, डपटकर कहा, "तुम कौन हो और यहाँ किसलिये आये हो ?"

हेलासिंह की बात सुनते ही वह नकाबपोश बोला, "क्या मैं अपने दोस्त हेलासिंह की आवाज सुन रहा हूँ ?" और तब उसने अपने चेहरे पर से नकाब उलट दी. नकाब हटते ही जमानिया के दारोगा साहब सामने खड़े दिखाई पड़े. हेलासिंह ने उन्हें देख कुछ सकुचाकर कहा, "वाह वाह, दारोगा साहब हैं ! आप यहाँ कैसे आ गये !!"

दारोगा : मैं एक बहुत बड़े तरद्दुद में पड़कर यहाँ आया हूँ पर उसका हाल कहने के पहिले यह जानना चाहता हूँ कि आपको यहाँ क्यों देख रहा हूँ और वे दोनों कौन हैं जिन्हें उस जगह छोड़ आप आगे बढ़ आये हैं !

हेला० : वे दोनों मेरे नौकर हैं; मैं यहाँ एक बहुत जरूरी काम से आया था और उसे पूरा कर अब वापस जा रहा हूँ.

दारोगा : एक गठरी भी मैं आपके आदमी के सर पर देख रहा हूँ और अगर मेरी आँखें धोखा नहीं दे रही हैं तो उसमें जरूर कोई आदमी बँधा हुआ है. क्या मैं जान सकता हूँ कि वह कौन है ?

यह सवाल सुन हेलासिंह कुछ तरद्दुद में पड़ गया. वह इस बात को जाहिर नहीं करना चाहता था कि उसमें सर्यू है मगर इसको छिपाते भी डरता था क्योंकि अगर दारोगा साहब देखना चाहते हों तो वह किसी तरह उन्हें रोक न सकता था.

दारोगा साहब से अपना बहुत बड़ा काम निकलने की उसे उम्मीद थी इसलिये वह उन्हें किसी तरह भी नाराज नहीं करना चाहता था, आखिर उसने कहा, "गठरी में सर्यू बन्द है."

सर्यू का नाम सुनते ही दारोगा चौंक पड़ा और बोला, "हैं सर्यू ! वह यहाँ कैसे आ गई ?"

हेला० : कैसे आई यह तो मैं नहीं कह सकता मगर उसके साथ प्रभाकरसिंह भी थे. वे जब एक शैतान से लड़कर गिरफ्तार हो गये तो मैं यह सोचकर सर्यू को उठा लाया कि या तो इसे इन्द्रदेव के हवाले कर दूंगा या आपके, यों वह इस तिलिस्म में भूख-प्यास से मर जाती.

दारोगा : प्रभाकरसिंह इसके साथ थे और वे किसी शैतान से लड़कर गिरफ्तार हो गये ! मेरी समझ में नहीं आता कि तुम क्या कह रहे हो ! मगर खैर जो कुछ भी हो मेरे दोस्त, तुमने यह बहुत अच्छा किया कि इसे यहाँ ले आये. इसके अपने कब्जे से निकल जाने से मैं बड़े सख्त परेशानी की हालत में घर के बाहर निकला था. इसे मेरे हवाले करो ताकि मैं इसे ऐसे ठिकाने भेज दूँ कि इसकी महक का भी किसी को पता न लगे और इसकी बदौलत मुझ पर और तुम पर जो आफत आने वाली है वह दूर हो.

हेला० : (ताज्जुब से) क्या इसके छूट जाने से हम लोगों पर कुछ आफत आ सकती है ?

दारोगा : ओफ, कुछ आफत ! अजी इतनी बड़ी कि हम दोनों का दुनिया में किसी को मुँह दिखाना मुश्किल हो जायेगा ! क्या तुमको नहीं मालूम कि यह कम्बख्त न सिर्फ उस कलमदान को खोलकर उसके अन्दर वाले वे सब कागजात पढ़ चुकी है जिसमें हमारी सभा का गुप्त भेद लिखा है बल्कि इसे वह समूचा हाल भी मालूम है जो तुम्हारी लड़की मुन्दर की शादी के बारे में...

हेला० : (घबड़ाकर) क्या वे सब बातें भी इसे मालूम हैं ?

दारोगा : पूरी तरह से, इसीलिये तो मुझे इसको गिरफ्तार करना पड़ा था, खैर अब आइये देरी न कीजिये, भूतनाथ भी इस कम्बख्त की फिराक में घूम रहा है और किसी तरह उसे इसकी सुनगुन लग गई तो फिर और भी आफत आ जायेगी.

हेलासिंह कुछ देर के लिये चुप हो गया और इसी बीच में तेजी के साथ न-

जाने क्या-क्या सोच गया. इसके बाद उसने कहा, "आप खुशी से सर्यू को ले जा सकते हैं, यह आपकी चीज है, मगर इस बार इसे ऐसी तरह से रखियेगा कि फिर आपके फंदे से छूटने न पावे नहीं तो मुश्किल हो जायेगी और आपके साथ ही साथ मैं भी आफत में पड़ जाऊँगा!"

दारोगा : आप निश्चित रहिये, इस दफा मैं इसे ऐसा बन्द करूँगा कि यमराज भी इसे न पा सकेंगे.

हेलासिंह यह सुन पीछे लौट गया और मुन्दर से संक्षेप में सब हाल कह और वहीं रुकी रहने की आज्ञा दे अपने उस आदमी को लिये दारोगा के पास वापस गया जिसके सर पर सर्यू की गठरी थी. दारोगा ने कपड़ा हटा सर्यू की शक्ल खूब गौर से देखी और तब कहा, "कृपा कर इतनी तकलीफ और करें कि अपने आदमी को हुक्म दें कि इसे बाहर तक पहुँचा दे. वहाँ मेरा रथ खड़ा है जिस पर रख मैं इसे आसानी से निकाल ले जाऊँगा, जख्मी होने के कारण इसे खुद उठाने में मैं असमर्थ हूँ."

"हाँ-हाँ, यह तो जरूरी बात है." कहकर हेलासिंह ने अपने आदमी को हुक्म दिया कि दारोगा साहब के साथ जाकर सर्यू को उनके रथ तक पहुँचा आवे. दोनों में कुछ बातें और हुईं और तब हेलासिंह को वहीं छोड़ दारोगा सर्यू की गठरी हेलासिंह के आदमी के सर पर उठाये लोहगढ़ी के बाहर निकल गया.

टीले के नीचे दो घोड़ों का एक हलका रथ खड़ा था जिसकी निगहबानी करने वाला कोई दिखाई नहीं पड़ता था. सर्यू की गठरी उसी रथ पर रख दी गई, खुद दारोगा साहब ने रास सम्हाली और उस आदमी को इनाम के तौर पर कुछ दे रथ का पर्दा गिरा कर उसे तेजी के साथ हाँक दिया.

जब रथ लोहगढ़ी से दूर निकल कर एक निराले ठिकाने पर पहुँचा तो चारों तरफ गौर से देखभाल कर यह निश्चय कर लेने के बाद कि कोई छिपी निगाहें उनका काम देख नहीं रही हैं, दारोगा साहब ने रथ को रोक दिया और पर्दे के अन्दर जा कमर से लखलखा निकाल बेहोश सर्यू को सुंघाने लगे. थोड़ी ही कोशिश में सर्यू की बेहोशी दूर हो गई और वह दो-तीन छींकें मार कर उठ बैठी. अपने को एक रथ पर बैठे और सामने एक नकाबपोश को देख उसने ताज्जुब से कहा, "तुम कौन हो और मुझे कहाँ ले जा रहे हो?"

नकाबपोश ने नकाब उलट दी और यकायक दारोगा को सामने पा सर्यू के

मुंह से डर की एक चीख निकल गई, मगर दारोगा ने उसे दिलासा देकर कहा, "डरो नहीं, मैं जमानिया का वह दारोगा नहीं हूँ जिसने तुम्हें कैद किया था बल्कि कोई दूसरा ही हूँ और मेरी यह सूरत बनावटी है. मैं इस समय तुम्हें दुश्मनों के फंदे से छुड़ा कर ले जा रहा हूँ."

सर्यू का डर कुछ कम हुआ मगर फिर भी उसे पूरा भरोसा न हुआ और उसने संदेह के साथ कहा, "मगर मैं कैसे जानूँ कि जो कुछ तुम कह रहे हो वह ठीक है ?"

यह सुन नकाबपोश ने कहा, "अफसोस है कि मुझे अभी कुछ देर तक इसी सूरत में रहना जरूरी है नहीं तो अपना चेहरा साफ कर दिखा देता, फिर भी अपना परिचय देने के लिये मैं एक शब्द कहता हूँ जिससे तुम जरूर मुझे पहिचान जाओगी."

इतना कह झुककर उसने सर्यू के कान में कुछ कहा जिसे सुनते ही वह चौंक पड़ी और ताज्जुब के साथ नकाबपोश की सूरत देखने लगी. नकली दारोगा ने कहा, "अगर अब भी तुम्हें विश्वास न हुआ हो तो कोई दूसरा परिचय दूँ !"

सर्यू : नहीं-नहीं, और किसी परिचय की आवश्यकता नहीं, मगर मैं बड़े ताज्जुब में हूँ कि इतने दिनों तक आप कहाँ थे और क्या करते रहे तथा इस समय यकायक कैसे यहाँ आ पहुँचे ?

नकली दारोगा : समय मुझे खींच लाया इसके सिवाय और क्या कह सकता हूँ. जब निश्चिती के साथ अपना पूरा हाल तुम्हें सुनाऊँगा तो तुम्हें मालूम हो जायेगा कि मुझको यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ी. इस समय जहाँ तक जल्दी हो सके मैं तुम्हें किसी निरापद स्थान में पहुँचा दिया चाहता हूँ क्योंकि समय बहुत थोड़ा है और दुश्मन का डर सब तरफ है.

इतना कह नकली दारोगा ने रथ के पर्दे पुनः गिरा दिये और तेजी के साथ रथ को हाँक दिया. थोड़ी ही देर बाद रथ अजायबघर की इमारत के पास जा पहुँचा. सीढ़ियों के पास लाकर दारोगा साहब ने रथ खड़ा किया और सर्यू से उतरने को कहा. इसके बाद वे खुद भी उतर पड़े और दोनों आदमी तेजी के साथ सीढ़ियाँ चढ़ अन्दर इमारत में चले गये.

इन दोनों के जाने के थोड़ी ही देर बाद एक नकाबपोश घोड़े पर चढ़ा हुआ उस जगह आ पहुँचा. अजायबघर के सामने एक रथ खड़ा देख उसे कुछ ताज्जुब

हुआ. वह रथ के पास आया और झाँककर देखने लगा मगर रथ पर न तो कोई बैठा ही था और न कोई सामान ही उस पर था. नकाबपोश कुछ देर तक उसी जगह खड़ा रहा, इसके बाद घूमकर दूसरी तरफ गया जहाँ उसका एक और साथी उसी तरह की पोशाक पहिने और नकाब से सूरत छिपाये घोड़े पर चढ़ा मौजूद था. इसने उससे कुछ बातें कीं और तब अपने घोड़े की लगाम उसके हाथ में दे घोड़े से उतर पैदल ही पुनः उधर को लौट गया जिधर वह रथ खड़ा था. एक गौर की निगाह उसने चारों तरफ डाली और तब फुर्ती से सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ अजायबघर के अन्दर चला गया.

इन तीनों को अन्दर गये घंटे भर से ऊपर हो गया मगर कोई बाहर न लौटा. अजायबघर के अंदर जाने वाले नकाबपोश का साथी वह दूसरा सवार खड़ा-खड़ा राह देखता हुआ घबरा गया. उसको गुमान था कि उसका साथी कुछ ही देर में अपना काम समाप्त करके लौट आवेगा, मगर ऐसा न होते देख उसे संदेह होने लगा कि वह किसी मुसीबत में तो नहीं फँस गया. वह थोड़ी देर तक और राह देखता रहा इसके बाद दोनों घोड़ों को पेड़ की झुरमुट में ले जाकर उनकी लगामें एक पेड़ की डाल के साथ अटका दीं और तब चारों तरफ की आहट लेता हुआ धीरे-धीरे अजायबघर की तरफ बढ़ा.

अभी वह फाटक से कुछ दूर ही होगा कि यकायक उसके कानों में किसी के चीखने की आवाज आई. यह आवाज इमारत के अंदर से आती मालूम होती थी और कमजोर और पतली होने के कारण गुमान होता था कि किसी औरत की है. आवाज सुन यह नकाबपोश उसी जगह ठिठक गया पर फिर कोई आहट न आई. तब वह पुनः आगे बढ़ा मगर पेड़ों की आड़ लेता हुआ और बहुत ही होशियारी के साथ. अभी वह इमारत के फाटक के पास नहीं पहुँचा था कि पुनः वैसी ही चीख की आवाज आई मगर इस बार की आवाज कहीं नजदीक ही से आई हुई मालूम होती थी तथा उसके साथ-साथ किसी मर्द के भी बोलने की आवाज मिली हुई थी.

इस आदमी का ताज्जुब और बढ़ गया और आखिर वह अपने को रोक न सका. अजायबघर के पास पहुँच सीढ़ियाँ चढ़ यह ऊपर पहुँचा और तब बगल की कोठरी से होता हुआ उस दालान में गया जो नहर के ऊपर बना हुआ था, मगर इसके आगे न जा सका क्योंकि दालान की दूसरी तरफ वाली कोठरी का दरवाजा

बन्द था. वह रुक गया और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये.

यकायक पुनः वैसी ही चीख की आवाज आई. गौर करने से मालूम हुआ कि यह किसी कोठरी में से नहीं आ रही है बल्कि इमारत के भीतरी हिस्से में से कहीं से आ रही है. चीख के साथ किसी मर्द की आवाज भी थी जो कह रहा था, "अब भी अगर अपनी जान की खैर चाहती हो तो सब हाल ठीक-ठीक कह दे नहीं तो याद रख मैं तेरी बोटी-बोटी काट कर फेंक दूंगा !"

इसके जवाब में औरत की हलकी आवाज आई, "हाय क्या बेमौत मारी जा रही हूँ ! मैं जानती ही क्या हूँ जो तू मेरी जान ले रहा है !" इस पर मर्द बोला, "मैं तुझ शैतान की बच्ची को बखूबी जानता हूँ, तू इस तरह नहीं मानेगी और न सीधे पूरा हाल ही बतावेगी ! अच्छा ले."

उस आदमी ने न-जाने क्या किया कि उस औरत ने दिल को दहला देने वाली एक चीख मारी, मगर यकायक उसी समय एक दूसरे आदमी की आवाज सुनाई पड़ी जो कह रहा था, "ठहर तो जा ऐ कम्बख्त, क्या गरीब औरतों की जान लेकर ही बहादुर बनना चाहता है ! आ पहिले मुझसे तो निपट ले."

इसके जवाब में उस पहिले मर्द ने कहा, "हाँ-हाँ, मैं तुझ कम्बख्त से भी समझने को तैयार हूँ ! तू ही तो सब आफतों की जड़ है !!" इसके साथ ही तलवारों की झनझनाहट सुनाई पड़ी और आहट से मालूम हुआ कि भीतर गहरी लड़ाई हो रही है.

यह दूसरा नकाबपोश बाहर के दालान में खड़ा बेचैनी के साथ सब कुछ सुन रहा था मगर न तो वह कुछ कर ही सकता था और न बहुत गौर करने पर भी यही जान सकता था कि इन दोनों आदमियों में से कोई इसका वह साथी भी है या नहीं. वह लाचारी के साथ उसी दालान में टहलने और आनेवाली आवाजों और आहटों पर गौर करने लगा तथा साथ ही साथ यह जानने के लिये एक निगाह बाहर की तरफ भी रक्खे रहा कि कोई गैर आदमी तो इधर नहीं आ रहा है.

लगभग पंद्रह मिनट तक तलवारों की झनझनाहट की आवाज आती रही और तब एक धम्माका सुनाई पड़ा जिसके बाद सन्नाटा हो गया. कुछ देर तक कोई आवाज न आई, इसके बाद ऐसा मालूम हुआ मानों कोई दरवाजा बड़े आहिस्ते से खोला गया है और कोई आदमी कहीं चल-फिर रहा है जिसके कुछ

बोलने की आवाज भी कभी-कभी आ जाती थी. थोड़ी देर बाद पुनः उस दरवाजे के बन्द होने की आहट आई और तब सन्नाटा हो गया.

वह नकाबपोश देर तक खड़ा रहा मगर फिर किसी तरह की आवाज न आई. लाचार वह वहाँ से हटा और बाहर की तरफ लौटने के खयाल से पलटा, मगर उसी समय बगलवाली कोठरी के अन्दर से जिसका दरवाजा उसने पहिले बन्द पाया था, कुछ आवाज आई. इसका विचार हुआ कि रुककर सुने मगर आहट से मालूम हुआ कि कोई दरवाजा खोलने की कोशिश कर रहा है. यह दरवाजा खोलने वाला न-जाने कौन है, उसका दोस्त है या दुश्मन, और अकेला है या कई आदमी हैं, यह सब सोच उसने वहाँ रुकना मुनासिब न समझा और तेजी के साथ उस कोठरी की तरफ बढ़ा जिसमें से होकर सदर फाटक में आने का रास्ता था मगर इसी बीच में वह दरवाजा खुल गया और उसमें से खून से लथपथ तथा एक टूटी हुई तलवार हाथ में लिये कोई आदमी बाहर निकला. दरवाजे की आड़ में से इस दूसरे नकाबपोश ने जरा-सा घूमकर देखा तो अपने पहिले साथी को ही इस हालत में निकलते पा उसके ताज्जुब का ठिकाना न रहा. वह पलट पड़ा और उसके पास जाकर बोला, "हैं, यह आपकी क्या हालत हो गई ? क्या वह लड़ाई आपही से हो रही थी जिसकी आहट मैं यहाँ खड़ा-खड़ा सुन रहा था ?"

जवाब में उस नकाबपोश ने कहा, "इस जगह रुकने या बात करने का बिल्कुल मौका नहीं है. मैं बहुत जख्मी हो गया हूँ और साथ ही बहुत खतरे में हूँ. मुझे सहारा दो और फुर्ती से इस जगह के बाहर निकल चलो नहीं तो दोनों की जान जायेगी." यह सुन इसने फिर और कुछ न पूछा और सहारा देता हुआ उसे अजायबघर के बाहर निकाल ले गया.

इन दोनों को उम्मीद थी कि फाटक पर वह रथ खड़ा पाएँगे पर ऐसा न था, वह रथ गायब हो गया था. न-जाने कब कौन उसे लेकर चल दिया था. ताज्जुब करते हुए दोनों सीढ़ियाँ उतरे और उस तरफ चले जिधर इनके घोड़े बंधे थे.

दूसरे नकाबपोश ने कहा, "आप घोड़े पर सवार हो सकेंगे ?" जवाब में इसने कहा, "हाँ, अगर सहारा देकर चढ़ा दोगे तो गिरूँगा नहीं."

दोनों अपने-अपने घोड़ों पर सवार हो गये और तेजी के साथ जमानिया की तरफ बढ़े.

5

दोपहर का समय है, चारों ओर टनटनाती हुई धूप पड़ रही है, पर उस छोटे-से बागीचे में उसकी तकलीफ कुछ भी मालूम नहीं होती जिसमें हम अपने पाठकों को ले चलते हैं.

एक आम के पेड़ के नीचे प्रभाकरसिंह बैठे हुए हैं उनकी सूरत से परेशानी और बदहवासी टपक रही है और आकृति से मालूम होता है मानों वे बहुत थके हुए हैं या कहीं बहुत दूर का सफर करते हुए आ रहे हैं. रह-रह कर वे ठंडी साँसें लेते हुए अपने चारों तरफ देखते हैं और तब दुपट्टे से हवा करके उस पसीने को दूर करना चाहते हैं जो उनके चेहरे पर आया हुआ है क्योंकि इस समय हवा एकदम बन्द है.

आखिर कुछ देर बाद उनकी थकावट कम हुई और वे मन ही मन बोले, "ओफ, कैसी मुसीबत में फँस गया था. जरा-सी भूल भी तिलिस्म में कैसा गजब ढा देती है. घंटों बदहवास रहा, कोसों की धूल छाननी पड़ी, और मालती से भी हाथ धोया. न-मालूम वह बेचारी इस समय कहाँ है या क्या कर रही है? इसमें शक नहीं कि इस तरह यकायक मेरे गायब हो जाने से वह बेतरह घबड़ाई होगी और परेशानी में पड़ के न-जाने क्या कर बैठे. कहीं मेरी तरह वह भी कोई गलती कर गई तो बुरी मुसीबत में पड़ेगी. जैसे हो तुरन्त उसके पास पहुँचना चाहिए. बारे तिलिस्मी किताब मेरे पास मौजूद है नहीं तो और भी आफत आती, अब देखना चाहिये यह कौन-सी जगह है और यहाँ से निकलने की क्या तदबीर हो सकती है."

प्रभाकरसिंह ने अपने कपड़े टटोल कर तिलिस्मी किताब निकाली और उसे खोल कर एक जगह पढ़ने लगे. बारीक़ अक्षरों में यह लिखा हुआ था—

"जब इस बात को तीन पहर बीत जाँय तो तुम पुनः उस कोठरी में जाओ, मगर खबरदार, तीन पहर के पहिले कदापि उधर जाने का नाम भी न लेना नहीं तो बहुत बड़ी मुसीबत में पड़ोगे······."

यह पढ़ मन ही मन प्रभाकरसिंह बोले, "सो तो देख लिया, अब यह देखना चाहिए कि उस मुसीबत से छूटने का भी कोई उपाय है या नहीं?" वे आगे पढ़ने लगे, यह लिखा था—

"तीन पहर के बाद जब उस कोठरी में जाओगे तो देखोगे कि कोठरी में धूआँ बिल्कुल नहीं है और वह शेर की मूरत जमीन पर गिरी हुई है. शेर के चारों तरफ एक तरह की बारीक-बारीक काली धूल पड़ी होगी, उसे उठा लेना और रख छोड़ना, आगे उसकी जरूरत पड़ेगी. धूल हटने पर जमीन पर चारों तरफ बारीक-बारीक लकीरें बनी हुई दिखाई देंगी. उन लकीरों से जहाँ एक अष्टकोण यंत्र बना हुआ देखो उस जगह को अपने अँगूठे से जोर से दबाना. एक छोटा-सा गड्हा बन जायेगा. उसमें तिलिस्मी हथियार की नोक डालते ही आगे जाने के लिये रास्ता निकल आवेगा. यह रास्ता तुम्हें एक बगीचे में पहुँचावेगा जहाँ से उस रत्न-मण्डप में जाने का रास्ता मिलेगा जिसका हाल पहिले लिख चुके हैं. वहाँ ही कहीं तुम्हें वह मूर्ति मिलेगी. जिस तरह से हो उसे खोजना और मिल जाने पर वही काली धूल जो पहिली कोठरी में मिली है पानी में सान कर उस पर लेप कर देना. दो घण्टे बाद एक आवाज होगी, मूर्ति गायब हो जायगी और उसकी जगह एक रास्ता दिखाई पड़ेगा जो तुम्हें घूमने वाली बारहदरी में पहुँचावेगा."

प्रभाकरसिंह ने किताब पढ़ना बन्द कर के व्यग्रता के साथ कहा, "यह सब तो ठीक है मगर इस समय जहाँ मैं हूँ वहाँ का तो कुछ हाल इस में हई नहीं है, जाने किस जगह आ गया हूँ कि यहाँ से बाहर निकलने की कोई तर्कीब ही नहीं दिखाई देती. जब तक यहाँ से न निकलूँगा आगे की कार्रवाई कैसे करूँगा ? खैर एक दफे घूम-फिर कर देखूं शायद कोई रास्ता बाहर जाने का दिख जाय."

प्रभाकरसिंह ने किताब बन्द कर जेब में रक्खा और उठकर बागीचे में चारों तरफ चक्कर लगाने लगे. इमारत के किस्म की उस बाग में कोई चीज न थी, केवल घने और ऊँचे-ऊँचे पेड़ों से वह छोटा बाग भरा हुआ था जिसके चारों तरफ ऊँची-ऊंची चारदीवारी थी. प्रभाकरसिंह उसी चारदीवारी के साथ-साथ घूमने लगे. छोटे से बाग का चक्कर लगाने में देर ही कितनी लगती थी ? देखते-देखते चारों तरफ घूम-फिर कर जहाँ के तहाँ पहुँच गये और काम कुछ भी न निकला, न तो कहीं कोई खिड़की, दरवाजा या रास्ता बाग के बाहर होने का दिखाई पड़ा और न कहीं कोई ऐसी जगह ही दिखाई दी जहाँ किसी तरह पर यह शक किया जा सकता कि यहाँ पर कोई गुप्त दरवाजा या राह होगी. बेचैनी के साथ फिर एक जगह खड़े हो गये और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए. आखिर अपने सामने एक ऊँचे इमली के पेड़ को देख कर उन्हें खयाल हुआ कि इसके ऊपर च

कर देखना चाहिए, शायद कहीं कुछ दिखाई पड़ जाय. बिना कुछ विलम्ब किये वे उस दरख्त के पास पहुँचे और उस पर चढ़ने का उद्योग करने लगे. जमीन से लगभग चार हाथ की ऊंचाई पर एक मोटी सूखी हुई डाली दिखाई पड़ी जो दूर तक एक तरफ को चली गई थी. उसे दोनों हाथों से मजबूत पकड़ा और झटका देकर ऊपर चढ़ गये.

ताज्जुब की बात थी कि प्रभाकरसिंह का बोझ उस पर पड़ते ही वह डाल इस तरह नीचे को झुकने लगी मानों वह कोई लचीली टहनी हो. देखते-देखते उसका अगला सिरा जमीन के साथ आकर सट गया. उसी समय एक तरह की आवाज हुई और साथ ही पेड़ की जड़ के पास एक ऐसा रास्ता दिखाई पड़ने लगा जिसके अन्दर आदमी बखूबी जा सकता था. प्रभाकरसिंह यह देखते ही प्रसन्न होकर बोल उठे, "वारे कोई रास्ता दिखाई तो पड़ा ! मुमकिन है कि इस बाग के बाहर होने की यही राह हो !" वे खुशी-खुशी उस डाल पर से कूद पड़े और उस दरवाजे की तरफ बढ़े मगर उनकी खुशी थोड़ी देर की ही थी. प्रभाकरसिंह का बोझ हटते ही वह डाल फिर धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठने लगी, यहाँ तक कि जैसे ही प्रभाकरसिंह उस दरवाजे के पास तक पहुँचे वैसे ही वह अपने ठिकाने पहुँच गई और उसी समय एक आवाज के साथ वह रास्ता भी गायब हो गया. पुनः पहिले की तरह उस पेड़ के चारों तरफ की जमीन बराबर नजर आने लगी.

प्रभाकरसिंह ने ताज्जुब में आकर कहा, "मालूम होता है यह डाल जब तक झुकी रहेगी तभी तक यह दरवाजा भी खुला रहेगा. अच्छा फिर से तो देखूं." पहिले की तरह उन्होंने फिर उस डाल को पकड़ा, मगर इस बार चढ़े नहीं सिर्फ अपना पूरा बोझ उस पर डाल कर लटक गये. डाल फिर नीचे को झुक गई और साथ ही पेड़ की जड़ में फिर पहिले की तरह वही दरवाजा दिखाई देने लगा. मगर पहिले ही की तरह इस बार भी जैसे ही डाल छोड़ प्रभाकरसिंह जमीन पर आए वैसे ही डाल ऊँची होने लगी और जब तक उस दरवाजे के पास पहुँचे तब तक दरवाजा भी पुनः गायब हो गया.

"जब तक डाल झुकी न रहेगी कोई काम न होगा" कह कर प्रभाकरसिंह वहाँ से हटे और इधर-उधर घूम कर थोड़ी ही देर में कई छोटे बड़े पत्थरों के ढोंके उठा लाये जिनकी वहाँ कमी न थी. एक तरह की जंगली लता से जो वहीं पेड़ों पर चढ़ी उन्हें मिल गई उन्होंने इन पत्थरों को एक में बांधा और तब डाल

पर अपना बोझा डाल उसे नीचा किया. इस डाल के साथ उन्होंने उन पत्थरों को बाँधा और तब उसे छौड़ अलग हो गए. डाल ऊपर तो उठी मगर थोड़ी ही उठ कर रह गई क्योंकि उन पत्थरों ने उसे उठने न दिया. वह दरवाजा भी खुला रह गया. अब प्रसन्नचित्त प्रभाकरसिंह उस दरवाजे के पास पहुँचे और उसमें झाँक कर देखने लगे. पाँच-छ: डण्डा सीढ़ियाँ नीचे को गई दिखाई दीं जिनके अंत में पत्थर का पक्का फर्श दिखाई पड़ रहा था. भीतर बहुत अंधकार भी न था और थोड़ी-थोड़ी हवा भी आ रही थी जिससे विश्वास होता था कि जरूर यहाँ से किसी तरफ निकल जाने का रास्ता है. आखिर कुछ सोच-विचार के बाद प्रभाकरसिंह ने इसमें उतरने का निश्चय किया. अपना सामान टटोला, तिलिस्मी किताब सम्हाली, तिलिस्मी डण्डा हाथ में लिया, और तब सीढ़ी पर पैर रक्खा.

एक-एक करके वे सब सीढ़ियाँ उतर गए. उन्हें डर था कि शायद किसी खतरे से उनकी मुलाकात हो पर ऐसा कुछ न हुआ. नीचे पहुँच उन्होंने एक लम्बी-चौड़ी जगह में अपने को पाया जहाँ से कई सुरंगें कई ओर को गई हुई थीं. इन सुरंगों में किसी तरह के दरवाजे लगे हुए न थे और प्राय: सभी के दूसरे सिरों पर चाँदना दिखाई पड़ता था. प्रभाकरसिंह एक-एक करके सब सुरंगों के सामने से घूम आये और सोच-विचार कर एक के अन्दर उन्होंने पैर रक्खा. बहुत जल्दी उन्होंने उसे पार किया और तब एक लम्बे-चौड़े बाग में अपने को पाया जिसमें चारों तरफ तरह-तरह की इमारतें बनी हुई थीं. मगर यहाँ पहुँचते ही उनके मुँह से ताज्जुब के साथ निकल गया, "हैं, यह तो वही जगह है जहाँ तक तिलिस्म तोड़ते हुए हम दोनों पहुँच चुके थे और जहाँ एक बहुत मामूली-सी गलती कर जाने से मुझे इतने तरद्दुद में पड़ना पड़ा."

हमारे पाठक भी इस बाग को भूले न होंगे, यह वही बाग है जहाँ दारोगा और जैपाल का पीछा करती हुई कला पहुँची थी और शेरों वाले कमरे में पहुँच कर तिलिस्म में फँस गई थी अथवा जिसका हाल हम चौदहवें भाग के छठवें बयान में लिख आये हैं. इस समय वह शेरों वाली बारहदरी प्रभाकरसिंह के ठीक सामने की तरफ थी तथा वह ऊँचा बुर्ज बाईं तरफ दिखाई पड़ रहा था जिसकी राह दारोगा और जैपाल इस जगह के बाहर हुए थे[1].

---

1. देखिए भूतनाथ दसवाँ भाग, सातवाँ बयान.

इस जगह पहुँच प्रभाकरसिंह ने सन्तोष के साथ कहा, "बारे किसी तरह ठिकाने तो पहुँचे ! अब देखना चाहिए मालती से मुलाकात होती है या नहीं !" वे सीधे बीच वाले बड़े कमरे की तरफ बढ़े जिसे हम शेरों वाले कमरे के नाम से पुकारते आये हैं मगर अभी कमरे के पास नहीं पहुँचे थे कि बगल से आवाज आई —"ठहरिये !" प्रभाकरसिंह चौंक कर रुक गये और उधर देखते ही मालती पर निगाह पड़ी जो बदहवास और घबराई हुई आकर यह कहती हुई इनके पैरों पर गिर पड़ी, "नाथ, आप कहाँ चले गये थे !"

प्रभाकरसिंह ने मालती को उठाया और दम-दिलासा देते हुए कहा, "कहीं भी नहीं, बस एक तिलिस्मी चक्कर में पड़ गया था ! कहीं तुम्हें तो कोई तकलीफ नहीं हुई ?"

मालती : शारीरिक कष्ट तो कोई भी नहीं हुआ मगर मानसिक चिन्ता के मारे सुबह से व्याकुल घूम रही हूँ. तरह-तरह के खयाल मन में दौड़ते थे कि न-जाने आप कहाँ चले गए या किस मुसीबत में पड़ गये. इस बाग का कोना-कोना छान डाला, एक-एक कोठरी और एक-एक पेड़ के नीचे देख डाला, मगर आपका पता नहीं. आप आखिर चले कहाँ गए थे और यह आपकी हालत क्या है ? मालूम होता है मानों कोसों का चक्कर मारते हुए आ रहे हैं. मुँह एकदम सूख गया है, पैरों पर गर्द पड़ी हुई है, क्या कहीं दूर से आ रहे हैं ?

प्रभा० : बस कुछ पूछो मत कि कहाँ से आ रहा हूँ. ऐसी मुसीबत में पड़ा कि जी ही जानता है. कुछ सुस्ता लूँ तो तुम्हें सुनाऊँ.

मालती : बहुत अच्छी बात है, उस तरफ नहर के किनारे चलिये, हाथ-मुँह धोइये, और कुछ फल जो मैंने तोड़े हैं खाकर सुस्ताइये.

मालती प्रभाकरसिंह को लेकर नाले के किनारे आई जहाँ उन्होंने अपना हाथ-मुँह धोया और कुछ जल पीकर फल खाया. इसके बाद वे अपना हाल इस तरह सुनाने लगे :—

'तुम्हें याद होगा कि तिलिस्मी किताब में यह लिखा हुआ था कि उत्तर की सात नम्बर वाली कोठरी में घुसो. उसमें सिंहासन पर बैठे हुए शेर की मूरत बनी है. कोठरी के बीचोबीच में कत्थई रंग का जो पत्थर जड़ा है उसे उखाड़ कर जल्दी से कोठरी के बाहर ले आओ क्योंकि इस कोठरी में एक घड़ी से ज्यादा रहने वाले की जान बचना कठिन है."

मालती : ठीक है, मुझे बखूबी याद है. हम लोगों को वह पत्थर उखाड़ने में शायद देर हो गई थी क्योंकि उस बनावटी शेर ने गुर्राना शुरू किया था परन्तु उसी समय हम लोग वह पत्थर उखाड़ कर बाहर निकल आये. इसके बाद तिलिस्मी किताब में बताई तरकीब से उस पत्थर को घिस कर आधी रात के समय उसका लेप शेर के बदन पर करके हम लोग शेरों वाले कमरे के बाहर निकल आये थे और रात एक दालान में काटी, पर वहीं नींद खुलने पर मैंने आपको गायब पाया.

प्रभाकर : ठीक है, अब मैं तुम्हें सुनाता हूँ कि मैं कहाँ गायब हो गया था. किसी तरह की आवाज सुन मेरी नींद बहुत सुबह ही खुल गई. तुम उस समय गहरी नींद में पड़ी हुई थीं इसलिए मैंने तुम्हें नहीं जगाया मगर उठकर गौर करने लगा कि यह आवाज किधर से आ रही है. शेरों वाले कमरे में से उस आवाज के आने का सन्देह मुझे हुआ और मैं उसी तरफ चला. जब मैं उसके पास पहुँचा तो देखा क्या कि बीच वाले सिंहासन के चारों तरफ वाले शेर अपनी जगह से उठ खड़े हुए हैं और गुर्राहट की आवाज करते हुए उस सिंहासन के चारों तरफ घूम रहे हैं. यद्यपि मैं बखूबी जानता था कि ये असली नहीं हैं फिर भी उस समय की उनकी भावभंगी और चाल-ढाल बिलकुल ऐसी थी कि उन्हें असली मान लेने का मन करता था. मैं उनकी इस कार्रवाई को कौतूहल और कुछ डर के साथ देख रहा था कि यकायक उसी कोठरी के अन्दर से जिसके भीतर से हम लोगों ने पत्थर उखाड़ा था कुछ आवाज आने लगी. इसी समय उन भीतर वाले शेरों की गुर्राहट को सुन इन बाहर वाले शेरों ने भी अजीब ढंग से गुर्राना और सिर हिलाना शुरू किया, साथ ही धीरे-धीरे वे उस कोठरी के दरवाजे की तरफ भी बढ़ने लगे. मैं इस कार्रवाई को देख इतना विस्मित हुआ कि कुछ ख्याल न रहा और कमरे के अन्दर घुस कर देखना चाहा कि अब क्या होता है. मेरा कमरे में घुसना था कि उन शेरों ने अपना रुख पलटा और बड़े गुस्से से मेरी तरफ झपटे मैंने कमरे के बाहर निकलना चाहा मगर ऐसा मालूम होने लगा मानों मेरे पाँव जमीन ने पकड़ लिये हों. मैं नहीं कह सकता कि इसका क्या सबब था, शायद वहाँ की जमीन की यह तासीर हो कि मैं कोशिश करके भी अपने पाँव उठा न सकता था. इसके बाद ही उन चारों शेरों ने मुझ पर हमला किया और उनके सिरों पर बैठे हुए उकाब भी पंख फटफटा कर बड़े भयानक रूप से मुझ पर झपटे. इसके साथ ही मेरे पैरों में

एक तरह की झुनझुनी-सी चढ़ने लगी, मैं बेहोश हो गया, और कुछ ही क्षण बाद मुझे तनोबदन की सुध न रही. मैं नहीं कह सकता कि इसके बाद क्या हुआ अथवा किस रास्ते मैं वहाँ पहुँचा पर होश आने पर मैंने अपने को एक वीरान मैदान में पाया जिसके छोर का कुछ पता न लगता था. घण्टों तक इधर से उधर खाक छानता रहा. धूप के मारे तबीयत परेशान हो गई, प्यास के सबब गला चटकने लगा. आखिर घण्टों टक्कर मारने के बाद एक छोटे बगीचे की दीवार नजर आई. किसी तरह उसके अन्दर पहुँचा और वहीं से अब यहाँ आ रहा हूँ. इतनी परेशानी और तकलीफ उठाई कि महीनों याद रहेगी.

मालती : (अफसोस के साथ) यह तिलिस्म का मुकाम है जहाँ जरा-सी चूक बहुत बड़ा नुकसान पहुँचा सकती है. तिलिस्मी किताब में साफ लिखा था कि शेर के बदन पर लेप लगाने के बाद तीन पहर तक उस तरफ जाने का नाम भी न लेना. खैर किसी तरह आप सही-सलामत पहुँच तो गए ! मुझे तो आपके विषय में इतनी गहरी चिन्ता हो गई थी कि जिसका नाम नहीं ! अब उठिये और जहाँ तक जल्दी हो जरूरी कामों से निश्चिन्त होइए क्योंकि तिलिस्म तोड़ने के काम में शीघ्र ही लग जाना उचित है.

दो घण्टे के अन्दर ही सब कामों से फारिग होकर प्रभाकरसिंह मालती को लिए उसी शेरों वाले कमरे में जा पहुँचे. पहिले बाहर वाले दालान में खड़े होकर भीतर झांका. देखा कि सब शेर अपनी-अपनी जगह पर ज्यों-के-त्यों बैठे हैं. प्रभाकरसिंह ने मालती से कहा, "इस वक्त इनको देख कर यह गुमान करना भी कठिन है कि रात को ये ही ऐसे सजीव हो गये थे कि देखने में डर मालूम होता था." और तब कमरे के अन्दर पैर रक्खा.

हम ऊपर लिख आये हैं कि इस बड़े कमरे के एक तरफ तो खुला दालान था जिसकी राह बगीचे से इस कमरे में आने का रास्ता था और बाकी तीनों तरफ दस-दस कोठरियाँ बनी हुई थीं और बड़े कमरे से बाहर के दालान में जाने के लिए भी दस दरवाजे एक ही रंग-ढंग के बने हुए थे. इन दोनों के कमरे के अन्दर घुसते ही इस कमरे के दालान की तरफ पड़ने वाले दसों दरवाजे धड़ाधड़ बन्द हो गए मगर दोनों ने उस पर कुछ भी ध्यान न दिया और सीधे उत्तर तरफ की एक कोठरी के पास पहुँचे जिसके दरवाजे के ऊपर सात का अंक बना हुआ था. यह दरवाजा इस समय बन्द था मगर हाथ से धक्का देते ही खुल गया और दोनों

बेधड़क कोठरी के भीतर घुस गये. यहाँ पर हम यह भी बता देना चाहते हैं कि यह वही कोठरी थी जिसके अन्दर पहुँच कर दयाराम, जमना और सरस्वती तिलिस्म में फँस गये थे[1] परन्तु इस समय इस कोठरी की हालत कुछ विचित्र ही हो रही थी. जमीन पर चारों तरफ एक तरह की काली धूल फैली हुई थी और दीवारें भी इस तरह काली हो रही थीं मानों बहुत दिनों से धूआँ खा रही हों. उस शेर की मूरत टूटी-फूटी जमीन पर पड़ी हुई थी और साथ ही छोटी हो गई सी भी जान पड़ती थी मानों उसका काफी अंश जल या झड़ गया हो. एक अजीब गन्ध उस कोठरी में फैली हुई थी जो कुछ-कुछ धूप या लोहवान की तरह थी.

प्रभाकरसिंह और मालती ने उस शेर की मूरत के टुकड़ों को उठा एक किनारे कर दिया और तब वहाँ जमीन पर फैली हुई वह काली धूल इकट्ठा करके एक कपड़े में बाँध ली. इसके बाद बड़े गौर से दोनों उस अष्टकोण यन्त्र को खोजने लगे जिसके बारे में तिलिस्मी किताब में लिखा हुआ था. कोठरी की जमीन चारों तरफ पतली बारीक लकीरों से भरी हुई थी जिसके बीच में से उस अष्टकोण यन्त्र को खोज निकालना बहुत सहज काम न था विशेष कर इसलिए कि बाहर वाले कमरे के दालान की तरफ पड़ने वाले सब दरवाजे बन्द हो गए थे और वहाँ सिर्फ उन कई रोशनदानों की रोशनी रह गई थी जो छत के पास दीवार में बने हुए थे, फिर भी आखिर खोजते-खोजते एक कोने के पास मालती को वह अष्टकोण यन्त्र मिल ही गया और उसने प्रभाकरसिंह को दिखाया. प्रभाकरसिंह ने उसे अंगूठे से दबाया, एक छोटा-सा गड्ढा वहाँ हो गया जिसमें किताब में बताई तरकीब के अनुसार प्रभाकरसिंह ने अपने तिलिस्मी डण्डे की नोक डाल दी. साथ ही एक खटके की आवाज आई और बगल की दीवार में एक रास्ता बन गया. आगे-आगे प्रभाकरसिंह और पीछे-पीछे मालती इस रास्ते पर चल पड़े जो एक लम्बी सुरंग की तरह का था.

लगभग पाँच सौ कदम जाने के बाद वह सुरंग बाईं तरफ को घूमी और तब अचानक बन्द हो गई. आगे जाने का रास्ता न था, सामने की तरफ भी वैसी ही चिकनी दीवार मालूम पड़ती थी जैसी दोनों तरफ अब तक मिलती आई थी, ताज्जुब करते हुए दोनों रुक गये क्योंकि तिलिस्मी किताब के कथनानुसार इस सुरंग

---

1. देखिए भूतनाथ चौदहवाँ भाग, छठवाँ बयान.

की राह उन्हें एक बगीचे में पहुँचना चाहिए था जहाँ से वे रत्न-मण्डप तक पहुँचते. थोड़ी देर तक दोनों गौर करते रहे इसके बाद मालती ने कहा, "मालूम होता है आगे जाने के लिए हम लोगों को अपने उद्योग से कोई रास्ता पैदा करना पड़ेगा."

प्रभाकर० : बेशक ऐसा ही है और मैं समझता हूँ कि शायद इसीलिए यह मूरत यहाँ बनी हुई है.

दीवार के बीचोबीच एक आला था जिस पर किसी धातु की बनी हुई लगभग हाथ भर लम्बी एक स्त्री की मूरत रक्खी हुई थी. मूरत का भाव यह था कि उसके कन्धे पर एक गगरी थी जिसे वह एक हाथ से पकड़े हुए थी और दूसरे हाथ से अपने पैर में लिपटी हुई एक लता को अलग कर रही थी. प्रभाकरसिंह के कहने से मालती का ध्यान भी इस मूरत पर गया और दोनों ही गौर से उसे इस नीयत से देखने जाँचने और ठोकने-पीटने लगे कि शायद उसके जरिए आगे कोई रास्ता पैदा हो सके.

प्रभाकरसिंह उस मूरत की जाँच देर तक करते रहे मगर दबाने-उठाने-ऐंठने-झुकाने आदि का कुछ भी असर उस पर होता हुआ न देख कुछ निराश से हो चले. उस समय मालती ने कहा, "ठहरिये मुझे एक बात का ख्याल आता है, जरा मैं देखूं."

प्रभाकरसिंह एक बगल हो गए और मालती उस मूरत के पास गई. उसने एक बार गौर से मूरत के पैर में लिपटी हुई लता को देखा और तब कहा, "यह औरत अपने पैरों में लिपटी यह लता दूर कर रही है और अन्दाज से मालूम होता है कि यह लता मूरत के अंग का हिस्सा अर्थात् इसके साथ ही खोद कर नहीं बनी है बल्कि अलग से पैर में लिपटी हुई है. देखना चाहिए कि कोशिश करने से यह पैर से अलग होती है या नहीं और अलग होती है तो इसका क्या असर पड़ता है."

मालती ने इतना कह लता का एक सिरा पकड़ कर जोर से खींचा. वह पैर से अलग होने लगी. दो-तीन बार घुमाने और खींचने से वह बल खाकर पैर से अलग हो गई, इसके साथ ही खटके की आवाज हुई और एक तरफ एक दरवाजा दिखाई पड़ने लगा जिसके दूसरी तरफ चाँदना नजर आ रहा था. खुशी-खुशी प्रभाकरसिंह और मालती ने इस दरवाजे के अन्दर पैर रक्खा और अपने को एक खुशनुमा बाग में पाया. इनके सुरंग के बाहर होते ही वह दरवाजा आप से आप पुनः बन्द हो गया.

यह सुन्दर बाग एक छोटी नहर की बदौलत जो एक तरफ से आकर घूमती-फिरती दूसरी तरफ से बाहर हो गई थी खूब हरा-भरा बना हुआ था. बाग के बीचोबीच पतली-पतली चकाबू की तरह पेंच खाई हुई रविशें बनी हुई थीं जिन पर काला और सुफेद पत्थर खूबसूरती के साथ जड़ा हुआ था और बीचोबीच के फौवारे की शोभा तो खूब ही बढ़ी-चढ़ी थी जो इन रविशों के बीच संगमर्मर का बना हुआ था और जिसकी बारीक टोटियों से निकला हुआ पानी बहुत ऊपर जाकर इस तरह फैल जाता था कि उस पर पड़ने वाली सूर्य की किरणें उसे इन्द्र-धनुष के रंग से रंग कर विचित्र शोभा पैदा कर रही थीं. इन रविशों के बाद चारों तरफ कुछ सड़क छोड़ कर मेंहदी की बहुत घनी टट्टी लगी हुई थी जिसके दूसरी तरफ क्या था यह साफ जान नहीं पड़ता था, मगर इसके काफी पीछे हट कर तरह-तरह की इमारतों का ऊपरी हिस्सा जरूर दिखाई पड़ रहा था जिससे गुमान होता था कि इस बाग में इमारतें बहुतायत से हैं. प्रभाकरसिंह को यह जगह कुछ ऐसी भाई कि वे तिलिस्म का काम थोड़ी देर के लिए भूल गए और रविशों पर टहलते हुए उस फौवारे के पास जा पहुँचे. मालती भी उनके पीछे वहीं पहुँची.

प्रभाकर : यह छोटा सा नजरबाग बहुत ही खूबसूरत मालूम पड़ता है.

मालती : सफाई देखिये कैसी है, मालूम होता है कोई अभी झाड़ू देकर गया है !

प्रभाकर० : ऐसा जान पड़ता है मानो इसमें कई माली हों जो बराबर काम किया करते हों. यह देखो मेंहदी की टट्टी किस सफाई से काटी गई है कि हरी दीवार का धोखा होता है. यह बिना माली के नहीं हो सकता, मेंहदी अगर अपनी हालत पर छोड़ दी जाय तो जल्द ही बेकाबू होकर खराब मालूम होने लगती है.

मालती : मगर तिलिस्म के अन्दर आदमी कहाँ से आ सकते हैं ?

प्रभाकर० : यह ताज्जुब मुझे भी है. मगर देखो तो वह क्या चीज है !

मालती : कहाँ ?

प्रभाकर० : वह मेंहदी की टट्टी के पास, लतामण्डप के बगल में ! अब गायब हो गई, वह देखो फिर दिखाई पड़ी !

मालती : (देख कर और डर कर) हाँ ठीक है, मैं पहिचान गई, यह उस तिलिस्मी शैतान की पीठ है. जिस समय उस बाग में आप उससे लड़ रहे थे तो मैंने उसकी पीठ को गौर से देखा था. तिलिस्मी शैतान के सामने का भाग तो

हड्डियों के ढाँचे की तरह है पर पीठ वाला भाग दूर से देखने से ऐसा ही जान पड़ता है. मगर मालूम होता है अभी तक उसे हम लोगों के आने की खबर नहीं लगी है ! हम लोगों को कहीं छिपकर अपनी जान बचानी चाहिए, अगर वह कम्बख्त हमें देख लेगा तो फिर हमारी सब उम्मीदों का खात्मा ही समझिए.

मौका समझ प्रभाकरसिंह ने भी यही मुनासिब समझा कि अपने को तिलिस्मी शैतान की निगाहों से बचावें. फौवारे से कुछ दूर हट कर चारों कोनों पर चार लतामण्डप बने हुए थे जिनमें से एक के पास वह तिलिस्मी शैतान भी खड़ा था. प्रभाकरसिंह मालती के साथ दबे पाँव हट कर अपने पीछे वाले लतामण्डप की आड़ में हो गये और पत्तियों की ओट से देखने लगे कि वह शैतान क्या कर रहा है. थोड़ी ही देर में मालूम हो गया कि वह इस समय माली का काम कर रहा है अर्थात् उस मेंहदी की टट्टी को काट-छाँट कर दुरुस्त कर रहा है. मालती ने धीरे से कहा, "मालूम होता है कि यह बाग ही इन शैतानों के रहने की जगह है और इन्हीं की बदौलत यह इतना साफ बना रहता है."

प्रभा० : शायद ऐसा ही हो लेकिन तब इस हालत में जहाँ तक जल्दी हो हम लोगों को उस मूर्ति का पता लगा लेना चाहिए जिसका हाल तिलिस्मी किताब में लिखा है और उस काली धूल का उस पर लेप चढ़ा रास्ता पैदा कर तुरंत इस बाग के बाहर भी हो जाना चाहिए.

मालती : बेशक, मगर मुझे डर है कि यह शैतान इस काम में बाधा देगा, दूसरे इसकी मौजूदगी में हम लोग किस तरह बेखबर घूम-फिर कर उस मूर्ति का पता ही लगा सकते हैं !

प्रभा० : यही तरद्दुद मुझे भी है, मगर जो भी हो वह काम तो करना ही होगा.

मालती : मगर देखिए तो, वह उस दरवाजे से निकल कर एक दूसरा शैतान आ रहा है, और उसके पीछे-पीछे और भी दो दिखाई देते हैं ! मालूम होता है जिन चार शैतानों को हम लोगों ने उस पहिले दिन एक बाग में देखा था वे यहीं रहते हैं.

प्रभा० : शायद ऐसा ही हो लेकिन अगर ऐसा है तो हम लोगों का काम बहुत ही कठिन हो जाएगा !

मालती : (चौंक और डर कर) लीजिए वे लोग तो इधर ही आ रहे हैं. अब

क्या होगा !

प्रभाकरसिंह ने देखा कि एक-एक करके और तीन शैतान मेंहदी की टट्टी में बनी एक राह से इसी ओर आ गए और तब उस तरफ बढ़े जिधर लतामण्डप के पीछे ये दोनों छिपे खड़े थे. बात की बात में चारों उस जगह के पास पहुँच गये बल्कि उस लतामण्डप के दरवाजे पर खड़े होकर कुछ बातें करने लगे जिसकी आड़ में दोनों खड़े थे. मालती का बदन तो इस तरह काँप रहा था मानो उसे जूड़ी आ गई हो और प्रभाकरसिंह भी मन ही मन सोच रहे थे कि एक शैतान से लड़ कर मैं जक उठा चुका हूँ, अब इन चार से किसी तरह जान बचाना सम्भव नहीं, परन्तु फिर भी हिम्मत के साथ उन्होंने अपने होश-हवास पर काबू किया और गौर से उन चारों की बातें सुनने लगे.

एक शैतान : क्या तुम्हें ठीक खबर लगी है कि तिलिस्म तोड़ने वाला यहाँ आ पहुँचा है ?

दूसरा : हाँ, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है.

तीसरा : तब हम लोगों को क्या करना चाहिए ?

चौथा : करना क्या चाहिए. जैसे हो उसका पता लगाना और गिरफ्तार कर लेना चाहिए. अगर ऐसा न किया जायगा तो वह जरूर इस तिलिस्म को तोड़ डालेगा और हम लोग बेमौत मारे जायेंगे.

तीसरा : उसको पकड़ने की क्या तर्कीब हो सकती है ? इतने बड़े तिलिस्म में उसका पता लगेगा ही क्योंकर ?

दूसरा : उसे यहाँ आये ज्यादे देर नहीं हुई है. अभी तक वह इस बाग के बाहर न हुआ होगा. हम लोगों को सबसे पहिले यहाँ से बाहर होने के कुल दरवाजे बन्द कर देने चाहियें और तब उसकी खोज शुरू करनी चाहिये.

पहिला : मगर इसके पहिले क्या यह मुनासिब न होगा कि उस मूरत को कहीं छिपा दें जिसके जरिये वह आगे जा सकता है ?

सब : हाँ हाँ, यह तो बहुत ठीक है, ऐसा ही करना चाहिये ! !

तुरन्त ही वे चारों शैतान पूरब की ओर बढ़े. उनके हटते ही प्रभाकरसिंह भी जो बड़े गौर से उनकी बातें सुन रहे थे अपनी जगह से हटे और लतामण्डप के बाहर की तरफ चले. मालती ने यह देखते ही रोका और पूछा, "आप च कहाँ ?"

प्रभाकर० : इन शैतानों का पीछा करके इस बात का पता लगाने कि वह मूरत कहाँ है और ये कम्बख्त उसे किस तरह या कहाँ छिपाते हैं.

मालती : (डर कर) नहीं नहीं, आप उन कम्बख्तों के पीछे न जांय, कौन ठिकाना वे सब देख लें तो फिर लेने के देने पड़ जायेंगे !

प्रभा० : नहीं नहीं, अगर इस तरह डरा करेंगे तो हम लोग कोई काम नहीं कर सकेंगे. आखिर उस मूरत का पता लगाना भी तो जरूरी है. तुम घबराओ नहीं, मैं बड़ी होशियारी से उनका पीछा करूँगा, तुम चुपचाप इसी जगह रहो, मैं बहुत जल्द वापस आता हूँ.

कहते हुए प्रभाकरसिंह आगे बढ़े और दबे पाँव उन चारों शैतानों के पीछे हो लिये जो आपस में कुछ बातें करते हुए दूर निकल गये थे.

मेंहदी की टट्टी को पार कर वे चारों शैतान बाईं तरफ घूमे जिधर बहुत-से फलों के पेड़ों ने एक छोटा जंगल-सा बनाया हुआ था जो कितनी दूर तक फैला है इसका पता नहीं लगता था. इस जंगल में चारों तरफ बीसों ही पगडंडियां निकल गई थीं जिन्होंने आपस में एक-दूसरे को काटते हुए एक तरह का चकाबू-सा बना रक्खा था. चारों शैतान इन्हीं में से एक पर जाने लगे. यद्यपि प्रभाकरसिंह को इस बात का डर था कि अगर उन पर किसी की निगाह पड़ जायगी तो मुश्किल होगी और इसी डर से जहाँ तक होता था वे अपने को पेड़ों और झाड़ियों की आड़ में बचाते और छिपाते हुए जा रहे थे पर उन शैतानों को इनके होने का कुछ भी गुमान न था और वे बड़ी बेफिक्री के साथ आपुस में बातें करते हुए चले जा रहे थे.

लगभग एक घड़ी तक प्रभाकरसिंह उन शैतानों का पीछा करते चले गये. इस बीच में उन्होंने इतनी पगडंडियाँ पार कीं और इतने मोड़ घूमे कि अगर ठीक-ठीक पूछा जाय तो वे इतना भी नहीं बता सकते थे कि जिस जगह से वे रवाना हुए थे वह अब उनके किस तरफ है. उन्हें खुद भी इस बात पर सन्देह होने लगा कि अब वे लौट कर मालती के पास पहुँच सकेंगे या नहीं. वे यह सब सोच ही रहे थे कि इसी समय उन्हें एक बरगद के बहुत ही पुराने पेड़ की दूर तक फैली हुई डालें दिखाई पड़ीं जिनके नीचे और जगहों की बनिस्वत कुछ ज्यादे अंधकार था. चारों शैतान यहीं आकर रुक गये और कुछ बातें करने लगे. पेड़ों की आड़ देते हुए कदम दबाये प्रभाकरसिंह भी उनके पास हो गये और उनकी बातें सुनने लगे.

एक : लो आ तो गये.

दूसरा : बस फुर्ती करो, दो आदमी पेड़ पर चढ़ जाओ और इस मूरत के गले से रस्सी अलग करके इसे लटका दो, बस हम लोग नीचे से सम्भाल लेंगे और तब कहीं ले जाकर छिपा देंगे. फिर देखेंगे तिलिस्म तोड़ने वाला कैसे इस बाग के बाहर होता है.

तीसरा : हाँ ठीक है, जब मूर्ति ही छिपा दी जायगी तो बाहर निकलने का रास्ता कैसे पैदा होगा ? अच्छा तो बस काम शुरू करो.

दो शैतान तो पेड़ पर चढ़ गये और दो उस बड़ की एक मोटी डाल के नीचे जाकर खड़े हो गये जो प्रभाकरसिंह के छिपने की जगह से कुछ दूर पर थी. गौर करने पर प्रभाकरसिंह ने देखा कि एक मोटी डाल के साथ एक बड़ी आदमकद मूर्ति लटक रही है. एक तो वहाँ अन्धकार था, दूसरे बहुत पुरानी हो जाने के कारण उसका रंग साफ प्रकट नहीं होने पाता था इससे प्रभाकरसिंह स्पष्ट रूप से जान न सके कि मूरत का भाव क्या है परन्तु इतना समझ पड़ा कि वह किसी औरत की मूरत है जिसके गले में फाँसी की तरह एक रस्सी पड़ी हुई है. इस रस्सी का दूसरा सिरा ऊपर की डाल से बँधा हुआ था और वह मूरत जमीन से चार-पाँच हाथ ऊँचे कुछ-कुछ इस तरह पर लटक रही थी मानो इसे फाँसी दे दी गई हो. इस मूरत को वहाँ देख प्रभाकरसिंह को प्रसन्नता हुई क्योंकि उस तिलिस्मी किताब में इस मूरत का जिक्र था और इसी की सहायता से वे बाग के बाहर हो सकते थे, परन्तु इस समय उन शैतानों के मुँह से यह सुन कर कि वे इस मूरत को कहीं उठा ले जायेंगे, उनकी चिन्ता बढ़ गई थी. फिर भी वे कर ही क्या सकते थे ? एक ही शैतान से लड़ कर वे जिस तरह का जक उठा चुके थे उसे याद करके इकट्ठे इन चार शैतानों का मुकाबला करना उन्हें आत्महत्या की चेष्टा करना प्रतीत होता था. वे लाचारी की मुद्रा से खड़े होकर देखने लगे कि चारों अब क्या करते हैं.

उन चारों शैतानों ने मिल-जुल कर उस मूरत को डाल से अलग किया और पेड़ के तने के साथ लगा कर खड़ा कर दिया. मालूम होता है कि वह मूरत बहुत ही भारी थी क्योंकि सिर्फ इतना ही काम करके वह चारों एक बगल खड़े हो गये और सुस्ताने लगे.

थोड़ी देर बाद एक ने कहा, "अब चलो इसे उठा कर कहीं छिपा भी दें ताकि इस बखेड़े से छुट्टी मिले."

दूसरा यह सुन बोला, "हाँ सो तो करेंगे ही, मगर मुझे एक बात सूझी है."

उसने धीरे से कोई बात कही जिसके सुनते ही सबके सब बोल उठे, "ठीक है ठीक है, बस ऐसा ही करो ! उसे यहाँ लाकर इसी पेड़ के साथ फाँसी लटका दो और तब इस मूरत को उठा ले जाओ. जब तिलिस्म तोड़ने वाला आवेगा तो उसे पता लगेगा कि बिना समझे-बूझे तिलिस्मी मामलों में दखल देने वालों की क्या दशा होती है !"

इतना कहते और जोश के साथ कुछ बातें करते हुए वे चारों शैतान जिधर से आये थे उधर ही को चले गये. प्रभाकरसिंह को मौका मिला, लपक कर वे उस मूर्ति के पास पहुँचे और उसे गौर से देखने लगे. देखते ही उन्हें विश्वास हो गया कि यह वही मूर्ति है जिसका हाल तिलिस्मी किताब में लिखा हुआ है. किताब खोलकर उन्होंने कुछ देखा और तब बन्द कर जेब के हवाले करने के बाद बोले, "अब वह काली राख इस पर मल करके ही यहाँ से हटना चाहिए. कौन जाने कब वे कम्बख्त यहाँ आ पहुँचें और इसे यहाँ से कहीं गायब कर दें."

यहाँ से थोड़ी दूर पर एक नाला बहता हुआ दिखाई पड़ रहा था. प्रभाकरसिंह उसके किनारे जा और शेर वाले कमरे से बटोरी धूल को उसके पानी में सान गीले आटे-सा बना कर ले आये. इस आटे को उन्होंने इस मूरत के तमाम बदन पर लेप कर दिया और तब सन्तोष के साथ बोले, "अब दो घंटे की मोहलत है. चलूं मालती को भी ले आऊँ !"

यकायक प्रभाकरसिंह के कान में किसी औरत के चीखने की आवाज पहुँची जिसने उन्हें घबरा दिया. वे ताज्जुब से चारों तरफ देखने लगे. पुनः चीख की आवाज आई और इस बार प्रभाकरसिंह के मुँह से निकल गया, "हैं, यह तो मालती की आवाज मालूम पड़ती है ! वह किसी मुसीबत में गिरफ्तार तो नहीं हो गई ?" पुनः एक चीख की आवाज आई. अब प्रभाकरसिंह बर्दाश्त न कर सके, यहाँ से हटे और आवाज की सीध पर गौर करते हुए पश्चिम तरफ को रवाना हुए. थोड़ी ही दूर गए होंगे कि सामने से चारों शैतान आते हुए दिखाई पड़े. इस समय वे एक औरत को उठाये हुए थे जो उनके हाथों से छूटने के लिए छटपटा और चिल्ला रही थी.

6

सर्यू की गठरी दारोगा साहब के हवाले करने के बाद हेलासिंह और मुन्दर लोहगढ़ी में एक स्थान पर बैठ गये और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए. दोनों में धीरे-धीरे इस तरह बातें होने लगीं —

मुन्दर : दारोगा साहब ने आपको यहाँ पर देख कर पूछा नहीं कि आप यहाँ किस काम के वास्ते आये हैं ? उन्हें कुछ शक जरूर हुआ होगा.

हेला० : नहीं, भला यह उन्हें क्या खाक पता लग सकता है कि हम लोग यहाँ तिलिस्मी किताब छिपाने के लिए आये थे ! मगर अब यह बताओ कि तुमने क्या करने का निश्चय किया. इतना झगड़ा, तरद्दुद जो कुछ किया गया उसका नतीजा भी कुछ निकलेगा कि नहीं ?

मुन्दर : आपका मतलब भूतनाथ वाले मामले से ही है या कुछ और ?

हेला० : हाँ उसी विषय में कह रहा हूँ. तुम्हारा कहना था कि अगर एक हफ्ते की मोहलत मिल जाय तो तुम भूतनाथ से बचने की तर्कीब निकाल सकती हो !

मुन्दर : जी हाँ, मैंने जरूर कहा था.

हेला० : तो अब तो तुम्हारे मन की बात हो गई. लोहगढ़ी की ताली ऐसी जगह छिपा दी गई कि जहाँ मौत को भी पता न लगे और तुमको भी मैंने छिपने का ऐसा स्थान बता दिया जहाँ भूतनाथ के पीर नहीं पहुँच सकते. अब तुम क्या चाहती हो ?

मुन्दर : बस तो फिर मैं भी अपना काम करने को तैयार हूँ. यह तो आपको विश्वास है न कि यहाँ मेरे काम में विघ्न डालने वाला कोई नहीं आवेगा ?

हेला० : अच्छी तरह ! जमानिया के राजा के और मेरे अलावे इस लोहगढ़ी का पूरा हाल सिर्फ दो ही आदमी जानते थे और वे दोनों ही मौत के मुँह में चले गये, अब···

मुन्दर : कौन दो आदमी ?

हेला० : एक तो भैयाराजा और दूसरा एक पुजारी जिसे तुम नहीं जानतीं बस ये ही दो यहाँ का पूरा भेद जानते थे. इनके बाद अब मुझे ही सबसे अधिक इस जगह का हाल मालूम है, दारोगा साहब भी कुछ जानते जरूर हैं मगर ज़्यादा न

और न वे उन जगहों में जा ही सकते हैं जहाँ से होते हुए हम लोग अभी-अभी चले आ रहे हैं.

मुन्दर : और वह शैतान जो प्रभाकरसिंह को पकड़ ले गया ?

हेला० : (शैतान की याद से काँप कर) उसके बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता ! मुझे तो वह कोई तिलिस्मी आसेब जान पड़ता है. (काँप कर) ओफ, क्या विकराल सूरत थी.

मुन्दर : (उसकी याद से घबड़ा कर) मुझे तो यही डर लगता है कि वह आकर कहीं मुझे न सताये. अब भी उसकी सूरत याद कर के रोमांच हो जाता है.

हेला० : नहीं, यह उम्मीद मुझे नहीं है कि वह फिर दिखाई पड़ेगा. अब जो मैं सोचता हूँ तो ऐसा जान पड़ता है कि वह कोई आसेब था जो तिलिस्म की हिफाजत के लिए मुकर्रर होगा. प्रभाकरसिंह गैर आदमी थे, तिलिस्म में किसी तरह घुस आये थे, उन्हें वह पकड़ ले गया और अब तक मार-खपा के छुट्टी किये होगा, अस्तु इस बला से भी नेजात मिल गई. हम लोग जानकार आदमी हैं, हमारा वह कुछ न करेगा, फिर मैं तो यहाँ का दीवान रह चुका हूँ, मुझे तिलिस्म के मामलों में सब तरह का हक भी है. तुम्हें इस तरफ से डरने की कुछ जरूरत नहीं.

इत्यादि बातें कह हेलासिंह ने मुन्दर का डर कम किया और समझा-बुझा कर उसे शान्त करने के बाद पूछा, "तो अब तुम्हारा क्या विचार है और मुझे क्या करने को कहती हो ?"

मुन्दर : आप अब सीधे अपने घर चले जायें और मैं अपनी फिक्र में लगती हूँ. अगर भूतनाथ आवे तो किसी तरह हीला-हवाला करके पाँच-सात रोज बिता दें, अगर मेरी कारीगरी काम कर गई तो दुबारा उसको शायद आपके पास पुन: आने की हिम्मत ही न पड़ेगी.

हेला० : आखिर मुझे भी तो कुछ बताओ कि तुमने क्या सोचा है और क्या करना चाहती हो ?

मुन्दर : काम पूरा हो जाने पर मैं सब कुछ बता दूँगी मगर अभी कुछ न कहूँगी.

हेला० : खैर मर्जी तुम्हारी, जो जी में आवे करो, मगर जो कुछ करो खूब समझ-बूझ कर करो. ऐसा कोई काम न होना चाहिये जिसमें भूतनाथ नाराज हो जाय और न ऐसी ही कोई कार्रवाई होनी चाहिये जिसमें दारोगा साहब को बुरा

मानने का मौका मिले क्योंकि तुम्हारे बारे में जो कुछ कार्रवाई वे कर रहे हैं उसमें किसी तरह का विघ्न पड़ने से नतीजा बहुत खराब निकलेगा.

मुन्दर : नहीं नहीं, मैं सब तरह से होशियार रहूँगी, आप बेफिक्र रहिये.

इतना कह मुन्दर ने अपने कपड़ों के अन्दर से ऐयारी का बटुआ निकाला तथा एक लपेटा हुआ पुलिन्दा भी बाहर किया जिसे अब तक अपने कपड़ों में छिपाये हुए थी. हेलासिंह ने पुलिन्दे को देख कर ताज्जुब से पूछा, "यह क्या चीज है?" वह बोली, "बहुत ही काम की एक चीज जो बन्दरों वाले बंगले के अन्दर से मुझे मिली है."

हेलासिंह ने उस पुलिन्दे को खोल कर देखा. यह एक तस्वीर थी जिसका पूरा हाल पाठक जानते हैं क्योंकि यह वही थी जिसे मेघराज के बंगले में भूतनाथ ने देखा और देखते ही बदहवास हो गया था[1] या जिससे उसकी काली करतूत का हाल प्रकट होता था, अर्थात् जिसमें उसके द्वारा दयाराम के मारे जाने का दृश्य बना हुआ था. इसमें एक छत पर खड़े कई आदमी दिखाये गये थे जिनमें भूतनाथ, दलीपशाह, शम्भू, राजसिंह वगैरह साफ पहिचाने जाते थे. भूतनाथ के सामने खाली हाथ दयाराम खड़े थे और भूतनाथ के हाथ का खंजर दयाराम के कलेजे के पार होना ही चाहता था.

हेलासिंह को इस घटना का हाल बखूबी मालूम था अस्तु कुछ देर तक गौर के साथ इस तस्वीर को देखने के बाद उसने कुछ ताज्जुब के साथ मुन्दर से पूछा, "इसमें तो भूतनाथ के द्वारा दयाराम के मारे जाने का हाल दिखाया गया है, यह क्या तुमने बनाई है?"

मुन्दर : नहीं, उस बन्दरों वाले बंगले में यह तस्वीर टंगी थी और अपने काम की समझ मैं इसे साथ लेती आई हूँ.

हेला० : (ताज्जुब से) बन्दरों वाले बंगले में यह तस्वीर टंगी थी! भला वहाँ यह कैसे आई?

मुन्दर : सो तो मैं नहीं कह सकती. एक चौखटे में जड़ी थी जिस पर लाल पर्दा पड़ा था, काट कर निकाल लाई.

हेलासिंह यह सुन कर कुछ फिक्र में पड़ गया और इधर मुन्दर भी किसी सोच

---

1. देखिए भूतनाथ नौवाँ भाग, नौवाँ बयान.

में पड़ गई. मगर थोड़ी ही देर बाद वह हेलासिंह से बोली, "चलिए अब इस जगह से बाहर निकलना चाहिए."

दोनों आदमी उठे और लोहगढ़ी के बाहर चले. हेलासिंह ने उसके कई दरवाजों का भेद मुन्दर को समझा दिया बल्कि उसके हाथ से खुलवा और बन्द करवा कर उसकी तर्कीब मुन्दर के जेहन में अच्छी तरह बैठा दी.

दोनों आदमी लोहगढ़ी के बाहर निकले मगर फाटक पर पहुंचते ही यकायक हेलासिंह चौंक पड़ा क्योंकि उसकी निगाह लहू के एक बड़े-से थक्के पर पड़ी जो दरवाजे के बाहर ठीक सामने ही पड़ा हुआ था और अभी एकदम ताजा था. हेलासिंह के साथ ही मुन्दर की निगाह भी उस पर पड़ी और उसका चेहरा डर से पीला हो गया.

खून की एक पतली लकीर उस जगह से चल कर पास की एक झाड़ी तक गई हुई थी. अपने कलेजे को मजबूत किए हुए हेलासिंह उस झाड़ी के पास पहुँचा. सामने ही बिना सिर की लाश पड़ी दिखाई दी. ज्यादा गौर करने की जरूरत न पड़ी और एक निगाह ने बता दिया कि यह उसका वही नौकर है जो सर्यू की गठरी लेकर दारोगा साहब के रथ तक पहुँचाने के लिए गया था. मुन्दर ने डरी हुई आवाज में कहा, "हैं, इसका खून किसने किया!"

हेला० : (अफसोस और डर के साथ) कुछ समझ में नहीं आता! क्या मैं यह मान लूं कि दारोगा साहब ने जिनके हवाले मैंने सर्यू को किया था इसकी जान ली है!

मुन्दर : नहीं नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता, यह कुछ और ही बात है और इसके सर का गायब होना बताता है कि जरूर इस बेचारे की जान किसी और ही कारण से गई है. खैर फिर कभी इसका पता लगाया जायगा, इस वक्त यहाँ से चले चलना ही ठीक है.

दोनों आदमी टीले से नीचे उतरे और दो तरफ को हो गये. हेलासिंह जमानिया की तरफ रवाना हुआ और मुन्दर ने काशी का रास्ता लिया. इस समय हम मुन्दर के साथ चलते और देखते हैं कि वह कहाँ जाती या क्या करती है.

हेलासिंह से अलग हो टीले से उतर मुन्दर सीधी उस तरफ को रवाना हुई जिधर अजायबघर की इमारत थी. जिस समय वह उससे कुछ दूर थी उसने देखा कि उसके नीचे से बहने वाले नाले के किनारे पत्थर की चट्टान पर कोई आदमी

सिर झुकाये बैठा है. इसे देखते ही मुन्दर के चेहरे से प्रसन्नता प्रकट होने लगी. वह लपकती हुई उसके पीछे जा पहुँची और नखरे के साथ उस मर्द की आँखें बन्द कर लीं.

मुलायम हाथों को पकड़ मुन्दर को अपनी तरफ खींचते हुए उस नौजवान ने कहा, "बारे तुम किसी तरह आईं तो सही ! मैं तो सुबह से राह देखता-देखता एकदम परेशान हो चुका था और अब निराश होकर यहाँ से लौट जाने वाला था !"

मुन्दर उसके बगल में बैठती हुई बोली, "क्या बताऊँ ऐसी झंझट में पड़ गई कि किसी तरह निकासी ही नहीं हुई ! बड़ी मुश्किल से इस वक्त आध घण्टे की मोहलत लेकर आई हूँ. यह तो कहो कि तुम्हें मेरी चीठी मिल गई और तुम आ गए, नहीं तो मुझे कहीं बैरंग वापस लौटना पड़ता तो बड़ा ही दुःख होता."

इस नौजवान को हमारे पाठक बखूबी पहिचानते हैं. यह वही आदमी है जिस से मुन्दर उस समय बातें कर रही थी जब हेलासिंह ने अचानक पहुँच कर इनके आनन्द में विघ्न डाला था[1]. मुन्दर की बात सुन इसने कहा, "नहीं, तुम्हारी लौंडी बड़ी होशियारी के साथ मेरे घर आई थी, मुझसे मिलकर उसने इस प्रकार तुम्हारा पत्र दिया कि किसी को कुछ भी पता न लगने पाया. मगर यह तो बताओ कि आज मामूलके खिलाफ मैं तुम्हें इस तरह जंगल-मैदानों की हवा खाते क्यों देख रहा हूँ, तुम्हारे पिता तो एक सायत के लिए तुम्हें पर्दे के बाहर नहीं आने देते थे?"

मुन्दर : हाँ, कुछ ऐसा ही सबब हो गया. किसी काम से वे वहाँ से थोड़ी दूर पर अपने एक मकान में आये और वहाँ कुछ जरूरी काम कर रहे हैं, सुहावने जंगल की सैर करने का बहाना करके मैंने उनसे छुट्टी ली और यहाँ चली आई हूँ.

कुछ देर तक दोनों प्रेमियों में इस तरह की बातें होती रहीं जिस तरह की मनचले आशिकों और माशूकों में होती हैं. इसके बाद मुन्दर ने इस तरह का भाव बना कर, मानो यह बात अचानक ही उसे खयाल आ गई हो, उस नौजवान से पूछा, "हाँ खूब याद आया, उस बात का तुमने कुछ पता लगाया जिसके बारे में उस दिन जिक्र हो रहा था."

नौज० : कौन-सी बात ?

---

1. देखिये भूतनाथ चौदहवाँ भाग, चौथा बयान.

मुन्दर : अजी वही भुवनमोहिनी वाली बात ! जिसके बारे में उस दिन तुमने कहा था कि उसका किस्सा बड़ा ही विचित्र है, मगर तुम्हें पूरा हाल मालूम नहीं !

नौज० : हाँ मैंने उसके बारे में पता लगाया था.

मुन्दर : क्या पता लगा, मुझसे कहो जरा मैं भी सुनूं !

नौज० : वह बड़ा ही दर्दनाक हाल है, तुम सुन कर दुःखी हो जाओगी.

मुन्दर : तब तो मैं जरूर सुनूंगी, तुम बताओ.

कुछ इधर-उधर करने के बाद नौजवान ने इस तरह कहना शुरू किया :—

"भुवनमोहिनी एक बड़ी ही खूबसूरत और नाजुक लड़की थी जिसके पिता राजा वीरेन्द्रसिंह के रिश्तेदारों में थे. जमानिया में ससुराल होने के कारण वह ज्यादातर वहीं रहा करती थी, जिस सबब से कभी-कभी महाराज गिरधरसिंह के महल में भी उसका आना-जाना हुआ करता था.

"न-जाने किस तरह जमानिया की बड़ी महारानी अर्थात् महाराज गिरधरसिंह की रानी को यह शक हो गया कि महाराज भुवनमोहिनी को चाहते हैं. मैं नहीं कह सकता कि इस बात में कोई सच्चाई भी थी या नहीं पर यह जरूर था कि कई कारणों से महारानी का यह शक पक्का ही होता गया.

"डाह बड़ी बुरी चीज है और खास कर औरतों की. महारानी चाहे जैसी ही अच्छी औरत क्यों न हों, पर इस बात ने उन्हें आपे से बाहर कर दिया और उन्होंने निश्चय कर लिया कि जैसे भी हो भुवनमोहिनी को जमानिया से निकाल ही देंगी. महाराज पर दबाव डाल कर उन्होंने उसके पति को, जिसका नाम कामेश्वर था, कहीं दूसरी जगह भेजवा दिया, पर कुछ कारण ऐसे आ पड़े कि जिससे थोड़े ही दिनों बाद महाराज को फिर उसे जमानिया बुला लेना पड़ा. उसके साथ-साथ भुवनमोहिनी भी आ गई और फिर महारानी की आँखों में काँटे की तरह गड़ने लगी. होते-होते यहाँ तक हुआ कि महारानी उसकी जानी दुश्मन होगईं और उसे जान से मरवा देने का विचार करने लगीं. सुनने में आया है कि किसी से उन्होंने उसे जहर दिलवाने की कोशिश भी की मगर सफल न हुईं, अवश्य ही यह खबर कहाँ तक सच है कहा नहीं जा सकता.

"उन दिनों गदाधरसिंह नाम के एक ऐयार का बहुत नाम फैला हुआ था. वह आजकल कहाँ है और मर गया या जीता भी है यह कुछ नहीं कहा जा सकता परन्तु उन दिनों वह रणधीरसिंह के यहाँ नौकर था और प्रायः उन्हीं के काम-काज

से जमानिया भी आया-जाया करता था. कहा जाता है कि महारानी को किसी तरह उसकी चालाकी और होशियारी का पता लगा. उन्होंने अपने दुश्मन को दूर करने की इच्छा से उसी गदाधरसिंह को अपना विश्वासपात्र बनाया और बहुत रुपयों की लालच देकर उसके सुपुर्द यह काम किया कि वह भुवनमोहिनी को इस तरह खपा डाले कि किसी को कानोकान खबर न हो कि वह कहाँ गई या क्या हुई.

"न-जाने गदाधरसिंह की कोई कार्रवाई थी या उसकी मौत ही आ गई थी, सुना जाता है कि इसके कुछ ही दिन बाद भुवनमोहिनी को साँप ने काट लिया और वह मर गई. ठीक-ठीक क्या बात थी इसका कुछ पता नहीं लगता. कुछ लोगों का कहना है कि गदाधरसिंह ने दारोगा साहब की सहायता से यह कार्रवाई की और भुवनमोहिनी को जहर देकर शोर कर दिया कि इसे साँप ने काट लिया, कुछ का कहना है कि इसमें चुनार के राजा शिवदत्त की भी कुछ साजिश थी, मगर असल बात क्या थी इसका कुछ ठीक-ठीक सूराग अब तक नहीं लगा, हाँ उस समय यह बात जरूर उड़ी थी कि बड़ी महारानी ने भूतनाथ को बहुत रुपया-पैसा दिया बल्कि उसे अपने दरबार का ऐयार भी बनाना चाहा था मगर वह राजी नहीं हुआ. गदाधरसिंह ने जरूरत पड़ने पर उनका हुक्म बजा लाने की रजामन्दी तो दिखाई मगर दरबारी ऐयार होना यह कारण बता कर अस्वीकार किया कि वह खुद एक रियासत का (रणधीरसिंह का) नौकर है और बिना उनकी आज्ञा पाये दूसरे दरबार की नौकरी नहीं कर सकता. खैर जो कुछ हुआ हो और भुवनमोहिनी की मौत में गदाधरसिंह का कोई हाथ रहा हो या न रहा हो, इसमें शक नहीं कि इस काम के लिए गदाधरसिंह ने भरपूर दौलत महारानी से पाई.

"संक्षेप में यही वह हाल है जो भुवनमोहिनी के बारे में मुझे मालूम हुआ है. मैंने यह भी सुना है कि इस सम्बन्ध में भुवनमोहिनी का पति कामेश्वर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास शिकायत लेकर पहुंचा और उन्हें भी किसी तरह विश्वास हो गया कि भुवनमोहिनी अपनी मौत से नहीं मरी बल्कि किसी दुर्घटना ने उसकी जान ली जिसका नतीजा यह निकला कि उन्होंने ऐयारों को इसका पता लगाने का हुक्म दिया, मगर इस सम्बन्ध में पूरा-पूरा हाल अभी मुझे नहीं मालूम हुआ. सिर्फ इतना पता लगा है कि भूतनाथ को अपनी जान का खौफ हो गया और वह तब से छिपता फिरता है.

"मगर इसके साथ यह भी जरूर है कि इस मामले में दारोगा साहब, जैपालसिंह और महाराज शिवदत्त का भी हाथ था. अगर और कुछ नहीं तो कम-से-कम इस घटना को तो वे लोग बखूबी जानते ही थे."

इतना कह उस नौजवान ने कहा, "लो बस जो कुछ मुझे मालूम हुआ वह सब मैंने बता दिया—अब तो खुश हुईं!"

टेढ़ी नजरों से देख कर मुन्दर ने कहा, "अभी तुमने आधा ही काम किया है. उस भुवनमोहिनी की तस्वीर और वे कागजात भी ला देने को तुमने कहा था जिनसे इस मामले का पता लगता है!"

मुस्कुराते हुए उस नौजवान ने अपने कपड़ों के अन्दर से एक पीतल की सन्दूकड़ी तथा एक तस्वीर निकाल मुन्दर के आगे रख दी और कहा, "लीजिए वह भी हाजिर है. और कुछ हुक्म!"

मुन्दर ने वह तस्वीर उठा ली और एक नजर खूब गौर से देख कर अपने कपड़ों में छिपाती हुई बोली, "बस और कुछ नहीं, अब मैं समझ गई कि तुम जरूर मुझे सच्चे दिल से चाहते हो!"

इतना कह उसने वह पीतल की सन्दूकड़ी उठाई और उसे खोलने का उद्योग किया मगर बन्द पाकर बोली, "क्या इसी में वे कागजात हैं? मगर यह तो बड़ी मजबूती से बन्द है, खुलेगी कैसे!"

नौज० : क्या करूँ इसकी ताली बहुत कोशिश करके भी मैं पा न सका लेकिन अगर मौका लगा तो बहुत जल्द हाजिर करूँगा. इस बीच में अगर कोई दूसरी ताली लगा कर तुम इसे खोल सको तो बेहतर ही है.

मुन्दर : अच्छा मैं इसे खोलने का उद्योग करूँगी मगर तुम ताली लाने का भी खयाल रखना.

नौज० : बहुत अच्छा, अब तो तुम्हारे मन की सब बातें हो गईं. मैंने अपना वादा पूरा किया, अब तुम भी अपना वादा पूरा करो!!

मुन्दर : हाँ हाँ, मुझे भी तुम झूठी न पाओगे! परसों रात को तुम मेरे घर आओ, उसी मामूली रास्ते से!

नौज० : (कुछ उदासी से) परसों! और आज क्यों नहीं? इतने दिनों से बराबर तुम वादे करती और मुझे टरकाती आई हो!

मुन्दर : नहीं नहीं, अब की जरूर अपना वादा पूरा करूँगी. आज हम लोग

घर जा ही नहीं रहे हैं. और अब मैं चलूँगी, एक तो बहुत देर हो गई है और फिर कहीं घूमते-फिरते मेरे पिता अगर यहाँ आ गये और हम लोगों को देख लिया तो किसी तरह जिन्दा न छोड़ेंगे.

यह कहती हुई मुन्दर उठ खड़ी हुई, लाचार वह नौजवान भी उठा. दोनों में कुछ मामूली बातें हुईं जो ऐसे अवसरों पर दो प्रेमियों में होती हैं, और तब वे अलग-अलग हो गये. नौजवान ने पूरब तरफ का रास्ता लिया और मुन्दर ने पश्चिम का.

अभी दस ही पाँच कदम आगे बढ़ा होगा कि वह नौजवान पलटा और बोला, "हाँ सुनो तो."

मुन्दर ने रुक कर पूछा, "क्यों क्या है ?" उसने पास आकर अपना हाथ आगे बढ़ाया और कहा, "वह तस्वीर तो तुम साथ ही ले चलीं ! वह मुझे वापस कर दो जिसमें फिर ठिकाने रख दूं."

मुन्दर ने एक कटाक्ष फेंक कर कहा, "अब वह तस्वीर वापस न मिलेगी, मैं उसे अपने ही पास रक्खूंगी."

नौज० : (घबड़ा कर) नहीं नहीं, ऐसा करने का खयाल भी न करना नहीं तो गजब हो जायगा. सन्दूकड़ी तुम भले ले जाओ क्योंकि वह जिस कोठरी में रहती है वह कभी ही कभी खुलती है मगर यह तस्वीर तो मुझे वापस कर ही दो क्योंकि यह अगर गायब पाई जाएगी तो उसको तुरंत मुझ पर शक हो जायगा क्योंकि मैं ही खोद-खोद कर उससे भुवनमोहिनी का हाल पूछा करता था. तुम जानती हो कि मैं हर तरह से उसके अधीन हूँ, उसे किसी तरह से भी नाराज करने का नतीजा मेरे हक में अच्छा न होगा. तुमने सिर्फ एक बार देखने के लिए तस्वीर माँगी थी सो देख ली, अब वापस कर दो तो मैं ले जाकर फिर जहाँ की तहां रख दूं.

मुन्दर : नहीं, अब इसे मैं न दूंगी, अगर तुम पर कोई शक करे तो कुछ बहाना कर देना, यह मैं तुम्हारी यादगार की तरह अपने पास रक्खूंगी.

नौज० : (जिसका चेहरा पीला पड़ गया था) परमेश्वर के लिए ऐसा न करो ! इस तस्वीर का गायब होना बहुत जल्द प्रकट हो जाएगा और तब मेरी बड़ी दुर्दशा होगी. वह बड़ा ही क्रोधी आदमी है और···

मुन्दर : (उदास मुँह बना कर) बस-बस, मैं जान गई कि तुम्हारा प्रेम झूठा

और बनावटी है ! दूसरों के गुस्से का जितना तुम्हें खयाल है उससे आधा भी अगर मेरी खुशी का खयाल होता तो कभी ऐसी मामूली बात के लिए मेरी बेकदरी न करते !

कहते-कहते मुन्दर की बड़ी-बड़ी आँखों से बेहिसाब आँसू निकल कर उसका आँचल तर करने लगे. अब भला उस नौजवान की क्या ताब थी कि एक मामूली तस्वीर के लिये जिद्द कर सके. मुन्दर के पास जाकर उसने अपने दुपट्टे से उसके आँसू पोंछे और कहा, "अच्छा-अच्छा जाने दो, जब तुम्हारी यही इच्छा है तो फिर तस्वीर रक्खे रहो. जो कुछ मुझ पर बीतेगी मैं झेल लूँगा पर तुम्हें किसी तरह से नाखुश न करूँगा."

जैसे बरसते हुए बादलों में बिजली चमक जाती है उसी तरह मुन्दर के चेहरे पर हँसी दौड़ गई. उसने खुश होकर उस नौजवान के गले में अपनी बाँहें डाल दीं और कहा, "बस अब मुझे विश्वास हो गया कि तुम सचमुच मुझे सच्चे दिल से प्यार करते हो !"

जब वह नौजवान कुछ दूर निकल गया तो मुन्दर ने तुच्छता के साथ उसकी तरफ उँगली मटका कर कहा, "गधे, भला तू क्या समझेगा कि इस तस्वीर और इस भेद को पाने के लिए ही मुन्दर ने तुझसे प्रेम का स्वांग रचा था !"

मगर दोनों में से किसी को भी कुछ पता न था कि जहाँ पर बैठ इन दोनों ने बातें की थीं उसके पास ही एक घनी झाड़ी के अन्दर छिपे हुए एक आदमी ने इन दोनों की बातें बखूबी सुन ली हैं.

7

प्रभाकरसिंह को यकीन हो गया कि जिस औरत को उन शैतानों के हाथ में पड़ा हुआ देख रहे हैं वह मालती ही है. यह सोचते ही उनका गुस्सा भड़क उठा और वे तलवार के कब्जे पर हाथ रख उस तरफ लपके मगर उसी समय किसी ने पीछे से आकर उनके मोढ़े पर हाथ रख दिया जिससे वे यकायक चौंक पड़े. घूम कर देखा तो मालती ! वे ताज्जुब से बोले, "हैं, तुम यहाँ ! मैंने तो समझा था कि तुम उन शैतानों के कब्जे में पड़ गई हो और इसीलिए तुम्हें छुड़ाने के खयाल से ही उधर जा रहा था !" मालती यह सुन बोली, "यही मैंने भी सोचा और इसी से आपको

होशियार किया. मैं तो उसी समय से आपके साथ हूँ जब से आप इधर को चले. मुझे अकेले वहाँ रहते डर लगा अस्तु मैं भी आपके पीछे-पीछे चल पड़ी. वह कोई दूसरी ही औरत है जिसे वे सब ला रहे हैं !"

दोनों एक पेड़ की आड़ में हो गये और देखने लगे कि अब वे शैतान किधर जाते या क्या करते हैं. उस छटपटाती हुई औरत को लिए वे लोग सीधे इधर ही आ रहे थे कि यकायक रुक गये जब उन्होंने देखा कि जिस मूरत को वे लोग पेड़ से उतार कर जमीन पर रख गये थे उसके सिर में से आग का एक बड़ा लुक उठा और आसमान की तरफ चला. प्रभाकरसिंह का भी ख्याल उस रोशनी की तरफ गया और जैसे ही वे घूमे उन्होंने देखा कि उस पुतली के सिर में से पुनः एक दार वैसा ही हुआ.

आग की पहली लबर को दूर से देखते ही वे सब शैतान रुक गये. जब दूसरी और तीसरी बार भी ऐसा हुआ तो वे सब के सब घबरा गये और एक के मुँह से निकला, "भागो भागो भागो, मालूम होता है तिलिस्म तोड़ने वाला यहाँ पहुँच गया !" उसके ऐसा कहने के साथ ही वे सब उस औरत को लिये जिधर से आये थे उधर ही को वेतहाशा भाग गये.

अब मालती और प्रभाकरसिंह के चित्त को कुछ शान्ति पहुँची. वे दोनों लौट कर उसी मूरत के पास चले गये और उससे थोड़ी दूर हट एक साफ जगह देख बैठ कर आपस में बातें करने लगे. थोड़ी-थोड़ी देर पर उस मूरत के सर से वैसी ही आग की लपटें उठती थीं और आसमान में जाकर गायब हो जाती थीं पर प्रभाकरसिंह को इस पर कोई आश्चर्य न था क्योंकि वे जानते थे कि ऐसा होने ही वाला था.

लगभग दो घड़ी तक इसी तरह गुजर गई, इसके बाद यकायक उस मूरत के सिर से इस तरह की लपट निकलने लगीं जैसी अनार या फुलझड़ी के जलने पर उसके अन्दर से निकलती हैं. लगभग पाँच मिनट तक यह लपट निकलती रहीं और इसे देख कर प्रभाकरसिंह मालती को लिये अपनी जगह से हट कुछ दूर जाकर खड़े हो गये. वे यहाँ से हटे ही थे कि यकायक उसी समय एक इतनी जोर की आवाज हुई कि जिसने कानों के पर्दे फाड़ दिये. मालूम हुआ मानो पचासों तोपों पर एक साथ बत्ती रख दी गई हो. भयानक आवाज ने इन दोनों का सर घुमा दिया और ये अपने हाथों से अपने-अपने कानों को बन्द कर वहीं बैठ गये.

थोड़ी देर में जब सन्नाटा हुआ तो दोनों उठे और उस मूरत की तरफ चले. पास पहुँचने पर देखा कि उस मूरत का कहीं नामनिशान भी नहीं है और जहाँ वह थी उसके सामने की तरफ जमीन में एक रास्ता दिखाई पड़ रहा है जिसके अन्दर उतर जाने के लिए पतली सीढ़ियाँ बनी हुई हैं. ये लोग खुशी-खुशी नीचे उतर गये. बारह डंडा सीढ़ियाँ उतर जाने के बाद सुरंग दिखाई पड़ी जिसके अंदर अन्धकार था. अपने पास से सामान निकाल कर प्रभाकरसिंह ने रोशनी की और दोनों उस सुरंग के अन्दर घुसे.

यह सुरंग बहुत ही लम्बी और इधर-उधर घूमती-फिरती न-जाने कहाँ तक गई हुए थी कि तय करने में इन लोगों को बहुत समय लग गया साथ ही ये गर्मी से बहुत परेशान हो गये क्योंकि इस सुरंग में साफ हवा आने वाले मोखे बहुत दूर-दूर पर थे जिससे यहाँ की हवा गर्म और कुछ भारी मालूम पड़ती थी. आखिर किसी तरह सुरंग खतम हुई और इन लोगों ने अपने को एक छोटे दालान में पाया जिसके सामने एक खूबसूरत बाग दिखाई पड़ रहा था. शाम का वक्त हो गया और सूरज डूबना ही चाहता था.

इस बाग को एक निगाह देखते ही मालती ने इसे पहिचान लिया क्योंकि यह वही जगह थी जहाँ इन्द्रदेव का साथ छूटने पर उसने अपने को होश में पाया था. वह लोहे वाला ऊँचा खम्भा और उसके ऊपर वाली बारहदरी जिसमें वह कैद थी सामने दिखाई पड़ रही थी. उसने यह बात प्रभाकरसिंह से कही और उस ऊँची गोल बारहदरी की तरफ दिखा कर बोली, "यह वही गोल बारहदरी है जिसमें इन्द्रदेवजी से अलग होने पर मैंने अपने को पाया था!"

प्रभाकरसिंह ने कहा, "और मेरी समझ में शायद यही वह जगह भी है जिसका जिक्र तिलिस्मी किताब में घूमने वाली बारहदरी के नाम से किया गया है, मगर यह बारहदरी घूमती-फिरती तो कुछ भी नहीं. खैर जो कुछ होगा देखा जायगा. अब आज की रात तो इसी दालान में काटनी चाहिए क्योंकि एक तो इस लम्बे सफर ने हमें एकदम थका दिया है, दूसरे संध्या भी हो चली है, अब कुछ काम करने का वक्त नहीं रहा."

प्रभाकरसिंह और मालती ने उसी दालान को अपना डेरा समझा और जरूरी कामों से निपटने की फिक्र में लगे. खोजने से बाग में एक छोटी बावली मिल गई जिसके साफ पानी में इन लोगों ने मुंह-हाथ धोया और पीकर प्यास दूर करने के

बाद आवश्यक कामों की फिक्र में लगे. प्रभाकरसिंह ने स्नान कर संध्या-पूजा की और तब मालती के लाये हुए कुछ फलों से अपनी भूख शान्त कर उसी बारहदरी में अपना दुपट्टा बिछा कर लेट रहे. मालती ने भी उनसे कुछ हट कर अपना आसन लगाया. दोनों थके हुए थे इससे जल्दी ही नींद आ गई.

वह रात उन लोगों ने निर्विघ्न काटी और दूसरे दिन सूर्योदय के पहिले नित्य कर्म से निश्चिन्त हो गये. प्रभाकरसिंह ने तिलिस्मी किताब खोली और पढ़ कर मालती को सुनाने लगे.

यह काम आधे घण्टे तक जारी रहा और आज जो कुछ करना था उसकी कार्रवाई जब अच्छी तरह प्रभाकरसिंह के जेहन में बैठ गई तथा मालती भी समझ चुकी तो प्रभाकरसिंह ने किताब बन्द करके जेब में रक्खी और अपना तिलिस्मी डण्डा सम्भाल उठ खड़े हुए.

आगे-आगे प्रभाकरसिंह और उनके पीछे मालती वहाँ से उठ कर उसी गोल बारहदरी के पास पहुंचे. जैसाकि हम पहले लिख आये हैं यह बारहदरी कोई बीस हाथ ऊँचे एक लोहे के खम्भे पर बनी हुई थी जो मोटाई में पाँच हाथ से किसी तरह कम न होगा. यह लोहे का खंभा सब तरफ से एकदम चिकना और साफ था और इसमें कहीं भी कोई दरवाजा या रास्ता दिखाई नहीं पड़ता था तथा इसी के ऊपर वह काले पत्थर की बारहदरी थी जिसमें मालती ने अपने को पाया था. हम यह भी लिख आये हैं कि इस बारहदरी के ऊपर की तरफ एक घरहरा-सा बना हुआ था जिस पर किसी धातु का बना एक उकाब बैठा हुआ था.

प्रभाकरसिंह ने इस खम्भे के पूरब तरफ जाकर उसकी जड़ से पाँच हाथ जमीन नापी और अपने तिलिस्मी डण्डे की नोक से यहाँ की जमीन खोदनी शुरू की. जमीन बहुत सख्त थी और वह डंडा इस लायक नहीं था कि उससे मिट्टी खोदने का काम लिया जा सकता फिर भी अपने उद्योग और आधे घण्टे की मेहनत से प्रभाकरसिंह ने वहाँ हाथ भर लम्बा-चौड़ा और करीब दो हाथ गहरा एक गड्ढा कर डाला. तब वे उसी गढ़े में उतर गए और पैरों से उसकी सतह में कुछ खोजने लगे. खोजते-खोजते एक कोने में उनके पैर से कोई चीज अड़ी और उन्होंने झुक कर उसे देखा. पत्थर की सिल्ली नजर आई जिसके बीच में लगी कड़ी पकड़ उन्होंने उठाया. देखा तो नीचे एक छोटी सी जगह है जिसके अन्दर लगभग बालिश्त लम्बी सोने की एक ताली रक्खी हुई है. प्रसन्न होकर वह ताली उठा

और देख-भाल कर मालती के हाथ में दे दी, इसके बाद गड्ढे के बाहर निकल आये.

अब दोनों पुनः उस खम्भे के पास पहुँचे. पूरब की तरफ, खंभे की जड़ में जहाँ से नाप कर उन्होंने गढ़ा खोदा था, प्रभाकरसिंह गौर से देखने लगे. देखते-देखते एक जगह कुछ लिखा हुआ मिला जो धूल-मिट्टी से ढका होने के कारण सहज में पढ़ा नहीं जाता था. कुशल इतनी ही थी कि उस खंभे का लोहा कुछ ऐसा था कि जमाना गुजर जाने पर भी उसमें कहीं जंग का नाम-निशान न था अस्तु थोड़ी मेहनत में ही प्रभाकरसिंह ने उतनी जगह साफ कर ली और गौर से पढ़ कर देखा, यह लिखा हुआ था :—

ऊपर—दो हाथ सात अंगुल
बाएं—एक बालिश्त पाँच अंगुल
×—दाब, खोल.

कुछ देर तक प्रभाकरसिंह इस लिखावट पर गौर करते रहे इसके बाद मालती से बोले, "इसका आशय यह जान पड़ता है कि इस जगह से दो हाथ सात अंगुल ऊपर और वहाँ से एक बित्ता पाँच अंगुल बाईं तरफ नाप कर दबाने से रास्ता खुल जायगा."

ऐसा ही किया गया. प्रभाकरसिंह ने खंभे की जड़ से दो हाथ सात अंगुल ऊपर नापा और तब उस जगह से बाएं हाथ की तरफ एक बित्ता और पाँच अंगुल नाप कर उस जगह को अंगूठे से दबाया. उन्हें उम्मीद थी कि ऐसा करने से कोई रास्ता प्रकट हो जाएगा परन्तु कुछ भी न हुआ. पुनः नापा और फिर दबाया परन्तु कोई नतीजा न निकला. ताज्जुब के साथ उन्होंने पुनः उस लिखावट को पढ़ा और फिर उद्योग किया मगर नतीजा कुछ न निकला. वे कुछ ताज्जुब और निराशा के साथ अलग हट कर सोचने लगे कि यह क्या मामला है.

इसी समय मालती ने कहा, "ठहरिये जरा मैं तो उद्योग कर के देखूं!" उसने अपने हाथ से उसी तरह नापा और उस जगह को अंगूठे से दबाया. तुरन्त ही एक खटके की आवाज हुई, उस जगह से लोहे का एक छोटा-सा टुकड़ा पीछे हट गया और वहाँ ताली लगाने लायक एक छेद दिखाई पड़ने लगा. मालती ने वही सोने की चाभी उस छेद में डाल घुमाया. एक हलकी आवाज हुई और सामने का कुछ भाग हट कर किवाड़ के पल्ले की तरह एक बगल को घूम गया. अन्दर जाने के

लिये पतली सीढ़ियाँ दिखाई पड़ीं जिन पर खुशी-खुशी आगे-आगे मालती और पीछे-पीछे प्रभाकरसिंह रवाना हुए. इनके भीतर जाते ही वह दरवाजा आप-से-आप इस तरह बन्द हो गया कि कहीं कोई निशान तक बाकी न रहा.

चक्करदार सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मालती बोली, "उस दिन मैं इन्हीं सीढ़ियों की राह नीचे उतरी थी और इस दरवाजे को खोलने के लिए मुझे एक साँप के फन को दबाना पड़ा था. कौन ठिकाना यहाँ से बाहर होते समय फिर हम लोगों को वही कार्रवाई करनी पड़े."

प्रभाकरसिंह यह सुन बोले, "नहीं ऐसा नहीं, हो सकता, क्योंकि तिलिस्मी किताब के कथनानुसार यही बारहदरी हम लोगों को 'रत्न-मंडप' तक पहुँचावेगी."

दोनों आदमी उस बारहदरी के ऊपर पहुँचे. यहाँ के फर्श में लाल रंग के चौकोर पत्थर जड़े हुए थे जिनमें बीच-बीच में जगह-जगह सुफेद पत्थर के कमल भी बने हुए थे. प्रभाकरसिंह ने इधर-उधर देखा और कुछ गिन-गिना कर एक कमल के पास जाकर बोले, "यही कमल मालूम होता है." मालती बोली, "जरूर यही है." जिसे सुन प्रभाकरसिंह ने उसे अपने अंगूठे से दबाया जिसके साथ ही ऊपर की तरफ से एक खटके की आवाज आई. सिर उठा कर देखा तो बारहदरी की छत में एक छेद दिखाई पड़ा जो हाथ भर से कुछ बड़ा ही होगा. प्रभाकरसिंह यह देख बोले, "लो रास्ता तो बन गया, अब ऊपर पहुँचना चाहिए. मैं जमीन पर बैठ जाता हूँ तुम मेरे कन्धे पर खड़ी हो जाओ. मैं खड़ा होकर तुम्हें उस छेद तक पहुँचा दूंगा. तुम वहाँ पहुँच मुझे जरा सहायता देना, मैं ऊपर पहुँच जाऊँगा."

मालती ने कुछ संकोच के साथ कहा, "भला मैं आपके ऊपर पैर कैसे रख सकती हूँ!" जिसे सुन प्रभाकरसिंह बोले, "ओह! यह सब फजूल बातें हैं, जरूरत पड़ने पर सभी कुछ करना पड़ता है!" मगर मालती ने इसे मंजूर न किया. आखिर प्रभाकरसिंह बोले, "अच्छा तो तुम यहाँ आकर खड़ी होओ, मैं तुम्हें उठा कर वहाँ तक पहुँचाये देता हूँ!"

इसमें शक नहीं कि प्रभाकरसिंह के बदन में ताकत भरपूर थी. जिस तरह कोई नौजवान किसी बच्चे को उठा लेता है उसी तरह उन्होंने मालती को दोनों हाथों से पकड़ कर ऊपर उठा दिया. मालती के हाथ उस छेद तक पहुँच गये जहाँ से थोड़े ही उद्योग ने उसे ऊपर पहुँचा दिया. वहाँ पहुँच उसने अपनी चादर

का एक सिरा ऊपर किसी चीज से बाँध बाकी भाग नीचे लटका दिया जिससे बात-की-बात में प्रभाकरसिंह भी ऊपर दिखाई देने लगे.

इस बारहदरी की छत ऊपर की तरफ से महराबदार बनी हुई थी और उसके बीचोबीच में करीब दो हाथ ऊँची एक लाट ऊपर की तरफ को उठ गई थी जिसके सिरे पर किसी धातु की एक उकाब की मूरत बनी हुई थी. प्रभाकरसिंह ने अपने कमर से कमरबन्द खोलते हुए कहा, "लो अब अपने को इस लाट से बाँधो और उकाब की गरदन उमेठो."

दोनों ने अपने को उस लाट के साथ खूब कस कर बाँध लिया और इसके बाद प्रभाकरसिंह ने हाथ ऊँचा कर उस उकाब की गर्दन को जोर से बाईं तरफ को उमेठ दिया. उमेठने के साथ ही उसके मुँह से एक तरह की चीख की आवाज निकली और साथ ही उसके पंख बड़े जोर से हिले. इसी समय प्रभाकरसिंह को मालूम हुआ कि वह बारहदरी धीरे-धीरे घूमने लगी है.

बारहदरी के घूमने की तेजी क्षण-क्षण में बढ़ने लगी, कुछ ही देर बाद वह कुम्हार के चाक की तरह फिरने लग गई. अगर इस समय नीचे से कोई इस बारहदरी को देखता तो जान जाता कि वह लोहे का खंभा जिस पर यह बारहदरी बनी हुई थी नहीं घूम रहा है बल्कि केवल उस बारहदरी के ऊपर वाली लाट ही घूम रही है जिसकी तेजी इतनी ज्यादे थी कि अगर प्रभाकरसिंह और मालती अपने को लाट के साथ बाँध न लिए होते तो जरूर छटक कर दूर जा गिरते और जान से हाथ धोते.

घूमने की तेजी धीरे-धीरे बढ़ने लगी यहाँ तक कि प्रभाकरसिंह और मालती के सर में चक्कर आने लगे और अन्त में दोनों ही बेहोश हो गये.

जिस समय प्रभाकरसिंह होश में आए उन्होंने अपने को एक विचित्र ही जगह में पाया. उन्होंने देखा कि वे एक ऐसे कमरे में हैं जिसमें ऊपर-नीचे अगल-बगल चारों तरफ शीशे जड़े हुए हैं यहाँ तक कि जिसका फर्श भी शीशे ही का है. चारों तरफ कहीं कोई आला-आलमारी, खिड़की-मोखा या दरवाजे का नाम-निशान न था. इसकी छत भी एकदम चिकनी और एक ही बहुत बड़े शीशे के टुकड़े की बनी हुई जान पड़ती थी और चारों तरफ की दीवारें भी शीशे की थीं जिसमें कहीं भी जोड़ या दरार मालूम नहीं पड़ता था. प्रभाकरसिंह ताज्जुब के साथ देखने लगे कि वह उस विचित्र कमरे में क्योंकर आ पहुँचे, मगर उसी समय उनका ध्यान मालती

पर गया जो उनके पास ही बेहोश पड़ी थी मगर अब कुछ-कुछ चैतन्य हो रही थी. प्रभाकरसिंह की कोशिश से वह भी शीघ्र ही होश में आकर उठ बैठी और ताज्जुब के साथ अपने चारों तरफ देखने लगी.

कुछ देर तक वे चुपचाप रहे क्योंकि घूमने वाली बारहदरी की बदौलत दोनों ही के सिर में बेहिसाब चक्कर अभी तक आ रहे थे मगर जब धीरे-धीरे यह बात दूर हुई तो प्रभाकरसिंह ने मालती से कहा, "मालूम होता है कि हम लोग उसी 'शीशमहल' में आ पहुँचे हैं जिसका जिक्र तिलिस्मी किताब में है."

मालती ने चारों तरफ ताज्जुब से देखते हुए कहा, "जी हाँ, यहाँ हम लोगों को अपने उद्योग से आगे जाने के लिए रास्ता पैदा करना पड़ेगा और बाहर होकर उस शेर पर काबू करना पड़ेगा जो हमें रत्न-मण्डप के दरवाजे तक पहुँचावेगा. मगर ताज्जुब की बात यह है कि यहाँ इस बात का भी पता नहीं लग रहा है कि हम इस जगह पहुँचे किस तरह ? चारों तरफ शीशा है जो बिल्कुल एक टुकड़ा जान पड़ता है, कहीं भी कोई जोड़ या निशान नहीं है."

प्रभा० : यही तो मैं सोच रहा हूँ. आखिर हम लोग यहाँ आए होंगे किसी रास्ते ही से तो ? और जब उस घूमने वाली बारहदरी ने यहाँ तक हमें पहुँचाने के लिए रास्ता पैदा कर लिया तो हम लोग भी जरूर जाने के लिए रास्ता पैदा कर सकते हैं. अच्छा अब कोशिश करनी चाहिए, बैठे रहने से काम न चलेगा.

प्रभाकरसिंह उठे और इस फिक्र में चारों तरफ घूमने लगे कि शायद कहीं कोई दरवाजा, छेद या सूराख या पेंच-पुर्जा ऐसा दिख जाय जिसके जरिए इस कमरे से बाहर हुआ जा सके. मालती ने भी उनका साथ दिया और दोनों आदमी खूब गौर से सब तरफ देखते हुए उस कमरे-भर में घूमने लगे. मगर एक-एक चप्पा जमीन पर खूब बारीकी से देख जाने पर भी कहीं ऐसी जगह न पाई गई जहाँ यह सन्देह भी किया जा सकता कि यहाँ से आगे निकल जाने का कोई रास्ता है अथवा यहाँ पर उद्योग कोई रास्ता पैदा कर सकेगा. आखिर हारकर दोनों आदमी एक जगह खड़े हो गए और बातचीत करने लगे.

मालती : यहाँ तो कहीं कोई रास्ता दिखाई नहीं पड़ता !

प्रभा० : बेशक, मगर रास्ता है भी जरूर, नहीं तो उस बारहदरी से यहाँ तक हम लोग पहुँचते ही क्योंकर ?

मालती : सो तो हई है ! और फिर तिलिस्मी किताब भी साफ कह रही

है कि इस जगह से आगे निकल जाने का रास्ता हम लोगों को खुद पैदा कर लेना होगा.

प्रभा० : एक बात है, अगर इस कमरे में साफ हवा के आने की कोई राह न होती तो यहाँ की हवा एकदम खराब हो जाती. मगर वैसा नहीं है और इसीसे विश्वास करना पड़ता है कि यहाँ साफ हवा के आने-जाने के लिए कोई-न-कोई रास्ता जरूर बना हुआ है.

मालती : बेशक यह बात तो आपने ठीक सोची, मेरा ख्याल है कि अगर कमरे के छत की हम लोग जाँच कर सकें तो वहाँ कोई-न-कोई सूराख जरूर मिलेगा !

प्रभा० : इसकी छत कितनी ऊँची है इसका तो कुछ पता ही नहीं लगता, सब तरफ शीशा ही शीशा होने से इतनी परछाइयाँ चारों तरफ पड़ रही हैं कि कुछ ठीक मालूम नहीं पड़ता.

प्रभाकरसिंह इस कमरे के छत की ऊँचाई जाँचने का उद्योग करने लगे. उन्होंने अपने दुपट्टे को लुपेट लुपाट कर उसका एक गेंद सा बनाया और छत की तरफ फेंका. उनके सिर से लगभग दो हाथ की ऊँचाई तक जाकर ही वह छत के साथ टकरा गया, मगर ताज्जुब की बात यह थी कि छत से टकरा कर वह दुपट्टा नीचे की तरफ वापस नहीं लौटा बल्कि उसी जगह चिपका रह गया.

प्रभाकरसिंह के साथ ही साथ मालती ने भी इस बात को ताज्जुब के साथ देखा और कहा, "यह क्या मामला है ? क्या इस कमरे की छत में भी कोई विशेषता है ?" प्रभाकरसिंह ने अपना कमरबन्द जो वहीं पड़ा था उठाया और उसे भी छत की तरफ फेंका. दुपट्टे की तरह वह भी जाकर चिपक गया. दोनों बड़े आश्चर्य और कौतूहल के साथ सोचने लगे कि आखिर यह क्या बात है मगर देर तक ख्याल दौड़ाने पर भी सिवाय इसके और कुछ न सोच सके कि इसकी छत में लासे की तरह कोई चीज लगी है जो चीजों को चिपका रखती है और या फिर उस में चुम्बक की तरह का ऐसा गुण है जो हर एक चीज को खींच रखने की सामर्थ्य रखता है. आखिर प्रभाकरसिंह से न रहा गया, उन्होंने अपने दोनों हाथों की हथेलियाँ ऊपर की तरफ कीं और जोर से ऊपर को उछले. उनके हाथ उस कमरे की छत से जा लड़े और ताज्जुब की बात थी कि उस दुपट्टे और कमरबन्द की तरह उनके हाथ भी इस तरह वहाँ चिपक गये कि वे लौट कर नीचे

न गिरे बल्कि उसी तरह हाथों के जरिए छत के साथ झूलने लगे.

प्रभाकरसिंह के मुँह से ताज्जुब की एक आवाज निकल गई और वे अपने हाथ उस छत से छुड़ाने के लिए उद्योग करने लगे. उन्होंने झटके दिए, नीचे को कूदने के लिए जोर लगाया. हाथों को ऐंठा और जोर लगा कर छत से छुड़ा लेना चाहा, मगर उनकी ये सभी कोशिशें बेकार गईं. उनके हाथ उस तिलिस्मी छत के साथ कुछ इस तरह चिपक गये थे कि जान पड़ता था मानो अब वहाँ से छूटेंगे ही नहीं. वे पाँव फटकारने और नीचे को झटके मारने लगे मगर सब बेकार हुआ.

केवल यही नहीं, मालती और प्रभाकरसिंह को और भी ताज्जुब हुआ जब उन्होंने देखा कि छत धीरे-धीरे ऊँची हो रही है. प्रभाकरसिंह के पैर जो कमरे के फर्श से पहिले कोई दो हाथ ऊँचे पर थे धीरे-धीरे वे तीन हाथ ऊँचे हुए, चार हाथ हुए, पाँच हाथ हुए और इसी तरह पर ऊँचे होते-होते देखते ही देखते बहुत ही ज्यादा ऊँचाई पर जा पहुँचे.

वे ही प्रभाकरसिंह जो पहिले हाथ छुड़ाने का उद्योग कर रहे थे अब यह सोच कर डरने लगे कि अगर इस समय उस छत ने उनके हाथ छोड़ दिये तो इतने ऊँचे से गिर कर उनकी हड्डी-पसली टूट जायगी. वे डर और आशंका के साथ अपनी इस भयानक हालत को बेबसी के साथ देखने लगे और उनसे बहुत नीचे खड़ी मालती भी घबराहट और परेशानी के साथ उनकी इस खतरनाक अवस्था को देखने लगी.

8

श्यामा के मकान से निकल कर भूतनाथ सीधे अपने मकान अर्थात् नानक की माँ जहाँ रहती थी उधर को रवाना हुआ.

भूतनाथ ने रामदेई के लिए काशी में जो मकान ठीक किया हुआ था उसमें वह बहुत ही इज्जत और शान के साथ रहती थी. खूब आलीशान मकान, जरूरत बल्कि ऐश की सभी चीजों से अच्छी तरह सजा हुआ था. दरवाजे पर नौकर-चाकर और पहरेदारों तथा घर में लौंडियों की भी कमी न थी और सरसरी निगाह से देखने पर यही जान पड़ता कि यह किसी अमीर या ओहदेदार का मकान है. इतना जरूर था कि वह मकान कुछ गली के अन्दर पड़ता था, मगर यह भी भूतनाथ की

इच्छानुसार ही था जो अपना यहाँ आना-जाना बहुत गुप्त रखता था. साधारण रीति से वहाँ के अड़ोसी-पड़ोसी यही जानते थे कि वह किसी रियासत का कोई ऊँचा ओहदेदार है और नौकरी से छुट्टी लेकर कभी-कभी आ जाता है. इस बात का पता कि वह ऐयार है और ऐयार भी कौन? भयानक और नामी ऐयार गदाधरसिंह, बहुत कम आदमियों को मालूम था. भूतनाथ का लड़का नानक इसी मकान में रहा करता था और यहाँ उसकी पढ़ाई-लिखाई और हिफाजत का बहुत अच्छा इन्तजाम था. जब कभी रामदेई को भूतनाथ अपने साथ लामाघाटी या किसी दूसरी जगह ले जाता था तो नानक उस समय अकेला ही इस मकान में रहता था क्योंकि एक तो नानक होशियार हो गया था दूसरे भूतनाथ अपने असली भेदों को उस पर प्रकट होने देना नहीं चाहता था.

श्यामा के मकान से निकल भूतनाथ इस मकान में पहुँचा जहाँ रामदेई राह देख रही थी. उसने इसे बड़ी खातिरदारी के साथ लिया और सफर का हालचाल तथा इतने दिन गायब रहने का सबब पूछा जिसके जवाब में भूतनाथ ने कोई बनावटी बात गढ़ कर सुना दी और यह भी कहा कि किसी जरूरी काम से रोहतासगढ़ जा रहा है सिर्फ उससे मिलने ही यहाँ आया है.

रात के समय जब भूतनाथ भोजन इत्यादि से निवृत्त होकर लेटा तो रामदेई उसके पाँव दबाने लगी, साथ ही साथ दोनों में बातचीत भी होने लगी.

राम० : आपने उस विषय में क्या किया जिसके लिए वादा किया था कि काशी आऊँगा तो जरूर पूरा करूँगा.

भूत० : वह क्या ?

राम० : वही तिलिस्मी किताब ! आपने कहा था कि इस बार वह किताब लाकर तिलिस्म की सैर जरूर करा देंगे.

भूत० : ठीक है, मुझे याद आया, मैं वादा कर चुका हूँ तो उस काम को पूरा तो करूँगा ही, मगर एक बार फिर मैं तुमसे कहता हूं कि तुम इस फेर में मत पड़ो. तिलिस्मी मामलों में दखल देना हमारे-तुम्हारे ऐसे मामूली आदमियों का काम नहीं है. वह बड़ी भयानक जगह होती है और वहाँ कदम-कदम पर जान जोखिम रहती है. अभी इसी दफे मैं जरा-सा चूक गया और ऐसी तवालत में पड़ गया कि बस जान जाने में कुछ ही कसर रह गई थी !

राम० : (चौंक कर) सो क्या ! आप किसी मुसीबत में पड़ गये थे ?

भूत० : हाँ, कुछ पूछो नहीं, जमानिया से यहाँ आने के रास्ते ही में एक कूआँ पड़ता है जिस पर मैं अक्सर सुस्ताने और जल पीने के लिए रुक जाया करता हूँ. मुझे कुछ भी पता न था कि उस कूएँ को तिलिस्म से कोई सरोकार है पर इस बार मालूम हो गया कि बात ऐसी ही है.

राम० : (आश्चर्य से) क्या हुआ जरा मैं तो सुनूं ?

भूतनाथ ने बात टालनी चाही परन्तु रामदेई ने इतनी जिद्द की कि कुछ उलट-फेर के साथ उसने इस तरह वह हाल सुनाना शुरू किया:—

भूत० : यहाँ से जमानिया के रास्ते पर वह कूआँ बहुत ही बड़ा और आलीशान है और उसमें अथाह पानी है. पानी मीठा भी बहुत है और आस-पास पेड़ों की घनी छाया होने के कारण मुसाफिर अक्सर खास कर गर्मियों में कुछ घण्टे वहाँ काटा करते हैं जिससे कभी-कभी अच्छी चहल-पहल हो जाती है. इस बार मैं उस जगह पहुँचा तो रात हो गई थी. मेरी तबीयत हुई कि रात इसी कूएँ पर बिताऊँ और खतरनाक जंगल को सुबह होने पर काटूं. यही सोच मैं उस कूएँ की तरफ बढ़ा मगर कुछ दूर ही था कि गाने की आवाज सुन पड़ी और देखा तो मालूम हुआ कि कूएँ की जगत पर एक औरत बैठी गा रही है.

राम० : (ताज्जुब से) औरत !

भूत० : हाँ.

राम० : (कौतूहल से) अच्छा तब ?

भूत० : मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ कि रात के वक्त इस सूनसान भयानक जंगल में अकेले बैठी बेडर गाने वाली वह कौन है, और उसे देखने के विचार से मैं कुछ नजदीक होकर एक पेड़ की आड़ में हो गया. यकायक वह अपनी जगह से उठी और कूएँ के पास जा अन्दर झाँक कर बोली, "कूपदेव, मुझे पानी तो पिलाओ !!" इतना कहने के साथ ही उस कूएँ के अन्दर से एक हाथ निकला जिस पर पानी से भरा हुआ एक चाँदी का कटोरा रक्खा था.

राम० : हैं, यह आप क्या कह रहे हैं !!

भूत० : मैं बहुत ठीक कह रहा हूँ. उस औरत का हुक्म पाते ही उस कूएं में से एक हाथ पानी लिए हुए निकल पड़ा.

राम० : बड़े ताज्जुब की बात है ! अच्छा तब ?

भूत० : पानी पीकर वह औरत फिर अपने ठिकाने आ बैठी और गाने लगी.

मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ, यहाँ तक कि मैं अपने को रोक न सका और उससे कुछ पूछने के इरादे से उसके पास जा पहुंचा.

राम० : (मुस्करा कर) सच कहिए, क्या वह औरत खूबसूरत थी ?

भूत० : (हँस कर) हाँ, बड़ी ही खूबसूरत और नौजवान भी ! यही कोई पैंतालीस बरस की !

राम० : ओह, अच्छा तब क्या हुआ ?

भूत० : मगर मुझे पास आते देखते ही वह उठ खड़ी हुई और चिल्ला कर कूएँ में कूद गई.

राम० : हैं ! फिर !!

भूत० : मुझे यह देख और ताज्जुब हुआ. मैं कूएँ में झाँक कर देखने लगा कि यह औरत क्या अपनी जान देने के लिए उसमें कूद गई है या उसके अन्दर कहीं कोई सुरंग या छिपी जगह है, मगर मेरे ताज्जुब का कोई हद्द न रहा जब मैंने देखा कि कूआँ सूखा पड़ा है और नीचे जमीन तक दिखाई पड़ रही है. मुझसे यह देख रहा न गया और मैं कमन्द लगा कर कूएँ में उतर गया. भीतर उतर के देखता क्या हूँ कि सतह के पास इधर-उधर कितनी ही सुरंगें बनी हुई हैं.

राम० : (आश्चर्य से) कूएँ में सुरंगें !!

भूत० : हाँ, और मैं उसमें से एक के अन्दर घुस गया. घुसने के साथ ही पीछे का दरवाजा बन्द हो गया और मैं उस जगह कैद हो गया.

राम० : राम राम !! तब क्या हुआ ? आप कैसे छूटे ?

भूत० : मैं आगे की तरफ बढ़ा और बहुत दूर जाने के बाद एक मकान में पहुँचा. वहाँ एक बाबाजी से मुलाकात हुई, उन्होंने बड़ी कृपा कर मुझे उस जगह से बाहर निकाला नहीं तो कोई उम्मीद जीते बाहर आने की न थी.

राम० : ओफ ओह, यह तो बड़े ताज्जुब की बात आपने सुनाई, मैं तो सुन कर डर गई ! मगर क्या इससे आप समझते हैं कि वह कूआँ भी कोई तिलिस्मी है ?

भूत० : यदि तिलिस्म नहीं तो तिलिस्म से कोई-न-कोई सरोकार तो उससे जरूर ही है क्योंकि बाहर निकलने के बाद पुनः लौट कर जब मैं वहाँ पहुँचा तो देखा फिर पहिले की तरह अथाह पानी भरा है. आखिर मैं पुनः कभी उस कूएँ पर न जाने की कसम खाके वहाँ से हटा और सीधा तुम्हारे पास चला आ रहा हूँ.

भूतनाथ ने बहुत कुछ उलट-फेर के साथ जो किस्सा रामदेई को सुनाया उससे उसे यकीन था कि तिलिस्म देखने का उसका विचार बदल जायगा मगर असर इसका उलटा ही हुआ. रामदेई के मन में तिलिस्म देखने की अभिलाषा और भी जाग उठी और उसने निश्चय कर लिया कि चाहे जो हो एक बार तिलिस्म की सैर जरूर ही करूँगी. वह बोली, "राजा बीरेन्द्रसिंह के पास जो किताब है वह भी तो किसी तिलिस्म का ही हाल-चाल बताती है ?"

भूत० : सुनने में तो यही आता है कि राजा साहब को चुनार का तिलिस्म तोड़ने पर यह किताब हाथ लगी थी और उसमें किसी दूसरे बहुत ही भयानक और विचित्र तिलिस्म का हाल लिखा हुआ है.

रामदेई : ऐसा ? तब तो आप मुझे जरूर ही एक बार उसे दिखा दीजिए ! !

भूत० : अरे ! अभी न मैंने तुम्हें सुनाया कि तिलिस्म कैसी भयानक जगह होती है और फिर तुम वही बात कहती हो ?

राम० : (जिद्द के साथ) नहीं नहीं, आपकी बातें सुन कर तो मेरा शौक और भी बढ़ गया ! अब आप जैसे भी हो सके मुझे तिलिस्म दिखा ही दीजिए, मैं बिना देखे न मानूंगी ! !

भूतनाथ ने तरह-तरह की बातें कह कर रामदेई का मन इस तरफ से हटाना चाहा मगर वह तो एकदम ही मचल गई और बच्चों की तरह जिद्द कर बैठी कि चाहे जो भी हो तिलिस्म देखूँगी ही. आखिर जब उसने रोना शुरू कर दिया तो भूतनाथ अपने को सम्हाल न सका क्योंकि इसमें शक नहीं कि वह रामदेई को बहुत ही ज्यादा प्यार करता था और कोई भी आदमी, खास करके जो अपने को बहादुर लगाता हो अपनी प्रेयसी के आँसू बर्दाश्त नहीं कर सकता, फिर भूतनाथ तो अपने को सिर्फ बहादुर ही नहीं परले सिरे का ऐयार भी मानता था. उसने रामदेई को समझाने की कोशिश की पर उसने झुँझला कर भूतनाथ का हाथ झटकते हुए कहा, "जाइये हटिये ! मैं समझ गई कि आप कितने बहादुर और कैसे नामी ऐयार हैं ! अपने मुँह मियाँ मिट्ठू तो सभी बना करते हैं, लेकिन कुछ करके दिखाने वाला मुश्किल निकलता है. आपकी ऐयारी की हद्द बस मैं जान गई. जाइए, जाइए, औरतों के हाथ की मार खाइये और दारोगा की गालियाँ सुनिये. मेरी भला आप क्यों सुनेंगे ? मैंने गलती की जो आपकी इस प्रतिज्ञा पर विश्वास किया कि 'मैं जरूर वह किताब लाकर तुम्हें तिलिस्म की सैर कराऊँगा'. मैं जान गई कि

राजा बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों के डर के मारे आप वह किताब नहीं लाते !!" इतना सुनते ही भूतनाथ तैश में आ गया क्योंकि वह सब कुछ बर्दाश्त कर सकता था मगर अपनी ऐयारी में बट्टा या बहादुरी में कलंक लगना नहीं बर्दाश्त कर सकता था. रामदेई की यह बात सुन वह तमक उठा और चमक कर बोला, " जब तुम यह समझती हो कि मैं डर के सबब से या बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का खौफ खाकर वह किताब नहीं ला रहा हूँ तो लो, अब जैसे होगा वैसे मैं उसे तुम्हारे हाथ में देकर दम लूँगा."

रामदेई ने खुशी के भाव को छिपाते हुए कहा, "जाइए-जाइए, आपकी बात पर अब मैं यकीन नहीं करती ! आप रोज ऐसे ही झूठे वादे करके मुझे फुसला दिया करते हैं !"

भूत० : नहीं-नहीं, मैं सच कहता हूँ कि वह किताब तुम्हारे हाथ में लाकर दे ही दूँगा और उसके बाद अगर तुम्हारी तबीयत तिलिस्म की सैर करने की हुई तो वह भी करा दूँगा !!

रामदेई : (खुशी के साथ) क्या तुम सच कहते हो ?

भूत० : हाँ, तुम्हारी कसम सच कहता हूँ.

रामदेई : (नखरे से) मेरी कसम क्यों खाते हो, क्या मैं कुछ फजूल की आई हुई हूँ ! अगर सचमुच ही अपना वादा पूरा करना है तो अपना खंजर हाथ में लेकर कसम खाओ तब मुझे विश्वास हो,—नहीं तो मैं आपकी कसमों पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं करने की ! आप दुर्गा की शपथ खाइये और यह भी कि कितने दिन के अन्दर यह काम करेंगे ?

भूत० : तुम अब मुझसे दुर्गा की कसम तो न खिलवाओ, पर मैं तुमसे कहता न हूँ कि इस बार जरूर अपना वादा पूरा करूँगा.

राम० : (सिर हिला कर) मैं मानती ही नहीं, यह आप उससे कहिये जिसे आप पर विश्वास हो !!

आखिर रामदेई की जिद्द से लाचार भूतनाथ को उसी समय उसके कहे मुताबिक खंजर हाथ में लेकर प्रतिज्ञा करनी पड़ी कि वह एक महीने के अन्दर बीरेन्द्रसिंह के महल से तिलिस्मी किताब (रिक्तगन्थ) लाकर रामदेई को तिलिस्म की सैर करा देगा. रामदेई का चेहरा प्रसन्नता से खिल गया और इसके बाद दोनों में दूसरे तरह की बातें होने लगीं.

दूसरे दिन दो घंटा सूरज डूबने के बाद भूतनाथ अपने घर से बाहर निकला और श्यामा के मकान की तरफ रवाना हुआ, मगर इस समय इतने तरह के खयालात उसके मन में चल रहे थे और उनमें वह इस कदर डूबा हुआ था कि वह किधर जा रहा है इसकी भी उसे होश न थी. फिर भी वह ठीक रास्ते पर था और थोड़ी देर बाद जब उसने गौर के साथ चारों तरफ निगाह की तो अपने को उस तिरमुहानी पर पाया जहाँ से एक पतली गली सीधी श्यामा के मकान के पास निकल गई थी.

भूतनाथ उस गली में घुसा मगर मुश्किल से दस ही बारह कदम रक्खे होंगे कि इसे मालूम हो गया कि वह गली में अकेला नहीं है वल्कि उसके आगे-आगे दो आदमी और भी जा रहे हैं. चूँकि इस गली में दिन के वक्त भी मुसाफिरों और चलने वालों का अभाव ही रहता था, क्योंकि इसमें मकान ज्यादा न थे, इसलिए भूतनाथ कुछ कौतूहल के साथ सोचने लगा कि ये लोग कौन हैं और किस जगह या किस आदमी की खोज में हैं. मगर उसको बहुत ताज्जुब हुआ जब उसने देखा कि ये आदमी ठीक उसी मकान के नीचे जाकर खड़े हो गये जो श्यामा का था और जिसमें वह पिछले कई दिन श्यामा के साथ काट चुका था. तुरन्त ही भूतनाथ के शक्की दिमाग में तरह-तरह के खयाल दौड़ने लगे और वह आगे बढ़ कर उन लोगों के पास पहुँचने के बजाय पीछे हट कर एक तरफ आड़ में हो गया और गौर से इन दोनों की कैफियत देखने लगा. जहाँ पर वह था वहाँ से उन दोनों की बातचीत तो सुनाई नहीं पड़ सकती थी मगर वे लोग जो कुछ करते वह साफ दिखाई पड़ सकता था क्योंकि एक खुली खिड़की की राह आती हुई रोशनी उन दोनों ही पर पड़ रही थी.

भूतनाथ के सामने ही उन आदमियों में से एक ने ऊपर एक खिड़की की तरफ इशारा करके कुछ बताया और दूसरे ने उसे सुन अपने जेब से एक सीटी निकाल कर होंठों से लगाई मगर बजाने न पाया था कि पहिले आदमी ने हाथ बढ़ा कर सीटी उसके मुँह पर से हटा दी और कान में कुछ कह कर अपने हाथ की कोई चीज उसे दिखलाई. दोनों में कुछ बातें हुईं और तब वह चीज श्यामा वाले मकान के दरवाजे के अन्दर डाल वे दोनों पीछे की तरफ लौट पड़े.

भूतनाथ को उनकी कार्रवाई पर बहुत ताज्जुब हुआ और वह इस फिक्र में पड़ गया कि इस बात का पता लगाये कि ये दोनों आदमी कौन हैं और श्यामा के

मकान पर क्या करने आये या क्या कर चले हैं, अस्तु जैसे ही वे दोनों उसके बगल से गुजरे उसने आगे बढ़ कर एक-एक कलाई उन दोनों ही की पकड़ ली और डपट के पूछा, "तुम लोग कौन हो और उस दरवाजे पर खड़े क्या कर रहे थे?"

यकायक भूतनाथ को सामने देख एक दफे तो वे घबड़ा गये मगर फौरन ही अपने पर काबू कर एक ने कड़े स्वर से कहा, "हम लोग कोई हों तुम्हें इससे क्या मतलब! तुम हमसे जवाब तलब करने वाले कौन?"

भूतनाथ ने कड़े स्वर में कहा, "मेरा नाम गदाधरसिंह है और मैं तुम दोनों का असली हाल जाने बिना किसी तरह तुम्हें छोड़ नहीं सकता."

भूतनाथ को उम्मीद थी कि उसका नाम सुनते ही ये दोनों डर जायेंगे और नर्म पड़ कर सब हाल सुना देंगे मगर उन पर इसका असर उलटा ही हुआ. इसकी बात सुनते ही वे दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े और एक ने कहा, "ओहो, गदाधरसिंह तुम्हीं हो! तब तो हम लोग बड़ी खुशी से अपना हाल सुनावेंगे, क्योंकि तुम्हीं को खोजते हुए तो यहाँ तक आए ही थे!"

भूत० : (कुछ ताज्जुब से) अच्छा तो बताओ तुम कौन हो?

एक : अच्छा सुनो, लेकिन डरना नहीं, हिम्मत के साथ सुनना, मैं अपना परिचय तुम्हें देता हूँ. मैं वह अँधेरी रात हूँ जिसमें भयानक काम किये जाते हैं, मैं वह जहर से बुझी कटार हूँ जिससे रिश्तेदारों का खून किया जाता है, मैं वह भयानक दगा हूँ जिसकी मदद से दोस्त मौत के घाट उतारे जाते हैं और मैं वह काला साँप हूँ···

दूसरा : (पहिले को रोककर) अब मुझे भी अपना कुछ परिचय दे लेने दो! सुनो गदाधरसिंह! मैं वह जमींदोज कोठरी हूँ जिसमें दोस्त और रिश्तेदार मार डालने के बाद दफना दिये जाते हैं, मैं वह दौलत हूँ जो ऐसे दुष्कर्म करके मिलती है, मैं वह हीरे का कंठा हूँ जो बेकसूरों की जान लेने पर···

पहिला : (दूसरे को रोक कर) और मैं वह दिल का दाग हूँ जो इन कामों का फल है, मैं वह नरक की आग हूँ जो इन दुष्कर्मों का इनाम है, और मैं वह काली परछाई हूँ जो ऐसा काम करने वालों का साथ घड़ी भर के लिए भी नहीं छोड़ती.

भूत० : (ताज्जुब के साथ, जिसके साथ कुछ घबराहट और बेचैनी भी मिली हुई मालूम होती थी) आखिर इन पहेलियों का मतलब क्या है? तुम लोग साफ क्यों नहीं बताते कि तुम कौन हो!

दूसरा : क्या तुम्हें अभी तक नहीं मालूम हुआ कि हम लोग कौन हैं ! अच्छा तो मैं और भी साफ तौर पर परिचय देता हूँ. क्या तुम्हें उस जगह की याद है जहाँ भयानक नरपिशाच की मूरत बैठी हुई थी ? क्या तुम्हें वह जहर याद है जिसने बेकसूर औरत को मुर्दा कर दिया था ? क्या तुम्हें वह चिल्लाहट याद है जो मासूम औरत के लाचार गले से निकली थी ? और क्या तुम्हें वह गुप्त रास्ता याद है जो इस खून के बाद हमेशा के लिए बन्द कर दिया गया ?

भूत० : (जिसकी आवाज से साफ जान पड़ता था कि घबड़ा गया है) मेरी कुछ समझ में नहीं आता कि यह क्या बेसिर-पैर की बातें तुम कर रहे हो और इनके कहने का नतीजा क्या है ?

पहिला : बेसिर-पैर की बातें ? क्या वह तलवार फजूल थी जिससे उस बेचारी की गरदन काटी गई ? क्या वह हीरे का कंठा फजूल था जिसे यह काम करके तुमने पाया. क्या वे कई लाख के तोड़े फजूल थे जो रवाना होते वक्त तुम्हारी सवारी के साथ कर दिये थे ? या क्या वह अँगूठी फजूल थी जिसका नग किसी मरने वाले के खून की तरह लाल था.

भूत० : (जिसकी बेचैनी और बदहवासी बढ़ती जा रही थी) मालूम होता है कि तुम लोग किसी गुप्त घटना की तरफ इशारा कर रहे हो ! मगर खैर, मैं यह सब दास्तान सुनना नहीं चाहता बल्कि तुम्हारे नाम जानना और सूरतें देखना चाहता हूँ.

दूसरा : अच्छा पहिले मैं अपना नाम सुनाता हूँ, मगर देखो जरा सम्हले रहना, घबड़ा न जाना ! मेरा नाम सेठ चंचलदास है ! हैं, यह तुम्हारी क्या हालत हो रही है ! तुम काँप क्यों रहे हो ?

पहिला : और मेरा नाम सुनोगे ? मुझे लोग कहते हैं···

भूतनाथ की तरफ झुक कर धीरे से उस आदमी ने न-जाने क्या कह दिया कि भूतनाथ एकदम ही चिहुंक पड़ा, दूसरे ही क्षण उसकी यह हालत हो गई कि काटो तो बदन से लहू न निकले. एकदम सकते की-सी हालत में खड़ा वह नीचा सिर किए न-जाने क्या सोचने लगा.

वे दोनों आदमी उसकी यह हालत देख मुस्कुराये और कुछ देर चुप रहने बाद बोले—

एक : क्यों गदाधरसिंह, तुम चुप क्यों हो गए ? क्या कुछ सोच रहे हो ?

दूसरा : या किसी गुजरे हुए जमाने की याद ने तुम्हारा सिर नीचा कर दिया है.

भूतनाथ ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, "तुम लोग चाहे कोई भी हो मगर इसमें शक नहीं कि वह भयानक भेद जिसे मैं बरसों से अपने दिल के अन्दर छिपाए हुए था किसी तरह पर तुम लोगों को मालूम हो गया है. लेकिन खैर, गदाधरसिंह मुर्दा नहीं हो गया है. अभी उसमें अपने दुश्मनों से बदला लेने की ताकत है. अभी भी उसके हाथ मजबूत हैं, अभी भी उसमें तुम लोगों को अपने काबू में कर लेने की ताकत है. (डपट कर) सच बताओ कि तुम लोग कौन हो और यह भेद तुम पर कैसे प्रकट हुआ ?"

एक : (हँस कर) हम इतना कह गये और तुम यह भी जान न सके कि हम कौन हैं ! अच्छा मैं अपना और भी कुछ परिचय तुम्हें देता हूँ. भयानक रात एकदम काले बादलों से ढंकी हुई थी जिस समय वह सांढ़नी सवार उस बेचारी औरत को लेकर...

भूत० : (डरता हुआ मगर डाँट कर) चुप रहो, व्यर्थ की बकवाद न करो, तुम अपना असली नाम बताओ और सूरत मुझे दिखाओ, ठहरो मैं रोशनी करता हूँ.

दूसरा : तुम तकलीफ न करो, हम लोग खुद ही अपनी शक्ल तुम्हें दिखाया चाहते हैं ताकि तुम्हें अपने पिछले पाप याद आ जायं और मरने के पहिले तुम जान जाओ कि बुरे कर्मों का फल सभी को भोगना पड़ता है.

कहते हुए उस आदमी ने अपने कपड़ों के अन्दर हाथ डाला. भूतनाथ चौकन्ना हुआ कि शायद वह कोई हथियार निकाल कर उस पर वार करे और इसलिए उसका भी हाथ अपने खञ्जर पर गया, मगर ऐसा न हुआ. उस आदमी ने अपनी कमर से सामान निकाल कर एक मोमबत्ती बाली जिसकी काँपती हुई रोशनी उनके चेहरों पर पड़ी जिन पर नकाबें पड़ी हुई थीं. उन दोनों ने भूतनाथ को कोई सवाल करने का मौका न दिया. रोशनी होने के साथ ही एक ने अपने चेहरे की नकाब हटाई और भूतनाथ से कहा, "लो पहिले मेरी सूरत देखो !"

भूतनाथ ने ताज्जुब और गौर की निगाह उसके चेहरे पर डाली और इसके साथ ही झिझक कर दो कदम पीछे हट गया. टूटे-फूटे रूप में ये शब्द उसके मुंह से निकले, 'हैं ! तुम ! यहाँ ! तब क्या सचमुच ही वह गुप्त भेद प्रकट हो गया !

नहीं नहीं, जरूर मेरी आँखें मुझे धोखा दे रही हैं ! तुम्हें मरे बरसों हो गया ! तुम यहाँ कैसे आ सकते हो ! !" भूतनाथ ने दोनों हाथों से अपनी आँखें बन्द कर लीं और पीछे हट कर दीवार के साथ लग गया. उसका चेहरा पीला पड़ गया था, बदन काँप रहा था और वह लम्बी साँसें ले रहा था. उसकी हालत देख उन दोनों आदमियों ने एक-दूसरे की तरफ देख इशारे में कुछ बात की और तब वह दूसरा आदमी बोला, "लो होशियार हो जाओ, अब मैं अपनी सूरत दिखाता हूँ."

भूतनाथ ने अपने काँपते हुए हाथों को हिला कर कहा, "नहीं-नहीं, अब मैं कोई सूरत देखना नहीं चाहता ! मैं समझ गया कि तुम कौन हो !" परन्तु वह आदमी बोला, "नहीं सो नहीं होगा, जब तुमने मेरे साथी की सूरत देखी है तो मेरी भी देखनी होगी ! लो सम्भलो !"

कह कर उसने भी अपने चेहरे पर की नकाब अलग कर दी. उस पहिले आदमी की सूरत ने तो भूतनाथ को बदहवास कर ही दिया था अब इस दूसरी शक्ल ने उसके रहे-सहे होशहवास भी गुम कर दिए. घबराहट में भरे हुए ये दो-चार शब्द उसके मुँह से निकले—"हैं ! तुम भी जिन्दा हो ? तब···क्या सचमुच··· मेरी···ओफ ! अब मैं कहीं का···हाय···." और तब बेहोश होकर उसी जगह गिर गया.

9

अर्जुनसिंह को अपने मकान में छोड़ इन्द्रदेव एक तेज घोड़े पर सवार होकर लोहगढ़ी की तरफ रवाना हुए. संध्या होने में कुछ ही देर रह गई थी जब वे वहाँ पहुँचे और घोड़े को पेड़ों की एक झुरमुट में बाँधने के बाद लोहगढ़ी की तरफ बढ़े, टीले पर पहुँच मामूली तर्कीब से रास्ता खोला और इमारत के अन्दर चले.

शीघ्र ही इन्द्रदेव उस बीच वाले लोहे के बने मकान के पास जा पहुँचे जिसके कमरे और कोठरियों की छानबीन करने पर उन्हें यह निश्चय हो गया कि प्रभाकरसिंह या सर्यू यहाँ नहीं हैं, अस्तु अब वे उस सुरंग में घुसे जहाँ से तिलिस्म के अन्दर अथवा उस घाटी में जाने का रास्ता था जिसका हाल हम ऊपर कई जगह लिख आये हैं. हम नहीं कह सकते कि ऐसा करने से उनका असल अभिप्राय क्या था क्योंकि इतना तो वे बखूबी समझते ही थे कि प्रभाकरसिंह लोहगढ़ी के तिलिस्म का

हाल बिल्कुल नहीं जानते और इसलिए सर्यू को लेकर उनके तिलिस्म के अन्दर चले जाने की सम्भावना बहुत ही कम है.

पहिले के सब दरवाजे तो मामूली तरह पर खुलते चले गये मगर जब इन्द्रदेव आखिरी दरवाजे पर पहुँचे जिसके खुलने से तिलिस्मी घाटी सामने दिखाई पड़ती थी तो वह दरवाजा मामूली तरकीब करने से न खुला. ताज्जुब के साथ पुनः उद्योग किया मगर फिर भी जब रास्ता न खुला तो इन्द्रदेव पीछे हट ताज्जुब के साथ सोचने लगे कि यह क्या मामला है और दरवाजा क्यों नहीं खुल रहा है.

बहुत कुछ सोचा मगर इसके सिवाय और कुछ समझ में न आया कि किसी ने भीतर से कोई तरकीब कर दी है जिससे दरवाजा नहीं खुलता. कुछ सोचते हुए इन्द्रदेव वहाँ से वापस लौटे. वे एक ऐसी जगह पहुँचे जहाँ एक तिरमुहानी की तरह पर रास्ता था अर्थात् एक नया रास्ता दाहिनी तरफ को निकल गया था. इन्द्रदेव इसमें घुसे. पाठक इसको बखूबी जानते हैं क्योंकि यह वही था जिसकी राह हेलासिंह सर्यू को ले भागा था, जिसमें प्रभाकरसिंह ने उसका पीछा किया था, अथवा जहाँ से एक बाग में पहुँच तिलिस्मी शैतान से उन सभों की भेंट हुई थी.

ताज्जुब की बात थी कि पहिले रास्ते की तरह उस सुरंग के बीच में पड़ने वाले भी और सब दरवाजे तो खुलते चले गये मगर जब आखिरी अर्थात् वह दरवाजा मिला जिसे खोलने पर वह बाग मिलता था जिसमें तिलिस्मी शैतान और प्रभाकरसिंह की लड़ाई हुई थी तो वह दरवाजा भी इन्द्रदेव के खोले न खुला. कई तरह की तर्कीब की मगर कोई असर न हुआ और इन्द्रदेव को विश्वास कर लेना पड़ा कि लोहगढ़ी के तिलिस्म के अन्दर जाने के लिए इस समय कोई तर्कीब नहीं हो सकती. वे कुछ ताज्जुब के साथ यह कहते हुए पीछे की तरफ लौटे, "यह क्या मामला है ? इसका तो दो ही सबब हो सकता है—या तो भीतर से सब दरवाजों को बन्द कर देने की कोई तर्कीब की गई है और—या फिर—यह तिलिस्म टूट रहा है !"

आखिरी बात कहते-कहते इन्द्रदेव कुछ गौर में पड़ गये और अस्पष्ट स्वर में उनके मुँह से निकला, "क्या यही बात तो नहीं है ! इस तिलिस्म की उम्र समाप्त तो हो ही चली थी, कौन ठिकाना मालती और प्रभाकरसिंह···!"

यकायक वे रुक गये क्योंकि उन्हें ऐसा जान पड़ा मानो कोई उस सुरंग में आ रहा है. उन्होंने आहट पर गौर किया और अन्दाज से पता लगाया कि दो आदमी

आपुस में धीरे-धीरे बातें करते इसी तरफ को आ रहे हैं. ये लोग कौन हैं, यह जानने के विचार से इन्द्रदेव का इरादा हुआ कि कहीं आड़ में छिप कर इन्हें देखना चाहिए पर उस पतली सुरंग में आड़ या छिपने की जगह हो ही कहाँ सकती थी. फिर भी इधर-उधर देखते-देखते यकायक उन्हें कोई बात याद आ गई और वे अपनी जगह से पीछे हटे. दस-बारह कदम लौट जाने बाद दाहिनी तरफ की दीवार में एक छोटा ताक दिखाई पड़ा जिसमें कोई मूरत बैठाई हुई थी. इन्द्रदेव ने उस मूरत के साथ कुछ किया जिससे बगल की दीवार की एक पटिया घूम कर पीछे हट गई और एक तंग रास्ता दिखाई पड़ने लगा. इन्द्रदेव उसी में घुस गये और तुरन्त ही वह रास्ता बन्द हो गया. जिस जगह अब वे थे वह एक बहुत ही छोटी कोठरी थी जिसमें मुश्किल से पाँच-छः आदमी खड़े हो सकते थे मगर यहाँ की दीवार में दो-एक छेद इस तरह के बने हुए थे जिनकी राह बाहर सुरंग का हाल देखा जा सकता था. इन्द्रदेव इन्हीं छेदों की राह बाहर की आहट लेने लगे, ये छेद इतनी कारीगरी से बने हुए थे कि सुरंग से आने-जाने वालों को इनका गुमान भी नहीं हो सकता था.

थोड़ी देर बाद बातचीत की आवाज ने इन्द्रदेव पर प्रकट कर दिया कि ये आने वाली दो औरतें हैं जो आपुस में बातें करती हुई धीरे-धीरे चली आ रही हैं. इन्द्रदेव ने उनकी आवाज पर गौर करके उन्हें पहिचानना चाहा परन्तु ऐसा न कर सके क्योंकि स्वर पहिचाना हुआ न था, सूरत देख कर पहिचानना चाहा मगर वह भी न हो सका क्योंकि दोनों के चेहरों पर नकाबें पड़ी हुई थीं. हाँ उनकी बातचीत का जो अंश इन्द्रदेव के कान में पड़ा वह ताज्जुब दिलाने वाला जरूर था. उनमें से एक ने कहा, "भूतनाथ की सारी ऐयारी भूल जायगी और वह भी याद करेगा कि किसी से वास्ता पड़ा था !" जिसके जवाब में दूसरी ने कहा, "इसमें क्या शक है ? उसका यह जो भेद हम लोगों को मालूम हुआ है उसके जरिये हम लोग उसे अच्छी तरह नचा सकती हैं !"

इतना कहती हुई दोनों आगे बढ़ गईं और इन्द्रदेव उनकी बातों के इतने टुकड़े पर गौर करते हुए सोचने लगे कि ये दोनों कौन हो सकती हैं, खैर देखना चाहिए तिलिस्म के अन्दर जाती हैं या मेरी ही तरह वापस लौटती हैं. मगर जब मैं तिलिस्म में न जा सका तब इनका चले जाना ताज्जुब की ही बात होगी.

इन्द्रदेव का खयाल ठीक निकला और थोड़ी देर बाद वे दोनों वापस लौटती

दिखाई पड़ीं. सुरंग वाले दरवाजे के न खुलने के सम्बन्ध में दोनों में आश्चर्य की बातें हो रही थीं. इन्द्रदेव ने यह मौका अच्छा समझा और जब वे उस जगह से कुछ आगे बढ़ गईं जहाँ वे छिपे हुए थे तो ये भी बाहर निकल आये और उस जगह को बन्द कर दबे पाँव धीरे-धीरे उनके पीछे-पीछे जाने लगे, उनकी बातचीत का जो अंश सुनाई पड़ता था उसे गौर के साथ सुनते भी जाते थे. यद्यपि साफ तो नहीं सुनाई पड़ता था क्योंकि फासला ज्यादे था और वे दोनों बातें भी धीरे-धीरे कर रही थीं फिर भी जो कुछ सुनाई पड़ जाता था वह भी इन्द्रदेव को चौंका देने के लिए काफी था.

एक : खैर कोई हर्ज नहीं, इतने ही से हम लोग भूतनाथ को वह तमाशा दिखा देंगी कि वह भी याद करेगा.

दूसरी : लेकिन इतना समझे रहो कि यह काम है बड़ा खतरनाक ! अगर उसे जरा भी मालूम हो गया कि इस पर्दे के भीतर हम दोनों छिपी हुई हैं तो वह हमें कदापि जिन्दा न छोड़ेगा.

एक : (लापरवाही से) अजी अपने उस पुराने पाप के बारे में दो बातें सुनते ही तो वह अधमरा हो जायगा, तुम्हारा ख्याल कहां है ! और फिर हम लोग सब तरह से होशियार रहेंगी, कुछ सहज में थोड़ी ही उसके कब्जे में आ जायंगी ! क्या बताऊँ जो कागजात घाटी में गाड़ आई हूँ वे कहीं मिल जाते तो इसी समय सब बखेड़ा तय हो जाता और एक ही बार में भूतनाथ हम लोगों का गुलाम बन जाता मगर कम्बख्त दरवाजा ही नहीं खुला !!

दूसरी : आखिर उन कागजों में था क्या सो भी तो कुछ बताओ ?

पहिली ने इसके जवाब में झुक कर जो कुछ कहा उसे इन्द्रदेव बिल्कुल सुन न सके मगर इतना जरूर जान गये कि वह कोई बहुत गूढ़ बात थी क्योंकि उसे सुनते ही वह दूसरी औरत चौंक पड़ी और ताज्जुब के साथ बोली, "क्या तुम ठीक कह रही हो ?" इसके जवाब में उसने कहा, "हाँ बिल्कुल ठीक !" और तब दोनों की बातचीत बन्द हो गई क्योंकि सुरंग का मुहाना आ गया था और उस जगह का दरवाजा खोलने में वह पहिली औरत लग गई थी.

दरवाजा खोल कर वे दोनों औरतें बाहर निकल गईं और लोहगढ़ी के ऊपर वाली इमारत के एक दालान में जा बैठीं. छिपते और उनकी निगाहों से बचते हुए इन्द्रदेव भी सुरंग के बाहर निकले और उस दालान के बगल वाली एक कोठरी में

जा पहुँचे क्योंकि इन्हें बड़ा कौतूहल यह जानने का हो रहा था कि वास्तव में ये दोनों कौन हैं और भूतनाथ से इन्हें क्या दुश्मनी है. मगर उनका कौतूहल ताज्जुब में बदल गया जब उन्होंने इन दोनों की सूरतें देखीं क्योंकि इस समय दोनों ही ने अपनी-अपनी नकाबें उलट दी थीं और अपने पास से सामान निकाल सूरतों पर रंग भरने का उद्योग कर रही थीं. इन दोनों की असली सूरतें देखते ही इन्द्रदेव पहिचान गये कि इनमें से एक तो शेरअलीखाँ की लड़की गौहर है और दूसरी हेलासिंह की बेटी मुन्दर. उनके मुँह से ताज्जुब के साथ निकल गया, "अरे, ये दोनों शैतान की बच्चियाँ यहाँ ! !"

मगर इसके साथ ही उनके मन में और भी बहुत-सी बातें घूम गईं. उन्हें याद आया कि मालती ने जो तिलिस्मी किताब जमीन में गाड़ी जाती देखी और बाद में निकाली थी तथा उसके साथ जो बहुत-से कागजात भी पाये थे उनके गाड़ने वाले दो मर्द और एक औरत थे. वे समझ गए कि हो न हो वह काम हेलासिंह और मुन्दर का ही होगा. इसके साथ ही उनकी विचार-प्रणाली का ढंग भी बदल गया और वे कुछ नई बातें सोचने लगे.

इसी बीच मुन्दर और गौहर जो इस बात से बिलकुल बेखबर थीं कि उनके पास ही में कोई छिपा खड़ा उनकी सब कार्रवाई देख-सुन रहा है, अपनी सूरत बदलने में मशगूल थीं. उन दोनों ही के सामने एक-एक तस्वीर और एक-एक शीशा था और वे शीशे में देख-देख अपनी शक्ल उन्हीं तस्वीरों जैसी बना रही थीं, मगर वे शक्लें क्या थीं यह आड़ में पड़ने तथा मुँह दूसरी तरफ घूमा रहने के कारण इन्द्रदेव देख नहीं सकते थे.

लगभग आधे घण्टे तक वे दोनों इस काम में लगी रहीं, इसके बाद जब उनके मन मुताबिक शक्लें बन गईं तो दोनों ने सूरत बदलने का सामान बटोरकर किनारे किया और उन कपड़ों की मदद से अपनी पौशाक बदलना शुरू किया जो वे साथ लाई थीं· उस समय इन्द्रदेव को एक झलक उनके बदले हुए चेहरों की दिखाई पड़ी. मुन्दर की सूरत एक कमसिन और नाजुक औरत की थी और गौहर एक अधेड़ मर्द बनी हुई थी. साथ ही जान पड़ता है कि इन सूरतों को भी इन्द्रदेव पहिचानते थे क्योंकि देखते ही वे चौंक कर बोल उठे, "हैं, मुन्दर और भुवनमोहिनी के रूप में ? तब क्या यह भेद भी प्रकट हो गया ? अब गई बेचारे भूतनाथ की जान."

तरह-तरह की न-जाने कितनी ही बातें बिजली की तेजी से इन्द्रदेव के दिमाग में दौड़ गईं, मगर इसके साथ ही न-जाने कौन एक पुरानी याददाश्त उनकी आँखें भर लाईं और, चेहरा उदास हो गया.

इधर जल्दी-जल्दी इन दोनों ने अपनी पौशाकें बदलीं, चेहरे पर नकावें लगाईं और कुछ जरूरी सामान कमर में छिपा चलने के लिए तैयार हो गईं. आगे-आगे वे दोनों और पीछे-पीछे इन्द्रदेव लोहगढ़ी के बाहर निकले.

इन्द्रदेव कहाँ जाते अथवा क्या करते हैं इसका ध्यान छोड़ हम थोड़ी देर के लिए इन दोनों कम्बख्तों के पीछे चलते और देखते हैं कि ये कहाँ जाती और क्या कहती हैं.

लोहगढ़ी से निकल आपस में धीरे-धीरे बातें करती हुई गौहर और मुन्दर उस रास्ते से काशी जी की तरफ रवाना हुईं जो इन्द्रदेव के कैलाश-भवन के पास से होता हुआ पहाड़ के ऊपर ही ऊपर सीधा चला गया था और जिसकी कई शाखें शिवदत्तगढ़, चुनारगढ़ और रोहतासगढ़ आदि को भी निकल गई थीं. राह में एक जगह पहुँच कर कुछ देर के लिए मुन्दर रुकी क्योंकि इस जगह एक पहाड़ी गुफा में उसने घोड़ा तथा कुछ सामान छिपा रक्खा था. मुन्दर ने उस गुफा में पहुँच कर, जो बहुत ही लम्बी-चौड़ी और पहाड़ के अन्दर दूर तक चली गई थी और जिसकी ऊँचाई भी काफी थी, अपना घोड़ा उसके अन्दर से निकाला, अपने पास वाला कुछ सामान जिसकी जरूरत न समझी उस गुफा में पत्थरों के ढोंकों के बीच में छिपाया, और तब उसी घोड़े पर सवार हो दोनों रवाना हुईं और काशीजी पहुँचीं. वहाँ पहुँच कर भूतनाथ से किस तरह उनकी मुलाकात हुई अथवा क्योंकर उनकी बातें सुन और सूरत देख भूतनाथ बदहवास हो गया यह हम ऊपर लिख आये हैं, इसलिए अब उसके आगे का हाल लिखते हैं.

भूतनाथ को डर और घबराहट से बेहोश होते देख मुन्दर और गौहर ने प्रसन्नता की निगाह एक-दूसरे पर डाली और तब यह निश्चय कर लेने के बाद कि कोई उनकी कार्रवाई देख तो नहीं रहा है उन दोनों ने भूतनाथ के बटुए की तलाशी लेनी शुरू की. दवाओं की शीशियों और तरह-तरह के कीमती मसालों से भरी हुई डिबियों की तरफ तो उन्होंने निगाह भी न की हाँ उन बहुत-से कागजों और चीठियों को उन्होंने जरूर गौर के साथ जाँचना शुरू किया जो उसके बटुए में थीं.

मगर यकायक उनके काम में विघ्न पड़ गया जब उन्होंने कई आदमियों के उस गली के अन्दर घुसने की आहट पाई. अपना काम बन्द कर लाचार उन दोनों को उठना पड़ा. भूतनाथ के कागजात बटुए के अन्दर डाल बटुआ ज्यों-का-त्यों उसकी कमर में बाँधने बाद मुश्किल से उन दोनों को इतना समय मिला कि वहाँ से हट अपने को कहीं छिपा सकें. हम नहीं कह सकते कि भूतनाथ के कागजों में से कुछ इन लोगों ने निकाले भी या नहीं, समय ही इसका हाल बता सकता है.

ये आने वाले भूतनाथ के कई नौकर तथा शागिर्द थे जिन्हें श्यामा के मकान [?]र काम करने के लिए गुप्त रीति से भूतनाथ ने ठीक किया था. अपने मालिक को इस तरह बीच रास्ते में बेहोश पड़े पा ये चौंक पड़े और उसे होश में लाने का उद्योग करने लगे. थोड़ी ही कोशिश में भूतनाथ चैतन्य होकर उठ बैठा और साथ ही उस के आदमियों ने पूछना शुरू किया—"यह क्या मामला है ? आप इस तरह बेहोश यहाँ क्यों पड़े थे ? क्या कोई दुर्घटना हो गई ?" इत्यादि, मगर भूतनाथ ने किसी भी बात का कोई जवाब न देकर बेचैनी के साथ केवल इतना उन लोगों से कहा, "इन सब बातों का जवाब पीछे पूछना, पहिले यह बताओ कि यहाँ से दो आदमियों को भागते हुए तुम लोगों ने देखा ?"

भूतनाथ के एक शागिर्द ने कहा, "मुझे कुछ झलक-सी लगी थी कि कोई आदमी (उँगली से दिखा कर) उस गली में गया है पर ठीक-ठीक नहीं कह सकता !" सुनते ही भूतनाथ उठ खड़ा हुआ और बोला, "अच्छा मैं उन की टोह लगाता हूँ, तुम लोग भी इधर-उधर फैल जाओ और कहीं भी सफेद पोशाक पहिरे दो नकाबपोशों को देखो तो पकड़ कर इसी मकान में लाओ." भूतनाथ ने श्यामा के मकान की तरफ इशारा किया और तब केवल उस आदमी को अपने साथ ले जिसने उन दोनों के भागने का निशान बताया था वह उस गली में घुस गया. उसके बाकी आदमी भी चारों तरफ फैल गये और उन नकाबपोशों को गिरफ्तार करने की कोशिश करने लगे.

गली पार कर चुकने के बाद सड़क मिली और यहाँ पहुँच कर भूतनाथ को मालूम हो गया कि अभी कुछ ही देर पहिले इस जगह एक घोड़ा जरूर बँधा हुआ था. उसे विश्वास हो गया कि वे दोनों नकाबपोश भी जरूर इसी घोड़े पर सवार होकर भागे हैं क्योंकि मिट्टी पर एक घोड़े के तेज टापों के निशान पड़े हुए थे जो सरपट दौड़ कर [...] ने भी उसी तरफ का रास्ता लिया और

बड़ी तेजी से दौड़ता हुआ उस तरफ बढ़ा जिधर वे सवार गये थे.

इसमें कोई शक नहीं कि भूतनाथ दौड़ने में बहुत ही तेज था. लगभग कोस भर जाते-जाते उनके कानों में घोड़े के टापों की आवाजें पड़ने लगीं और थोड़ा ही और जाने बाद उन दोनों नकाबपोशों की एक झलक उसने देख ली जो उस एक ही घोड़े पर सवार तेजी से बढ़े जा रहे थे. भूतनाथ के शागिर्द ने पूछा, "मेरे पास पथरकला मौजूद है, कहिए तो इन लोगों पर निशाना लगाऊँ?" मगर वह बोला, "अभी नहीं आगे चल कर अगर जरूरत पड़ी तो वैसा किया जायगा, लेकिन यदि सम्भव हो तो मैं उन्हें बिना चोट पहुँचाये ही पकड़ना चाहता हूँ!" मन-ही-मन दोनों को गिरफ्तार करने की तर्कीबें सोचता हुआ भूतनाथ उनके पीछे-पीछे जाने लगा और इस बात की तरफ उसने बिल्कुल ध्यान नहीं दिया कि आसमान पर काले बादल छा रहे हैं जो न-जाने कब फट पड़ेंगे.

मगर उन दोनों नकाबपोशों की निगाह इस तरफ जरूर थी. हवा की तेजी और बढ़ते बादलों को चारों तरफ से घिरे आते देख एक ने दूसरे से कहा, "बादल तेजी से इकट्ठे हो रहे हैं, हम लोगों को जल्दी अपने ठिकाने पहुँच जाना चाहिए नहीं तो भीगना पड़ेगा." दूसरे ने यह सुन कर कहा, "हाँ मैं भी इसे देख रही हूँ, मगर अभी लोहगढ़ी बहुत दूर है और पानी आने में कुछ भी देर नहीं मालूम पड़ती." इसके साथ ही उसने घोड़े को एड़ लगाकर उसकी चाल तेज की.

लगभग कोस-भर और जाते-जाते पानी की बूंदें गिरने लग गईं. एक बोली, "पानी बढ़ेगा!" दूसरी ने कहा, "तब कहीं आड़ खोजनी चाहिए." पहली बोली, "हम लोग हैं कहाँ पर?" दूसरी ने गौर करके कहा, "वह जगह यहाँ से ज्यादा दूर नहीं है जहाँ मैं इस घोड़े को बाँधती हूँ और उसी गुफा में हम लोगों को भी आड़ मिलेगी." इतना कह उसने घोड़े का मुंह घुमाया और धीरे-धीरे—क्योंकि अब अंधेरा बहुत हो गया था और रास्ता दिखाई देना कठिन हो रहा था, दोनों उस पहाड़ी की तरफ जाने लगीं जिधर एक गुफा के अन्दर से मुन्दर ने यह घोड़ा खोला था. पल-पल में पानी की तेज और हवा की सनसनाहट बढ़ती जाती थी जिससे इन दोनों को रास्ता खोजने में जिस प्रकार तकलीफ बढ़ रही थी उसी प्रकार भूतनाथ के लिए इनका पीछा करना सहज हो रहा था बल्कि उसने अब इनको गिरफ्तार करने की एक तर्कीब भी सोच निकाली थी.

बिजली की चमक में रास्ता देखती और उस गुफा की टोह लेती हुई मुन्दर

उस जगह के पास पहुँच घोड़े से उतरी और उसकी लगाम पकड़े दोनों धीरे-धीरे उस गुफा की तरफ बढ़ीं. बिजली की चमक से भूतनाथ ने भी उस गुफा को देखा और समझ गया कि इसी में ये दोनों अब डेरा लगावेंगी, अस्तु ऐयारी करने की फिक्र में वह अपने साथी को लिए कुछ दूर हट गया और कोई आड़ की जगह तलाश करने लगा.

मुन्दर और गौहर उस गुफा के पास जा पहुँचीं परन्तु यकायक उनके कानों में किसी तरह की आहट पहुँची. मुन्दर ने गौहर का हाथ पकड़ लिया और एक तरफ आड़ में होती हुई बोली, "सखी, मुझे संदेह होता है कि इस जगह और भी कोई आदमी है ! कहीं हमारा पीछा तो नहीं हो रहा है ?"

गौहर ने गौर से चारों तरफ की आहट ली मगर उसे कुछ सुनाई न पड़ा और वह बोली, "मुझे तो कुछ नहीं पता लगता. फिर इस आंधी-पानी में कौन हमारा पीछा करने ही लगा है !"

कुछ देर तक दोनों चुप रहीं और फिर कोई आहट न पाकर दोनों गुफा की तरफ लौटीं. मगर धूर्ता मुन्दर ने घोड़े की लगाम एक डाल के साथ अटका उसे उसी जगह छोड़ दिया क्योंकि उसने सोचा कि अगर सचमुच कोई उनका पीछा कर रहा है तो घोड़ा बाहर ही रहना ठीक रहेगा, तब उसने गौहर का हाथ पकड़ लिया और चौकन्नी होकर सब तरफ की आहट लेती हुई गुफा की तरफ बढ़ी उसी समय पानी तेजी से बरसने लगा और चारों तरफ अंधेरी और भी बढ़ गई.

गुफा के मुहाने पर रुक कर थोड़ी देर आहट लेने के बाद जब मुन्दर को उस के अन्दर किसी के होने का गुमान न हुआ तो वह भीतर घुसी और गौहर उसके पीछे-पीछे चली. पन्द्रह-बीस कदम से ज्यादा ये दोनों न गई होंगी कि अचानक अन्दर की तरफ से कोई आवाज सुन चौंक पड़ीं और मुन्दर ने धीरे से कहा— "सखी, मुझे तो शक होता है कि इस गुफा में जरूर कोई है." गौहर बोली, "और मुझे भी, लेकिन तब क्या करें, लौटें ?" "यही मुनासिब जान पड़ता है." कहती हुई मुन्दर पीछे को घूमी मगर यकायक फिर रुक गई क्योंकि उसी समय गुफा के मुहाने की तरफ से चुटकी बजने की तरह आवाज सुनाई पड़ी.उसने घबड़ा कर गौहर से कहा, "मालूम होता है हम दोनों तरफ से घिर गये हैं. जरूर गुफा के बाहर भी कोई आदमी है जिसने यह चुटकी बजाई !"

गौहर जवाब में कुछ कहा ही चाहती थी कि यकायक गुफा के अन्दर से आती

हुई एक रोशनी की तरफ उसकी नजर गई और डरते हुए उसने मुन्दर का ध्यान उधर दिलाया. रोशनी क्षण-क्षण में बढ़ती जा रही थी जिससे गुमान होता था कि कोई रोशनी लिए हुए इधर ही को आ रहा है. मुन्दर ने देखते ही कहा, "अपनी छुरी निकाल लो और होशियार हो जाओ, सम्भव है यह हमारा कोई दुश्मन हो!" इसके साथ ही वह दीवार के साथ चिपक गई और अपने हाथ में छुरी को मजबूती से पकड़े रहने पर भी काँपते हुए कलेजे के साथ उस आने वाले का इन्तजार करने लगी क्योंकि लाख हिम्मतवर होने पर भी आखिर वह जनाना और कमसिन ही तो थी.

रोशनी पास आई. अन्दाज से मालूम हुआ कि गुफा के अन्दर से किसी मोड़ के दूसरी तरफ वह रोशनी लिए हुए आने वाला पहुँच गया है. मुन्दर ने छुरी वाला हाथ ऊँचा किया और उसी समय वह शकल सामने आई जो रोशनी लिए हुए थी. मगर वह कोई आदमी न था जो रोशनी लिए हुए आ रहा था बल्कि मनुष्य की हड्डियों का एक भयानक ढाँचा था जिसके बदन पर चमड़े का नाम-निशान भी न था और जिसके खुले हुए जबड़े के बड़े-बड़े दाँत डर पैदा करने वाली हँसी हँस रहे थे. इस भयानक मूरत के एक हाथ में तो एक टूटी हुई तलवार थी और दूसरे हाथ में वह एक दीया लिए हुए था जिसकी टिमटिमाती हुई रोशनी में वह भयानक नर-कंकाल और भी डरावना मालूम हो रहा था.

इस खौफनाक आसेब को देखते ही मुन्दर और गौहर का तो यह हाल हो गया कि काटो तो बदन से लहू न निकले. उस पर वार करना तो दूर उनके छुरे हाथ से छूट खनखनाते हुए जमीन पर गिर पड़े और दोनों चीखती हुई गुफा के बाहर भागीं. यह देखते ही उस हड्डियों के ढांचे के मुंह से एक भयावनी हँसी निकली जिससे वह गुफा एकदम गूँज उठी. भागने वालियां और भी तेजी से भागीं और उसी समय उस नर-कंकाल ने अपने हाथ का दीया जमीन पर गिरा दिया जिससे गुफा में फिर अँधेरा छा गया.

अँधेरे ही में ठोकरें खाती हुई मुन्दर और गौहर धड़कते हुए कलेजे के साथ गुफा के बाहर निकलीं मगर दूर न जा सकीं. गुफा के बाहर दो मजबूत आदमी खड़े थे जिन्होंने उन्हें कस कर पकड़ लिया. उनके बचे हुए होश-हवास भी जाते रहे और वे चीखें मारकर बेहोश हो गईं.

भूतनाथ तेरहवें भाग के सातवें बयान में हमने इसी घटना का हाल लिखा

है. इससे पाठक यह तो समझ ही गए होंगे कि जिन दो आदमियों को घनश्याम और रामू आदि ने पकड़ा था और शिवदत्तगढ़ की तरफ ले भागे थे वे ये ही दोनों गौहर और मुन्दर थीं. घनश्याम और रामू वगैरह कौन थे यह हम यहाँ न बतावेंगे. उनका हाल आगे चलकर पाठकों को आप ही मालूम हो जाएगा.

जिस समय ये लोग उन दोनों को उठा ले भागे उसी समय अपने शागिर्द को लिए भूतनाथ उस जगह पहुँचा मगर उसे कुछ देर हो गई थी जिससे उसका शिकार दूसरे के हाथों में पड़ चुका था. वह बोल उठा, "मुझे देर हो गई जिससे काम बिगड़ गया, खैर कोई हर्ज नहीं, क्या कोई भागकर भूतनाथ से बच सकता है ! !"

कुछ देर तक भूतनाथ वहीं खड़ा इस बात पर गौर करता रहा कि वे दोनों नकाबपोश कौन हो सकते हैं और जो लोग उन्हें पकड़ ले गए वे भी कहाँ के आदमी होंगे, मगर उसके दिमाग ने कुछ काम न किया. लाचार वह वहाँ से हटा और कुछ सोचता-विचारता इन्द्रदेव के कैलाश-भवन की तरफ रवाना हुआ. उसकी वहाँ उनसे जो कुछ बातें हुईं वह हम ऊपर लिख आए हैं.

10

प्रभाकरसिंह उस शीशे के छत की करामात के कारण उसके साथ झूल रहे थे और मालती बेबसी के साथ नीचे खड़ी उनकी खतरनाक हालत पर डर की निगाहें डाल रही थी.

यकायक किसी जगह घण्टी बजने की आवाज मालती के कानों में पड़ी और वह आश्चर्य के साथ गौर करने लगी कि यह आवाज कहाँ से आ रही है. उसी समय एक खटके की-सी आवाज आई और मालती के सामने वाली शीशे की दीवार में एक छोटा-सा सूराख दिखाई पड़ने लगा. यह सोच कर कि शायद उसके अन्दर झाँकने से कोई नई बात जान पड़े मालती उस छेद के पास गई जो जमीन से लगभग तीन हाथ की ऊँचाई पर था और उसमें आँख लगाकर देखने लगी. एक अद्भुत और खौफनाक नजारा उसे दिखाई दिया.

मालती ने देखा कि उस छेद के दूसरी तरफ एक बहुत लम्बा-चौड़ा कमरा है जिसके बीचोबीच में लगभग दस हाथ लम्बी और इतनी ही चौड़ी काले संगमरमर

की एक बावली बनी हुई है. इस बावली के एक किनारे पर वे ही चारों शैतान जिन्हें मालती और प्रभाकरसिंह कई बार पहिले देख चुके थे बैठे हुए कुछ कर रहे थे. कुछ ही गौर करने से मालती को मालूम हुआ कि वे लोग एक लाश को काट और उसके टुकड़े करके उस तालाब में फेंक रहे हैं. मालती ने यह भी देखा कि तालाब के अन्दर दो छोटे घड़ियाल हैं जो उन टुकड़ों को खाने के लिए इधर-उधर झपट रहे हैं. यह दृश्य ऐसा भयानक था कि इसने एक बार नाजुक मालती का कलेजा हिला दिया और उसे अपनी आँखें वहाँ से हटा लेनी पड़ीं मगर कुछ देर बाद पुनः उसने हिम्मत की और उस छेद की राह देखना शुरू किया.

इस बार मालती उस बड़े कमरे के चारों तरफ अपनी निगाह दौड़ाने लगी. उसने देखा कि उस बावली के चारों तरफ एक तरह का बनावटी बाग या जंगल-सा बना हुआ है. तरह-तरह के पेड़ और गुलबूटे चारों तरफ बने हुए थे जो सभी बनावटी थे क्योंकि उनमें से किसी की भी ऊँचाई तीन-चार हाथ से ज्यादे न थी. पेड़ों के नीचे, झाड़ियों की आड़ में, अथवा उस छोटे बनावटी पहाड़ की गुफाओं में जो एक तरफ बना हुआ था, लेटे, बैठे, चरते या सोये हुए पशुओं की आकृति ऐसी साफ और सुन्दर बनी हुई थी कि जान पड़ता था मानों वे सभी जानदार हैं. उस बावली की दूसरी ओर की सीढ़ियों पर एक बारहसींगा झुक कर पानी पीता हुआ ऐसा साफ बनाया गया था कि देख कर यकायक उसके असली होने का ही गुमान होता था.

इन सब चीजों को देखती और घूमती-फिरती मालती की आँखें पुनः उन शैतानों के ऊपर आकर रुक गईं. उसने देखा कि उन्होंने अपना काम खतम कर दिया अर्थात् वह समूची लाश टुकड़े-टुकड़े करके उन घड़ियालों को खिला दी और तब उस जगह की जमीन को बावली के पानी से अच्छी तरह धोकर साफ कर देने के बाद उठ खड़े हुए. बगल की दीवार में एक छोटा-सा दरवाजा था जिसमें एक-एक करके वे सब चले गए और तब वह दरवाजा बन्द हो गया. उसी समय पुनः घंटी बजी और वह सूराख जिसकी राह मालती उधर का हाल-चाल देख रही थी बन्द हो गया. मालती ने देखा कि इधर-उधर से शीशे के चार छोटे-छोटे टुकड़े खसक के आकर उस सूराख के बीचोबीच में इस तरह बैठ गये कि जोड़ का निशान तक बाकी न रह गया.

दीवार के दूसरी तरफ का तमाशा देखने की धुन में अब तक मालती इस

तरफ की हालत और प्रभाकरसिंह की मुसीबत कुछ भूल-सी गई थी मगर अब उसे पुनः पिछली बातें याद आ गईं और छत के साथ लटकते हुए प्रभाकरसिंह की भयानक हालत देख वह पुनः इस फिक्र में पड़ गई कि उन्हें छुड़ाने का कोई उद्योग करे, मगर बहुत गौर करने पर भी इसकी कोई तर्कीब उसे सूझ न पड़ी, हाँ यह ख्याल उसके मन में जरूर दौड़ गया कि जिस तरह शीशे के टुकड़ों ने उस सूराख को बेमालूम तौर पर बन्द कर दिया उसी तरह सम्भव है कि चारों तरफ की दीवारों में भी कहीं कोई दरवाजा हो जो इसी तरह बन्द हो जाता हो. इस ख्याल ने उसके मन में आशा का संचार किया और यह देखने के लिए कि देखें ऐसा करने से वह सूराख पुनः प्रकट होता है या नहीं उसने ठीक उसी जगह जहाँ वह छेद प्रकट हुआ था अपना अँगूठा रखकर जोर से दबाया. एक खटके की आवाज हुई और शीशे के वे चारों टुकड़े अलग हट गये जिससे पुनः दूसरी तरफ देखने लायक सूराख पैदा हो गया. मालती के मुँह पर प्रसन्नता की झलक आई और वह इस इरादे से उस कमरे की शीशे की दीवारों को जगह-जगह टटोलने, दबाने या ठोकरें देने लगी कि शायद ऐसा करने से कहीं पर कोई रास्ता पैदा हो जाय.

प्रसन्नता की बात थी कि मालती का ख्याल ठीक निकला. जगह-जगह की दीवार को टटोलती और दबाती हुई मालती जब उस छेद के ठीक सामने वाली दीवार के पास पहुँची तो उस जगह हथेली से दबाते ही एक खटके की आवाज हुई और साथ ही शीशे के दो बड़े-बड़े टुकड़े इस तरह दो तरफ घूम गए मानों कब्जे पर हों. एक तंग रास्ता दिखाई देने लगा जिसके भीतर बिल्कुल अँधेरा था और जिसमें से किसी तरह की हलकी आवाज आ रही थी. अपनी सफलता पर एक प्रसन्नता की आवाज मालती के मुँह से निकली और उसने खुशी-खुशी प्रभाकरसिंह को लक्ष्य करके कहा, "लीजिए, आने-जाने का रास्ता तो पैदा हो गया, अब आशा है आपके नीचे उतारने की भी कोई तर्कीब निकल ही आवेगी." मगर हैं, यह क्या ! जब मालती ने छत की तरफ निगाह की तो देखा कि वह एकदम साफ है अर्थात् प्रभाकरसिंह का कहीं पता नहीं है. बहुत ध्यान देने से उसे यह भी पता लगा कि छत की अब वह ऊँचाई नहीं रह गई जो पहिले थी, अर्थात् वह पुनः अपनी असली जगह पर सिर से दो हाथ के लगभग की ऊँचाई पर आ पहुँची है. प्रभाकरसिंह का वह कमरबन्द तथा दुपट्टा इत्यादि भी गायब था जो पहिले उन्हीं की तरह छत के साथ चिपका लटक रहा था. मालती के ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा,

वह आँख मल-मल के चारों तरफ ऊपर-नीचे और इधर-उधर देखने लगी कि कहीं आँखें धोखा तो नहीं दे रही हैं, मगर नहीं केवल छत ही नहीं बल्कि वह कमरा भी सचमुच ही एकदम खाली था और प्रभाकरसिंह का कहीं नाम-निशान भी नहीं था.

मालती के दुःख और ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा. उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि प्रभाकरसिंह यकायक कहाँ या कैसे गायब हो गए. किसी तरह की आवाज भी उसके कानों में नहीं पड़ी थी जिससे यह गुमान होता कि वे किसी मुसीबत में फँस गए. तब क्या छत उन्हें खा गई या वे हवा में मिल गए ! ताज्जुब और घबराहट के साथ मालती बार-बार अपने चारों तरफ निगाह दौड़ाने लगी मगर व्यर्थ, प्रभाकरसिंह वहाँ थे ही कहाँ जो दिखाई पड़ते ! सब तरह से लाचार होकर उसने कई आवाजें भी लगाईं मगर वह भी व्यर्थ हुआ. दुःख, रंज और अफ़सोस के मारे बेचारी मालती की आँखों से आँसू टपकने लगे और वह दोनों हाथों से अपना सिर थामे वहीं जमीन पर बैठ गई.

मगर आखिर व्यर्थ बैठकर समय नष्ट करने से भी फायदा क्या था ? कुछ देर तक तरह-तरह की बातें सोचने के बाद अन्त में मालती एक लम्बी साँस लेकर उठी और एक आखिरी निगाह अपने चारों तरफ डाल उस दरवाजे के अन्दर घुसी जिसे उसने अपने उद्योग से पैदा किया था और जो अभी तक खुला हुआ था. एक तंग और अँधेरी गली में उसने अपने को पाया और वह टटोलती और आहट लेती हुई होशियारी के साथ उसके अन्दर जाने लगी.

लगभग पन्द्रह-बीस कदम के गई होगी कि पीछे से किसी तरह की आहट आई जिससे मालती समझ गई कि वह रास्ता जिसे उसने खोला था पुनः बन्द हो गया मगर उसी समय सामने की तरफ से दूसरी आवाज आई और उधर एक दरवाजा खुल गया जिसकी राह आती हुई रोशनी और हवा उसके पास तक पहुँची. जल्दी-जल्दी मालती ने बाकी रास्ता तय किया और उस दरवाजे के बाहर निकल कर अपने को एक नई और कुछ विचित्र जगह में पाया.

बीच की खुली जगह छोड़ देने के बाद जहाँ तक निगाह जाती थी चारों तरफ मकान और इमारतें ही दिखाई पड़ रही थीं और यह बीच वाला मैदान भी लाल रंग के चौकोर पत्थर के टुकड़ों से पटा हुआ था जिनमें कहीं-कहीं काले पत्थर भी दिखाई पड़ रहे थे और बीचोंबीच में तीन-चार हाथ ऊँचे खम्भे पर कोई मूरत

बैठाई हुई थी जो खुद भी लाल ही रंग के पत्थर की थी. इसके पीछे की तरफ अर्थात् मालती के ठीक सामने एक दोमंजिली इमारत थी जिसके बीचोबीच में दो तरफ से खुला हुआ एक लम्बा दालान था. इस दालान के एक सिरे पर एक बन्द कमरा तथा दूसरी ओर एक गोल कमरा था जिसकी छत बहुत ऊँची थी. यह गोल कमरा भी, जिसमें चारों तरफ खिड़कियाँ थीं, इस समय बन्द था. बाईं तरफ देखा, दक्खिन और पूरब के कोने में काले पत्थर का बना एक ऊँचा बुर्ज दिखाई पड़ा जिसकी शक्ल उस घूमने वाली बारहदरी से, जिसके जरिये मालती और प्रभाकरसिंह उस शीशमहल में पहुँचे थे, यहाँ तक मिलती थी कि पहिले तो मालती को गहरा शक हुआ कि वह पुनः उसी जगह जा पहुँची है मगर जब गौर से देखा तो उसे अपनी भूल मालूम हो गई क्योंकि यह एक बिल्कुल दूसरी ही इमारत थी. इस बुर्ज के सिरे पर खम्भे की तरह ऊँची उठी हुई कोई चीज थी जिसके साथ बहुत-सी तारें लगी हुई थीं. दाहिनी तरफ भी इमारतों का एक लम्बा सिलसिला चला गया था जिसमें से कुछ के दरवाजे खुले हुए और कुछ के बन्द थे.

मालती कुछ देर अपने चारों तरफ देखती और कुछ गौर करती रही. अन्त में उसके मुंह से निकला, "प्रभाकरसिंहजी की राह देखना व्यर्थ है, न-जाने वे किस तिलिस्मी मुसीबत में पड़ गए और इस वक्त कहाँ हैं, अब तो आगे बढ़कर जहाँ तक का हाल मालूम है वहाँ तक का तिलिस्म तोड़ना ही उत्तम मालूम होता है फिर जो होगा देखा जाएगा. सम्भव है कि इतना हिस्सा तिलिस्म का टूट जाने से उनको नेजात मिल जाय. अफसोस, वह तिलिस्मी किताब और डण्डा भी उनके साथ ही चला गया नहीं तो इस वक्त बहुत काम आता." कुछ देर तक इसी तरह की बातें मालती सोचती रही इसके बाद हिम्मत बाँध कर आगे बढ़ी और बीच के मैदान को पार कर सामने वाले गोल कमरे की तरफ बढ़ी.

आधा रास्ता तय करके मालती जरा देर के लिए रुक गई क्योंकि अब वह उस खम्भे के पास पहुँच गई थी जो सहन के बीचोबीच में बना हुआ था. उसने इस खम्भे और मूरत को गौर के साथ देखा और तब उसे मालूम हुआ कि वह कोई खम्भा नहीं है बल्कि लाल रंग के पत्थर में एक बड़ी ही भयानक सूरत के किसी पिशाच की शक्ल बनी हुई है जिसका भयानक चेहरा, लाल-लाल आँखें, शेर के पंजे की तरह नाखून और विकराल आकृति देखकर उसके बेजान होने पर भी डर मालूम पड़ता था. यह मालती को शक था या कोई वास्तविक बात कि इसे दे

ही उस नरपिशाच ने अपना मुँह खोला और जुबान से इस तरह अपने होठ चाटे मानों कोई भूखा शेर अपने सामने अपनी खुराक देख रहा हो ! परन्तु यह काम इतनी जल्दी से हो गया कि मालती को यह शक बना ही रह गया कि वास्तव में उस मूरत ने ऐसा किया या नहीं मगर इतना जरूर हुआ कि फिर उसकी वहाँ ठहरने की हिम्मत न हुई और वह जल्दी-जल्दी चल कर सामने वाली इमारत के पास पहुँच गई.

इस इमारत की नीचे वाली मंजिल बिल्कुल खाली और खुली हुई थी अर्थात् मोटे-मोटे खम्भों वाले एक लम्बे दालान की तरह पर बनी हुई थी जिसकी कुरसी कमर से करीब दो हाथ ऊँची थी और ऊपर चढ़ने के लिए पूरी लम्बाई में कई जगह छोटी-छोटी खूबसूरत सीढ़ियाँ बनी हुई थीं. मालती सीढ़ियाँ चढ़ उस दालान में पहुँची और चारों तरफ देखने लगी. मोटे-मोटे खम्भों पर दालान की लम्बी-चौड़ी छत टंगी हुई थी और इन खम्भों में से हर एक के बीचोबीच में एक छोटा-सा ताक था जिसमें कोई-न-कोई मूरत बैठाई हुई थी. मालती बहुत गौर से इन मूरतों को देखने लगी मगर मालूम पड़ता है कि जिस चीज की उसे जरूरत थी वह उसे दिखाई न पड़ी क्योंकि देर तक चारों तरफ देखने पर भी काम न चला तो मालती आगे बढ़ी और नजदीक जाकर देखभाल करने लगी.

पचासों खंभों को चारों तरफ से नीचे से ऊपर तक गौर से देखने और अपने जरूरत की मूरत खोजने में मालती ने बहुत देर लगा दी मगर उसका मतलब पूरा न हुआ. आखिर लाचार हो वह कुछ बेचैनी के साथ बोली, "सब खंभे तो देख चुकी, इतनी मूरतें हैं मगर जिसको मैं खोज रही हूँ वह कहीं भी दिखाई नहीं पड़ती !" कुछ देर तक लाचारी के साथ खड़ी रहने के बाद यकायक मालती को कुछ सूझ गया और वह पुनः इधर-उधर घूमने लगी. इस बार उसने खंभों को देखना छोड़ दिया बल्कि उस बड़े दालान के तीन तरफ की दीवारों के साथ-साथ घूमने लगी जिनमें जगह-जगह उन खंभों के जवाब में पत्थर के खंभे कुछ उभड़े हुए दिखाए गए थे. इस बार उसकी मेहनत सफल हुई अर्थात् पूरब तरफ की दीवार के बीचोबीच में दिखाये गये एक खंभे में खुदे आले में उसे एक हरिन की मूरत दिखाई पड़ी. मालती खुश होकर उसके पास पहुँची और गौर से उस पत्थर के हरिन को देख कर बोली, "बेशक यही है !"

मालती अपने मन-ही-मन उन बातों को दोहरा गई जो तिलिस्मी किताब से

पढ़ कर आज सुबह ही प्रभाकरसिंह ने उसे सुनाई थीं, और तब हिम्मत के साथ आगे बढ़ी. अपने दोनों हाथों से उसने उस हरिन के दोनों सींग पकड़ लिए और जोर करके सामने की तरफ खींचा. पहिले तो वे बिल्कुल नहीं हिले मगर दूसरी बार जब पैर अड़ा कर पूरी तरह पर जोर लगाया तो उस हरिन ने अपनी गर्दन झुका दी और वे सींग आगे को बढ़ आये. अब मालती ने उन सींगों को दाहिने-बायें अर्थात् दो तरफ करने के लिये जोर लगाना शुरू किया. बहुत कोशिश के बाद वह भी हुआ अर्थात् उस हरिन के दोनों सींग दाहिने और बायें ओर को हट गये जिससे उसके सिर के बीचोबीच एक छोटी-सी दरार दिखाई पड़ने लगी. मालती ने उस छेद में वह ताली, जो लोहे वाले बुर्ज की जड़ में खोदने से मिली थी, डाल दी और घुमाया. तीन-चार बार घूम कर ताली रुक गई, साथ ही एक आवाज हुई और दाहिनी तरफ की दीवार में एक दरवाजा खुला हुआ दिखाई पड़ा जिसके अन्दर ऊपर चढ़ जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी नजर आ रही थीं. मालती ने अपनी चाभी हरिन के सिर से निकाल ली और उस दरवाजे की तरफ बढ़ी. उसके पास पहुँच अन्दर जाने के लिए पैर बढ़ाया मगर अभी एक पैर बाहर ही था कि यकायक चौंक कर रुक गई और जल्दी से पैर खींच लिया, यही नहीं बल्कि दो कदम पीछे हट गई और गौर तथा डर के साथ अन्दर की तरफ देखने लगी. देखा क्या कि दरवाजे के अन्दर की तरफ सामने ही एक साँप गुड़ेड़ी मारे और फन ऊँचा किये बैठा है जिसने मालती के आगे बढ़े हुए पैर पर अभी-अभी चोट की थी मगर मालती की तेज निगाहों और उसकी फुर्ती ने उसको बचा लिया था.

पहिले तो मालती को डर हुआ कि शायद वह साँप आगे बढ़ कर उस पर चोट करे मगर ऐसा न हुआ और पैर खींच लेने के बाद फिर उसने जुम्बिश न खाई. मालती गौर से देर तक उसकी तरफ देखती रही और तब उसे मालूम हुआ कि यह साँप असली नहीं बल्कि बनावटी है मगर इतना सफाई और कारीगरी से बना हुआ है कि अचानक देख कर उसके असली होने का ही गुमान होता है. उसी समय मालती को वह बात याद आ गई जो उसने तिलिस्मी किताब में पढ़ी थी अर्थात्—"खबरदार, जल्दी में यकायक सीढ़ियों पर पैर न रख देना और सम्हल कर होशियारी के साथ जाना. भीतर खतरा है." मालती कुछ गौर के साथ उस बनावटी साँप को देखती हुई सोचने लगी कि इस बला को कैसे दूर किया जाय.

आखिर कुछ देर के बाद मालती ने अपनी चादर उतारी और उसे लपेट कर

एक गठरी की तरह पर बनाया, एक सिरा अपने हाथ में रखा और बाकी उस साँप के सामने फेंका. गठरी देखते ही उस साँप ने फन मारा साथ ही मालती का हाथ उसके फन के ऊपर पड़ा और उसने जोर से उस साँप के सिर को जहाँ-का-तहाँ दबा रक्खा. उसने अपनी दुम उसकी बाँह के चारों तरफ लपेट ली और सिर उठाने के लिए जोर करने लगा मगर मालती ने उसे मौका न दिया और पकड़े-पकड़े ही दरवाजे के बाहर खींच लिया. ताज्जुब की बात थी कि बाहर होने के साथ ही उस साँप का जोर कम हो गया और कुछ ही पलों बाद वह बेजान की तरह जमीन पर गिर पड़ा. मालती ने अपनी चादर से अलग कर उसे उठाया और गौर से देखा, मालूम हुआ कि वह चमड़े या वैसे ही किसी चीज का बना हुआ है. उसके मुँह की तरफ खयाल दौड़ाया तो देखा कि कागज का एक टुकड़ा उसके अन्दर है. बाहर निकाला और पढ़ा, यह लिखा हुआ था—"इस सांप को भी अपने पास रख लो, आगे चल कर काम देगा. आगे रास्ता साफ है, बेखौफ ऊपर जाओ, मगर आखिरी सीढ़ी पर होशियारी से पैर रखना!"

मालती ने खुशी-खुशी उस साँप को उठा कर अपनी कमर के चारों तरफ लपेट लिया और तब ऊपर जाने के लिये तैयार हुई. सीढ़ियाँ उसके सामने मौजूद थीं. गौर की निगाहें चारों तरफ डालती वह धीरे-धीरे चढ़ने लगी.

पतली-पतली खूबसूरत और बहुत कम ऊँची लगभग चालीस सीढ़ियाँ मिलीं जो घूमती हुई ऊपर को चढ़ गई थीं. मालती उन पर चढ़ गई मगर जब आखिरी सीढ़ी के पास पहुँची तो उससे कुछ नीचे ही रुक गई और इस खयाल से चारों तरफ देखने लगी कि उस पुर्जे ने जिस खतरे की तरफ इशारा किया है वह कौन और कहाँ पर है.

सीढ़ियाँ खतम होने के बाद पाँच-छः हाथ लम्बी एक गली-सी पड़ती थी और उसके बाद एक खुला हुआ दरवाजा दिखाई पड़ रहा था. मालती ने देखा कि इस गली-सी दिखाई पड़ने वाली जगह के दोनों तरफ की दीवारों के साथ तरह-तरह की चीजें चिपकी हुई हैं. गौर किया तो मालूम हुआ कि ये कई हथियार हैं जो दीवार में नक्काशी के तौर पर बनाये हुए हैं. कहीं तलवार, कहीं खंजर, कहीं गंड़ासा, कहीं नीमचा इसी तरह कितने ही हथियार अथवा उनकी शक्लें दीवारों पर बनी हुई थीं जिनकी तरफ मालती देर तक गौर करती रही मगर फिर भी यह निश्चय न कर सकी कि ये सब असली हथियार हैं जो दीवार के साथ टंगे हुए हैं

या केवल उनकी शक्लें बनी हुई हैं.

देर तक गौर करने पर भी मालती इस विषय में कुछ निश्चय न कर सकी और न इसी बात का पता लगा सकी कि इन हथियारों के सिवाय और भी कोई खतरे की बात वहाँ मौजूद है कि नहीं. आखिर उसने उस साँप को अपनी कमर से खोला और उसकी दुम हाथ से पकड़ सिर की तरफ वाला भाग सामने की तरफ को फेंका. उसे कुछ-कुछ गुमान हुआ था कि ये हथियार अगर असली हैं अथवा कुछ नुकसान पहुँचाने के काबिल हैं तो जरूर इस साँप पर अपना जौहर दिखावेंगे मगर ऐसा कुछ भी न हुआ, लाचार मालती ने साँप पुनः अपनी तरफ खींच लिया और फिर गौर करने लगी कि क्या मामला है, ये हथियार कैसे हैं और यहाँ कौन-सा खतरा है जिसके बारे में उसे हिदायत की गई है. अचानक उसे उस पुर्जे के ये शब्द याद आये—"आखिरी सीढ़ी पर होशियारी से पैर रखना." अभी वह उस आखिरी सीढ़ी से दो-तीन डण्डा नीचे ही थी. यह समझ कर कि शायद वह आखिरी सीढ़ी ही कुछ करामाती हो उसने पहिले की तरह पुनः उस साँप का एक सिरा अपने हाथ में पकड़ा और दूसरे हिस्से को उस आखिरी सीढ़ी पर फेंका यह देखने के लिए कि अगर उस सीढ़ी पर पैर रखने से कुछ होता होगा तो इससे पता लग जायगा.

साँप का उस सीढ़ी पर गिरना था कि दीवार के साथ के हथियार गजब के तेज और फुर्तीले बन गये. उन सभों को पकड़ने वाली एक-एक कलाई दीवार के अन्दर से निकल पड़ी जिन्होंने भयानक रूप से उस साँप पर हमला किया. अगर मालती उस साँप को जल्दी से अपनी तरफ खींच न लेती अथवा उस सीढ़ी पर साँप के बदले कोई आदमी खड़ा होता तो इसमें शक नहीं कि उसके टुकड़े कट-कट कर गिर जाते.

अब मालती को उस खतरे का पता लग गया जो उसके सामने था और उसके तेज दिमाग ने उससे बचने की तर्कीब भी तुरन्त ही निकाल ली. उसे खयाल आ गया कि पहिली दफे जब उसने साँप को सीढ़ी पर न फेंक उसके पीछे की तरफ फेंका था तो कुछ भी न हुआ था. वह समझ गई कि यह आखिरी सीढ़ी ही सब आफतों की जड़ है और अगर इस पर बोझ न पड़े तो कुछ न होगा. इस बात की जाँच करने के लिए उसने पुनः सांप को सीढ़ी के पीछे वाली जगह पर फेंका मगर कुछ न हुआ और वे हथियार जो साँप के हटते ही अपने-अपने ठिकाने पहुँच गये थे उसी तरह दीवार के साथ चिपके रह गये. मालती के दिल का सन्देह दूर हो गया,

उसने अपना कदम आगे बढ़ाया और उस आखिरी सीढ़ी पर पर रक्खे बिना ही कूद कर उसे पार कर गई. उन हथियारों ने जुम्बिश न खाई और वह बेखौफ उनके पास पहुँच कर उन्हें गौर से देखने लगी.

तरह-तरह के हलके और भारी तथा खूबसूरत और डरावने हथियार वहाँ दीवार के साथ लगे हुए थे जिनकी संख्या बीस से कम न होगी. मालती उन्हें देखती हुई जब उस दरवाजे के पास पहुँची तो उसके ऊपर वाली दीवार पर कुछ लिखा हुआ देख कर रुक गई और पढ़ने लगी, यह लिखा था :—

"इन हथियारों में से जिसे चाहो उठा कर अपने पास रख लो. ये तिलिस्मी हैं और अद्भुत और नायाब चीजें हैं जिनका गुण आगे चल कर मालूम होगा. मगर यकायक इन पर हाथ लगाने से धोखा होगा. हर एक हथियार के ऊपर उसके जोड़ की एक अंगूठी चिपकी है, उसे पहिले उतार कर पहिर लो तब हथियार उठाओ."

मालती खुशी-खुशी उन हथियारों को पुनः इस निगाह से देखने लगी कि कौन-सा अपने लिए पसन्द करे. आखिर सभों की देख भाल के बाद एक छोटी भुजाली उसे पसन्द आई. यह हाथ-भर से कुछ कम ही लम्बी होगी मगर इसकी विशेषता यह थी कि इसका फल बाकी हथियारों की तरह लोहे का नहीं था बल्कि सुनहरे रंग का था और यही मालूम होता था मानो यह सोने की बनी हुई है, शायद इस बात में भी कोई विशेषता हो यह सोच मालती ने उस भुजाली के ऊपर लगी हुई सुनहरी अंगूठी उतार उँगली में पहिन ली और तब वह भुजाली उतार कमर से लगा ली. इसके बाद आगे की तरफ बढ़ी और दरवाजा पार कर बाहर एक बड़े दालान में पहुँची.

यह दालान जो बहुत लम्बा-चौड़ा था एकदम संगमर्मर का बना हुआ था. इस का सामने की तरफ वाला हिस्सा खुला था और बाकी तीन तरफ की दीवारों में कई दरवाजे दिखाई पड़ रहे थे. मालती ने उन दरवाजों को गिना और तब कुछ सोच-विचार कर दाहिनी तरफ के चौथे दरवाजे के पास पहुँची. दरवाजा बन्द था, हाथ से धक्का दिया मगर न खुला. मालती उसकी चौखट पर जो संगमूसा की बनी थी निगाह डालने लगी. एक जगह कुछ लिखा हुआ नजर आया, गौर के साथ उसे पढ़ा और तब उसका मतलब समझ उस जगह से दाहिनी तरफ की दीवार पर हाथ-भर जमीन नाप कर पैर से ठोकरें देना शुरू किया, आठ-दस ठोकरें खाने के बाद वहाँ से एक छोटा चौखूटा टुकड़ा हट कर एक बगल हो गया और ताली जाने

का सूराख नजर आया. अपने पास वाली तिलिस्मी चाभी को उस सूराख में डाल कर घुमाते ही एक हलकी आवाज के साथ वह दरवाजा खुल गया. मालती ने ताली सूराख से निकाल ली और दरवाजे के अन्दर घुसी.

यह एक लम्बी मगर चौड़ाई में बहुत ही कम कोठरी थी जो सीधी सामने की तरफ दूर तक चली गई थी. सामने के सिरे पर एक दरवाजा दिखाई पड़ रहा था मगर उसके सिवाय और कहीं कोई दरवाजा या खिड़की नजर नहीं आती थी. इस कोठरी के दाहिने और बाएँ दोनों तरफ वाली दीवारों पर आदमी की ऊँचाई के बराबर की तस्वीरें बनी हुई दूर तक चली गई थीं जिन पर जगह-जगह कुछ लिखा हुआ भी था. मालती ने इन तस्वीरों को गौर और ताज्जुब के साथ देखा क्योंकि इनमें से कई उसकी देखी-भाली चीजों और जगहों की थीं. वह एक तरफ की दीवार के पास चली गई और गौर से तस्वीरों को देखती और मजमून पढ़ती हुई धीरे-धीरे आगे को बढ़ने लगी.

पहली तस्वीर जिस पर उसकी निगाह पड़ी देखते ही वह पहिचान गई क्योंकि उसमें लोहगढ़ी की इमारत का बाहरी हिस्सा दिखाया गया था जिससे वह भली-भाँति परिचित थी. ऊपर की तरफ एक कोने में उसने लिखा भी पाया, "लोहगढ़ी— बाहरी हिस्सा". आगे बढ़ने पर उसके बगल ही में लोहगढ़ी के अन्दर वाली लोहे की उस सुन्दर इमारत की तस्वीर बनी दिखाई पड़ी जिसमें मालती बहुत दिनों तक रह चुकी थी. इसके ऊपर लिखा हुआ था "लोहगढ़ी—भीतरी बंगला." और आगे बढ़ी तो वह बाग और दालान दिखाई पड़ा जिसमें प्रभाकरसिंह और शैतान का मुकाबला हुआ था, और उससे भी आगे बढ़ने पर वह लोहे की ऊँची बारहदरी बनी दिखाई पड़ी जिसका 'घूमने वाली बारहदरी' के नाम से पाठक परिचय पा चुके हैं. इसी तरह उसके आगे वाला वह शीशे वाला कमरा और तब इस जगह की तस्वीर भी बनी हुई मिली जहाँ मालती इस समय मौजूद थी. पहिले एक बड़ी तस्वीर में बीच वाला यह मैदान और चारों तरफ की इमारतों का साधारण दृश्य दिखाया हुआ था और उसके बाद चारों तरफ की इमारतों की चार बड़ी-बड़ी तस्वीरें बनी हुई थीं. इस जगह पहुँच कर मालती आश्चर्य, प्रसन्नता और कौतूहल के साथ रुक गई क्योंकि यहीं एक कोने में उसे यह लिखा हुआ दिखाई पड़ा—"लोहगढ़ी के तिलिस्म का पहिला दर्जा—जिसे राजा प्रभाकरसिंह और रानी मालती तोड़ेंगे." ताज्जुब की बात थी कि इसी जगह नीचे की तरफ मालती

को एक जगह अपनी और प्रभाकरसिंह की तस्वीर दिखाई पड़ी जो इतनी ठीक और साफ बनी हुई थी कि यही मालूम होता था कि मालती और प्रभाकरसिंह सचमुच हाथ में हाथ मिलाये खड़े हैं. इन तस्वीरों के नीचे भी कुछ लिखा हुआ था मगर अक्षर इतने बारीक थे कि पढ़ा नहीं जाता था.

मालती ताज्जुब के साथ गौर करने लगी कि उसकी और प्रभाकरसिंह की तस्वीर यहाँ किस तरह बनाई गई ? तिलिस्म बनती समय तो इन दोनों में से किसी का नाम-निशान भी नहीं था, फिर इनकी तस्वीरें बनाने में ऐसी आश्चर्य-जनक सफलता कैसे मिली ? क्या तिलिस्म बनाने वाले पहिले से जानते थे कि जो लोग इस तिलिस्म को तोड़ेंगे उनकी सूरतें ऐसी होंगी ? मालती ज्योतिष विद्या के चमत्कार की बहुत-सी बातें सुन चुकी थी मगर यह गुमान किसी तरह भी नहीं हो सकता कि उस विद्या की मदद से भविष्य में उत्पन्न होने वाले व्यक्तियों की भी तस्वीरें उतारी जा सकती हैं. उसे गुमान हुआ कि बाद में शायद किसी मुसौवर ने यहाँ आकर ये तस्वीरें बनाई हों मगर इस ख्याल पर भी उसका दिल न जमा और वह सोचने लगी कि इस भयानक तिलिस्म के अन्दर जहाँ बनने के बाद से आज तक शायद एक चिड़िया भी पर न मार सकी होगी और जहाँ वह खुद भी बिना एक भाग तोड़े नहीं आ सकी कोई क्योंकर पहुँच सकता है. बहुत कुछ खयाल दौड़ाया पर सिवाय इसके और कोई बात न सूझी कि उस जमाने के ज्योतिषियों ने अपनी विद्या के बल से यह चमत्कार दिखाया है.

बहुत देर तक इन तस्वीरों को देखने और तरह-तरह की बातें सोचने के बाद मालती आगे बढ़ी और आगे की तस्वीरों को गौर के साथ देखने लगी क्योंकि उसे विश्वास हो गया था कि अब आगे जो कुछ आने वाला है उसका कुछ आभास ये तस्वीरें उसे दे देंगी, अत: वह खूब गौर से एक-एक तस्वीर को देखती, उसके पास-पास लिखे मजमूनों को पढ़ती, और उस पर गौर करती हुई जाने लगी.

इस काम में मालती ने बहुत देर लगा दी क्योंकि तस्वीरें उस सुरंग जैसे कमरे की पूरी लम्बाई में दोनों तरफ बनी हुई थीं और उनसे बहुत कुछ पता भी लगता था मगर हम यहाँ पर इसका वर्णन नहीं करते कि मालती ने क्या-क्या देखा. अगर आवश्यकता पड़ी तो किसी दूसरे मौके पर इसका हाल लिखेंगे.

तस्वीरों की देख-भाल कर चुकने के बाद मालती आगे की तरफ बढ़ी. इस लम्बी जगह के अगले सिरे पर भी एक दरवाजा था जिसको मालती ने उसी

तर्कीब से खोला. ऊपर की तरफ जाती हुई सीढ़ियाँ दिखाई पड़ीं. मालती को सन्देह हुआ कि पहिले की तरह शायद यहाँ पर भी किसी तरह का धोखा न हो परन्तु अच्छी तरह जाँच कर लेने पर भी जब किसी तरह का खतरा न पाया तो सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर की मंजिल में पहुँची. अब वह उस गोल कमरे के अन्दर थी जिसे उसने नीचे से देखा था.

इस गोल कमरे में जिसके चारों तरफ खिड़कियाँ बनी हुई थीं दीवार के साथ-साथ गोलाकार रक्खे हुए पचासों छोटे-बड़े सन्दूक मालती को दिखाई पड़े जिनमें से कुछ के ढकने खुले हुए थे तथा कुछ के बन्द. मालती एक खुले हुए सन्दूक की तरफ बढ़ी और देखना चाहा कि उसके अन्दर क्या है मगर अभी उससे पाँच-छः कदम अलग ही थी कि बड़े जोर की आवाज के साथ उस सन्दूक का ढकना बन्द हो गया और वह जमीन के अन्दर धँस गया. फिर भी मालती की तेज निगाहों ने देख ही लिया कि वह तरह-तरह के कीमती जड़ाऊ गहनों से ऊपर तक भरा हुआ था जिनकी कीमत का अन्दाजा नहीं किया जा सकता. वह पीछे हट कर एक दूसरे सन्दूक के पास गई तो उसे कीमती पोशाकों से भरा पाया मगर पास जाते ही वह भी पहिले सन्दूक की तरह जमीन में धंस गया.

इसी समय मालती की निगाह उस गोल कमरे की छत की तरफ गई जहाँ मोटे हरूफों में उसने यह लिखा हुआ पाया—

"इस तिलिस्म में कई जगह ऐसे कितने ही खजाने रक्खे हैं मगर बिना चारों दर्जे टूटे ये हाथ नहीं लग सकते. अगर तिलिस्म तोड़ने का काम समाप्त किये बिना ही तोड़ने वाला इन्हें हाथ लगाना चाहेगा तो उसे बहुत बड़ा नुकसान पहुँचेगा और कोई गैर यह काम करेगा तो उसका सिर कट कर गिर पड़ेगा."

यह पढ़ मालती ने इन सन्दूकों के भीतर की चीजों को देखने की ख्वाहिश छोड़ दी और आगे बढ़ कर उस सिंहासन पर जा बैठी जो इस कमरे के बीचोबीच में रक्खा हुआ था. इसके बैठते ही वह सिंहासन ऊँचा होने लगा और धीरे-धीरे उस कमरे की छत के साथ जा लगा. मालती ने अपने को उस गोल कमरे की छत पर पाया जहां वह उतर पड़ी और उसके उतरते ही वह सिंहासन नीचे लौट गया.

मालती ने अपने चारों तरफ गौर के साथ देखना शुरू किया. गोल छत को चारों तरफ से एक पुरसा ऊँची दीवारों ने घेरा हुआ था जिनमें कहीं कोई खिड़की या मोखा दिखाई न पड़ता था, हाँ बीचोबीच में एक छेद-सा जरूर था जो वास्तव

में वही जगह थी जहाँ नीचे की मंजिल से उठ कर उस सिंहासन ने मालती को पहुँचाया था. मालती ने इसकी राह झाँक कर नीचे का हाल देखना चाहा मगर कुछ नजर न पड़ा, शायद किसी चीज ने बीच में पड़ कर देखना नामुमकिन कर दिया था. मालती ने ऊपर की तरफ देखा तो एक बहुत बड़े मेहराब पर निगाह पड़ी जो दक्षिण तरफ कहीं से उठता हुआ उस गोल छत के बीचोबीच से हो उत्तर तरफ कहीं जा आँखों से लोप हो गया था. यह मेहराब जो देखने में लोहे का जान पड़ता था एकदम गोल चिकना बना हुआ था और उसकी मोटाई दो हाथ से किसी तरह कम न होगी. मालती ने जानना चाहा कि यह मेहराब किस जगह से उठता और कहाँ जाकर खत्म होता है मगर कुछ पता न लगा क्योंकि चारों तरफ वाली ऊँची दीवारें इस बात को प्रकट नहीं होने देती थीं.

मालती चारों तरफ निगाह दौड़ा रही थी कि उसके कान में पटाके की-सी आवाज पड़ी जिसने उसे चौंका दिया. वह ताज्जुब के साथ इधर-उधर देखने लगी. मगर उसी समय पुन: वैसी ही आवाज आने से समझ गई कि यह उस महराब के अन्दर से ही निकल रही है. इसी समय पुन: वैसी ही आवाज हुई और उसके साथ ही मालती ने देखा कि वह महराब बीचोबीच से दो टुकड़ा हो गयी और वे दोनों टुकड़े हाथी की सूँडों की तरह इधर-उधर झूमने लगे, केवल यही नहीं, मालती को यह देख कुछ भय भी मालूम हुआ कि धीरे-धीरे झूमते और हिलते हुए वे टुकड़े उसी की तरफ आगे बढ़े आ रहे थे. वह अपनी जगह से हट कर उस बड़ी छत के एक दूर के कोने में जा खड़ी हुई और महराब के उन दोनों टुकड़ों की तरफ देखने लगी, पर उसका डर और भी बढ़ गया जब उसने देखा उस महराब के दोनों टुकड़े नीचे झुकते हुए उसकी तरफ बढ़ रहे हैं, यहाँ तक कि उससे सिर्फ तीन-चार हाथ के फासले पर रह गये. वह डर कर दौड़ती हुई छत के दूसरे कोने पर जा खड़ी हुई, मगर उस महराब ने यहाँ भी उसका पीछा न छोड़ा. वे दोनों टुकड़ें और नीचे उतर कर छत से करीब दो-ढाई हाथ ऊँचाई पर आ गये और मालती की तरफ इस तरह बढ़े मानो किसी शैतान के हाथ हैं जो अपनी खूराक की खोज में बढ़ रहे हैं.

मालती का खौफ पल-पल में बढ़ता जा रहा था. कुछ देर तक तो इधर-उधर घूम कर उसने अपने को बचाया मगर अन्त में उनके फन्दे में पड़ ही गई. उन महराब रूपी दोनों बाँहों ने एक जगह उसे दोनों तरफ से घेर कर दबोच लिया.

उसके अन्दर से आती हुई गर्म-गर्म और जहरीली हवा का ऐसा झोंका मालती को लगा जिसने उसका सिर घुमा दिया और वह बदहवास भी हो गई. कुछ देर बाद उसे तनोबदन की सुध न रह गई. महराब के दोनों सिरों ने दो हाथों की तरह पकड़ कर उसे ऊपर उठा लिया और देखते ही देखते अपनी उसी खौफनाक ऊँचाई पर जा पहुँचे जहाँ दो टुकड़े होने के पहिले थे.

× × ×

जब मालती होश में आई उसने अपने को एक दूसरी ही जगह पर पाया. सूर्यदेव की तरफ गौर करके वह समझ सकती थी कि वह आधे घण्टे से ज्यादा देर तक बेहोश न रही क्योंकि इस समय भी वे अपनी पूरी तेजी से बीच आसमान में चमक रहे थे. उसके सिर में हलके-हलके चक्कर आ रहे थे मगर यह तकलीफ शीघ्र ही दूर हो गई और वह बहुत जल्द ही इस लायक हो गई कि अपनी हालत पर गौर कर सके. वह उठकर बैठ गई और तब थोड़े ही गौर ने उसे बता दिया कि वह उस ऊँचे काले पत्थर के बुर्ज पर है जिसे उसने इस जगह आने के पहिले देखा था. उसने चारों तरफ निगाह दौड़ाई और तब देखा कि वह गोल छत जिस पर विचित्र महराब ने उसे गिरफ्तार किया था उसके सामने की तरफ दिखाई पड़ रही थी और वह महराब भी अब साफ-साफ दिखाई पड़ रहा था जो बाईं तरफ की किसी इमारत के बीच में से उठता और उस गोल कमरे के ठीक ऊपर से गुजरता हुआ दाहिनी तरफ जाकर लोप हो गया था. मालती ने बहुत गौर किया कि उस महराब ने जब उसे पकड़ा तो उसके बाद क्या हुआ या वह इस ऊँचे बुर्ज पर कैसे आ पहुँची मगर कुछ समझ में न आया. लाचार वह उठ खड़ी हुई और आगे की कार्रवाई के खयाल में पड़ी क्योंकि तिलिस्मी किताब ने उसे बता दिया था कि यह गोल बुर्ज ही तिलिस्म के इस हिस्से का केन्द्र है और यहाँ का तिलिस्म तोड़ने के बाद ही वह आगे जा सकती है. यह काम किस तरह होगा यह भी तिलिस्मी किताब तथा प्रभाकरसिंह की मदद से वह बखूबी समझ गई थी.

इस बुर्ज की गोल गुम्मजदार छत के साथ लटकी हुई एक मोटी लोहे की जंजीर की तरफ मालती बढ़ी ही थी कि यकायक उसके कान में किसी की आवाज पड़ी जिसने उसे चौंका दिया. उसे प्रभाकरसिंह का गुमान हुआ और यह सोच कर कि शायद वे ही कहीं पर बोल रहे हैं वह उस जंजीर की तरफ न जा उस बुर्ज के

चारों तरफ इस ख्याल से घूमने लगी कि शायद कहीं से प्रभाकरसिंह पर उसी की निगाह पड़ जाय.

अचानक उसे पश्चिम और दक्खिन के कोने में बने एक बाग में तीन आदमी दिखाई पड़े जिनमें एक मर्द और दो औरतें थीं. वह इन्हें देख एकदम चौंक पड़ी. इस भयानक तिलिस्म में जहाँ किसी का आना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है ये लोग कहाँ से आ पहुँचे यह सोचती हुई वह ताज्जुब के साथ एकटक इन लोगों की तरफ देखने लगी मगर बुर्ज की ऊँचाई और वह लम्बा फासला जो उसके और उन आदमियों के बीच में था उन लोगों की शक्ल साफ-साफ देखने न देता था. देर तक वह गौर करती रही मगर कुछ समझ न सकी कि ये लोग कौन हैं.

लेकिन हमारे पाठक बखूबी जानते हैं कि ये तीनों आदमी कौन हैं जिन पर मालती की निगाह पड़ी. ये दयाराम, जमना और सरस्वती थे और जिस तरह मालती ने इन्हें देखा उसी तरह इन तीनों ने भी उसे देख लिया था और ताज्जुब के साथ सोच रहे थे कि यह कौन औरत है[1] क्योंकि जब से ये लोग इस तिलिस्म में फँसे तब से आज तक किसी गैर की सूरत इन्हें दिखाई न पड़ी थी.

मालती शायद दयाराम, जमना-सरस्वती से कुछ कहती या बातें करती मगर इसी समय उसे अपने पीछे की तरफ से आवाज सुनाई पड़ी जिसने उसे चौंका दिया. वह घूमी और इसी समय उसकी निगाह नीचे के सहन पर पड़ी जहाँ उस भयानक पिशाच की मूरत देखती हुई वह आई थी. उसने इस समय उस पिशाच के पास ही एक और आदमी को भी खड़े देखा जिसे वह पहिली ही निगाह में पहिचान गई कि प्रभाकरसिंह हैं. वह खुशी-खुशी उनकी तरफ घूमी मगर यकायक उसके मुँह से डर और खौफ की एक चीख निकल गई क्योंकि उसने देखा कि प्रभाकरसिंह स्वतंत्र नहीं हैं बल्कि बहुत खतरे में हैं. वह भयानक शैतान अपने बड़े-बड़े दाँतों वाले भीषण जबड़ों को खोलकर उनके सिर को चबाया ही चाहता है. मालती के मुँह से एक चीख निकल गई और वह सकते की-सी हालत में खड़ी एकटक उस तरफ देखती रह गई.

प्रभाकरसिंह की अवस्था देखने में मालती इतनी व्यग्र हो गई कि अपनी सब सुध-बुध ही भूल गई. यही सबब था कि उसे कुछ भी पता न लगा जब हलकी

---

1. देखिये भूतनाथ चौदहवाँ भाग, नौवाँ बयान.

आवाज के साथ उस बुर्ज के फर्श का एक पत्थर नीचे को झूल गया और अन्दर से दो तिलिस्मी शैतान बाहर निकल कर मालती की तरफ बढ़ने लगे की बात में ये दोनों मालती के पास पहुँच गये और तब झपट कर उसे दोनो से कस कर पकड़ लिया.

अचानक इस नई मुसीबत को देख मालती के मुँह से पुनः डर की एक निकल गई. उसने इन बेदर्द शैतानों से बचने के लिए बहुत कुछ उद्योग मगर कुछ न कर सकी और उसे पकड़े हुए वे दोनों उसी गड्ढे के भीतर घु जहाँ से निकले थे. उनके जाने के बाद वह पत्थर भी पुनः ज्यों-का-त्यों अपनी पर बैठ गया.

।। पन्द्रहवाँ भाग समाप्त ।।

